

क्र. ८६२२

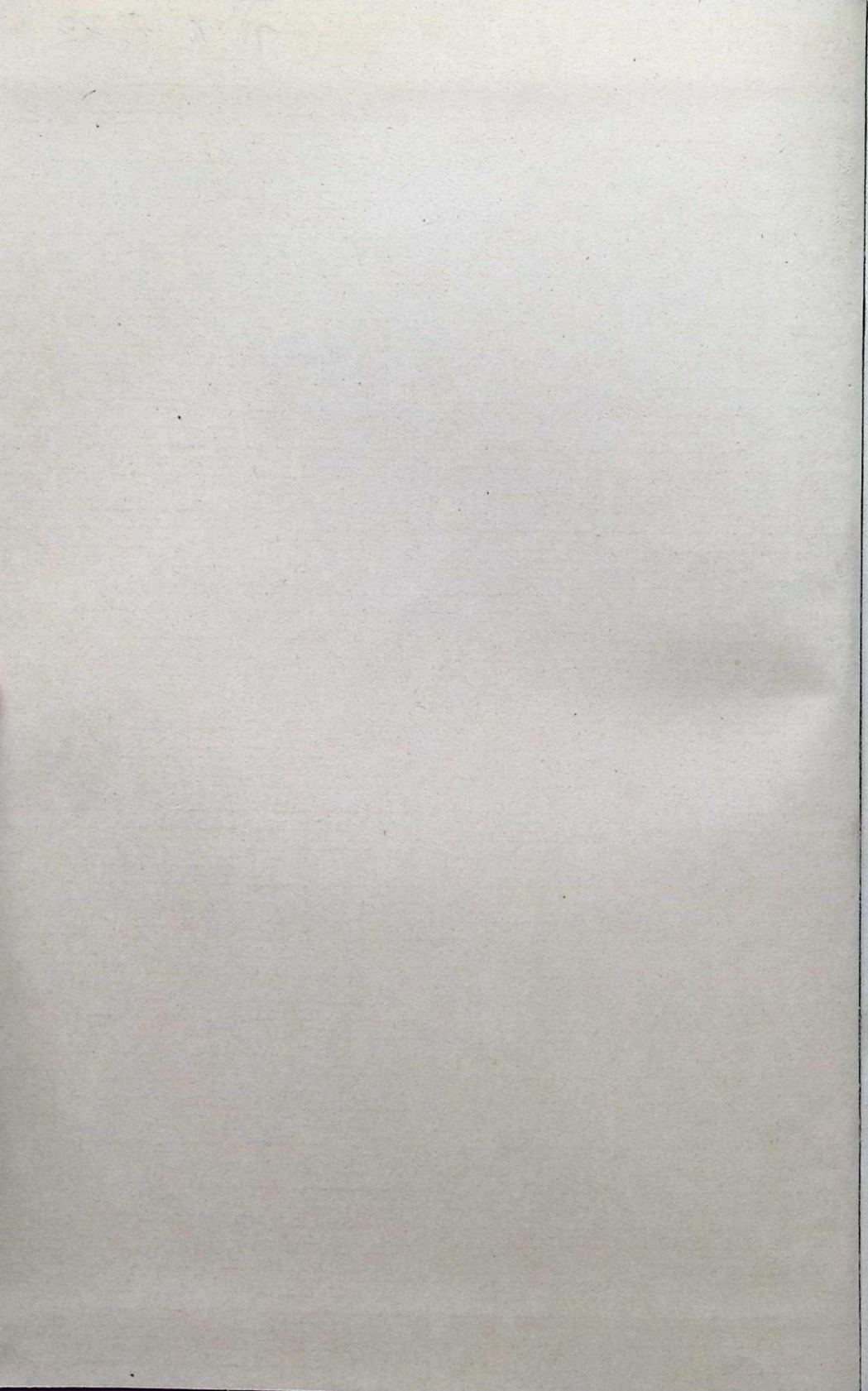
सिद्धार्थ

सद्धम्मसङ्गहो

मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद

(बौद्ध धर्म का १३वीं शताब्दी तक का संक्षिप्त इतिहास)

वै. द. द. २२



सद्धम्मसङ्गहो



Acc. 30526
30827

सद्धम्मसङ्गहो

मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद
(बौद्ध धर्म का १३वीं शताब्दी तक का संक्षिप्त इतिहास)



संपादक एवं अनुवादक

सिद्धार्थ

मोतीलाल बनारसीदास

दिल्ली • मुम्बई • चेन्नई • कोलकाता
बंगलौर • वाराणसी • पुणे • पटना

प्रथम संस्करण : दिल्ली २००६

© सिद्धार्थ सिंह

ISBN: 81-208-3003-2.

मोतीलाल बनारसीदास

- ४१ यू०ए० बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७
८ महालक्ष्मी चैम्बर, २२ भुलाभाई देसाई रोड, मुम्बई ४०० ०२६
२३६ नाईथ मेन III ब्लाक, जयनगर, बंगलौर ५६० ०११
सनाज प्लाजा, १३०२ बाजीराव रोड, पुणे ४११ ००२
२०३ रायपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, चेन्नई ६०० ००४
८ केमेक स्ट्रीट, कोलकाता ७०० ०१७.
अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४
चौक, वाराणसी २२१ ००१

नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, दिल्ली ११० ००७
द्वारा प्रकाशित तथा जैनैन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनैन्द्र प्रेस,
ए-४५ नारायणा, फेज-१, नई दिल्ली ११० ०२८ द्वारा मुद्रित

मातुया चरणकमलेसु समर्पितं

प्रथम संस्करण : दिल्ली २००६

© सिद्धार्थ सिंह

ISBN: 81-208-3003-2

मोतीलाल बनारसीदास

४१ यू०ए० बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली ११० ००७

८ महालक्ष्मी चैम्बर, २२ भुलाभाई देसाई रोड, मुम्बई ४०० ०२६

२३६ नाईथ मेन III ब्लाक, जयनगर, बंगलौर ५६० ०११

सनाज प्लाजा, १३०२ बाजीराव रोड, पुणे ४११ ००२

२०३ रायपेट्टा हाई रोड, मैलापुर, चेन्नई ६०० ००४

८ केमेक स्ट्रीट, कोलकाता ७०० ०१७

अशोक राजपथ, पटना ८०० ००४

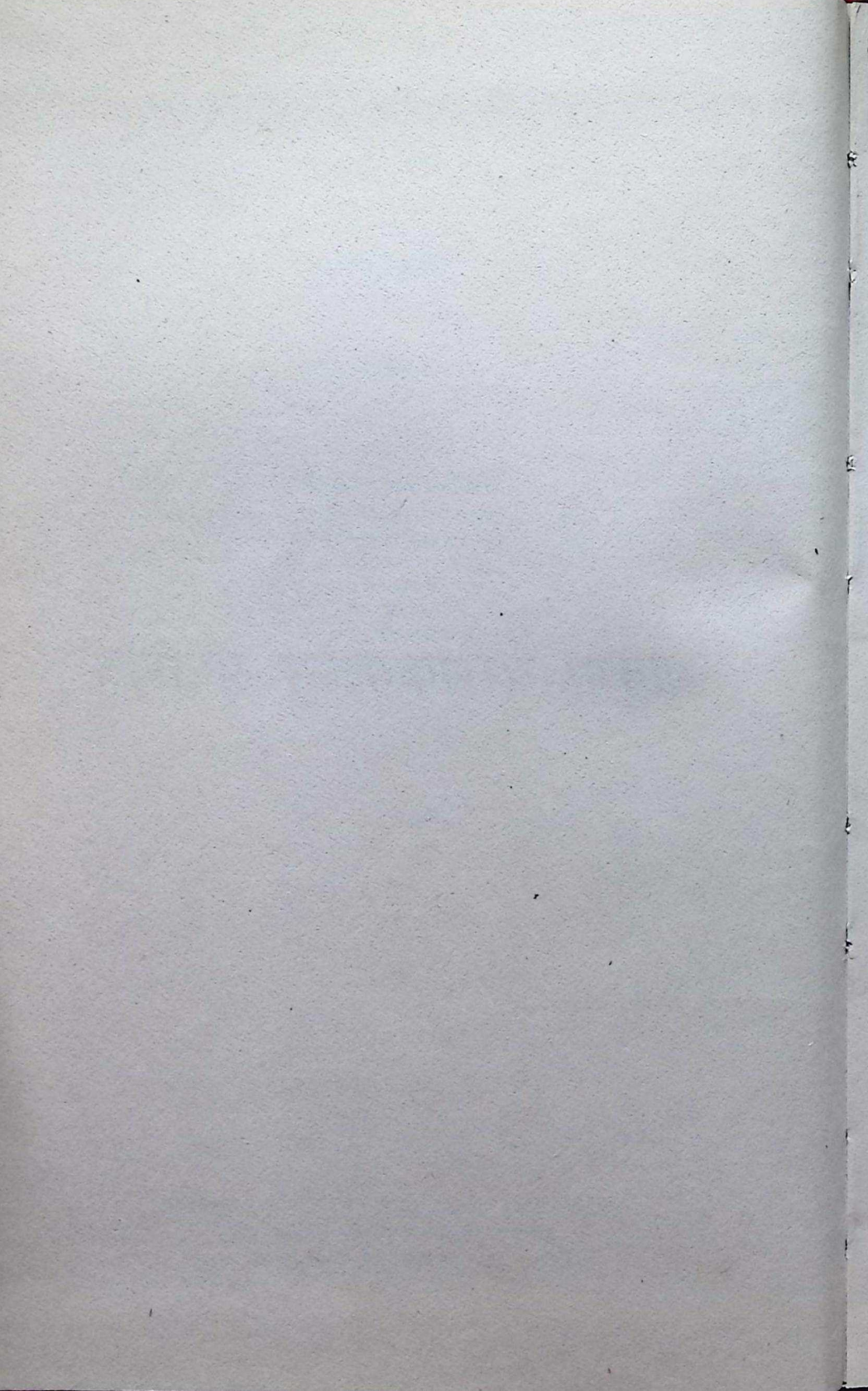
चौक, वाराणसी २२१ ००१

नरेन्द्रप्रकाश जैन, मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, दिल्ली ११० ००७

द्वारा प्रकाशित तथा जैनेन्द्रप्रकाश जैन, श्री जैनेन्द्र प्रेस,

ए-४५ नारायणा, फेज-१, नई दिल्ली ११० ०२८ द्वारा मुद्रित

मातुया चरणकमलेसु समर्पितं



विषय—सूची

प्राक्कथन	ix — xiii
ग्रन्थ—परिचय	xv — xxxii
पालि वर्णमाला	xxxiii
पठमो परिच्छेदो	2 — 19
पठमसंगीतिवण्णना (प्रथम संगीति का वर्णन)	
द्वितीयो परिच्छेदो	20 — 23
द्वितीयसंगीतिवण्णना (द्वितीय संगीति का वर्णन)	
तृतीयो परिच्छेदो	24 — 27
तृतीयसंगीतिवण्णना (तृतीय संगीति का वर्णन)	
चतुर्थो परिच्छेदो	28 — 39
चेतियपम्बतविहारपटिग्गहणवण्णना	
(चेतियपम्बतविहार के ग्रहण का वर्णन)	
पञ्चमो परिच्छेदो	40 — 45
चतुर्थसंगीतिवण्णना (चतुर्थ संगीति का वर्णन)	
छट्ठो परिच्छेदो	46 — 53
पिटकत्तयलेखनवण्णना (तीन पिटकों के लेखन का वर्णन)	
सत्तमो परिच्छेदो	54 — 67
तेपिटकट्ठकथापरिवत्तनवण्णना	
(तिपिटक की अट्ठकथा के परिवर्तन का वर्णन)	
अट्ठमो परिच्छेदो	68 — 75
पिटकत्तयटीकावण्णना (तीन पिटकों की टीका का वर्णन)	
नवमो परिच्छेदो	76 — 81
सम्बन्धकरणकतथेरवण्णना (थेरो द्वारा राचत सभी पुस्तकों का वर्णन)	

दसमो परिच्छेदो	82 — 87
पिटकत्तयलेखनानिसंसवण्णना	
(तीन पिटकों के लेखन के माहात्म्य का वर्णन)	
एकादसमो परिच्छेदो	88 — 127
धम्मसवनानिसंसवण्णना (धम्म—श्रवण के माहात्म्य का वर्णन)	
लेखकपरिचयो	128 — 129
बोधिनी	131 — 149
शब्दानुक्रमणी	151 — 157

प्राक्कथन

‘सद्धम्मसङ्गहो’ ग्रन्थ का अब तक का किया गया यह प्रथम हिन्दी अनुवाद है। ‘सद्धम्मसङ्गहो’ के मूल पालि का रोमन संस्करण पालि टेक्स्ट सोसायटी, लंदन के सन् 1890—96 के जर्नल में प्रकाशित हुआ था, जिसका संपादन नेदिमाले सद्धानन्द नामक श्रीलंका के विद्वान् ने किया था। देवनागरी संस्करण का संपादन विद्वान् श्री महेश तिवारी द्वारा किया गया। यह संस्करण सन् 1961 में नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा द्वारा प्रकाशित किया गया। बड़ी संख्या में पालि भाषा के ग्रन्थ अननुवादित पड़े हमारी मातृभाषा हिन्दी में अनुवाद की प्रतीक्षा कर रहे हैं। महापंडित राहुल सांकृत्यायन, भिक्षु जगदीश काश्यप, भदन्त आनन्द कौशल्यायन, भिक्षु धर्मरक्षित आदि कुछ ही महान विभूतियों के अनुवाद हिन्दी भाषा में बौद्ध साहित्य एवं दर्शन को जानने का आधार बने, किन्तु उनके पश्चात् हिन्दी में अनुवाद की प्रक्रिया विशेष जोर न पकड़ सकी। मैंने उस परम्परा को पुनर्जीवित करने के एक छोटे प्रयास के रूप में ‘सद्धम्मसङ्गहो’ ग्रन्थ का चयन किया है। प्रयास कितना सफल हुआ, यह पाठक निश्चित करेंगे।

प्रारम्भिक तौर पर मैंने ‘सद्धम्मसङ्गहो’ ग्रन्थ के सिर्फ हिन्दी अनुवाद का ध्येय रखा था एवं इसके आधार ग्रन्थ के रूप में पालि टेक्स्ट सोसायटी के रोमन संस्करण तथा नव नालन्दा महाविहार के देवनागरी संस्करण को रखा। अध्ययन क्रम में मैंने देवनागरी संस्करण में अनेक अशुद्धियाँ देखीं। कई स्थानों पर तो प्रथम दृष्ट्या व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियाँ दिखीं तो अन्य कई स्थानों पर या तो पंक्तियाँ अधूरी—सी लगीं या फिर शब्द अनुपस्थित लगे। रोमन संस्करण से तुलना करने पर तथा बी.सी. लॉ द्वारा किये गये अंग्रेजी अनुवाद ‘ए मैनुअल ऑफ बुद्धिस्ट हिस्टारिकल ट्रेडिशनस’ से मिलान करने पर यह बात और भी पुष्ट हो गई। यद्यपि रोमन संस्करण में भी, व्याकरण सम्बन्धी अनेक अशुद्धियाँ दृष्टिगोचर हुईं, किन्तु देवनागरी संस्करण में अनुपस्थित अनेक शब्द एवं पंक्तियाँ उसी में प्राप्त हुईं। देवनागरी संस्करण की इन अशुद्धियों को देखते हुए मुझे लगा कि अनुवाद के साथ—साथ ही यदि ग्रन्थ का परिष्कृत पालि रूप नहीं दिया जायेगा तो पूर्व संस्करण के आधार पर अनुवाद देखने वालों को न केवल असुविधा

उत्पन्न होगी, अपितु वे मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद के बीच भी असंगति का अनुभव करेंगे। नालन्दा द्वारा प्रकाशित संस्करण की अशुद्धियाँ तथा उनका शुद्ध रूप नीचे द्रष्टव्य है —

सद्धम्मसङ्गहो के नालन्दा संस्करण में अशुद्धियाँ

पृ. एवं पंक्ति सं.	अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
1, 6	बुद्धत्थानं	बुद्धत्थं
3, 26	सिक्खापदनि	सिक्खापदानि
6, 11	कोसरक्खं	कोसारक्खं
7, 9	पटिपदादिवसे	पाटिपददिवसे
7, 10	उदानगाथा ति इदं	उदानगाथा ति वेदितब्बा ति इदं
	पठमबुद्धवचनं	पठमबुद्धवचनं
7, 19	चूलवग्गो	चुल्लवग्गो
9, 7	सकपज्ह	सक्कपज्ह
12, 21	पभुतायो	पभुतयो
13, 1	अट्ठवीसतिमे	अट्ठवीसतिमे
14, 11	संगायिसुं	संगायिंसु
16, 26	तस्मिं च दिवसे	तस्मिं च पन दिवसे
24, 4	ततियसङ्गहतो	ततियसङ्गहतो
25, 18	द्वीसु	तीसु
26, 10	मुखपाठो	मुखपाठतो
32, 18	मागधिया	मागधाय
35, 23	छपज्जासतिकन्तेसु	छपज्जासतिक्कन्तेसु
39; 5, 10	परमत्थपकासनी	परमत्थपकासिनी
39, 28	जम्बुपणिग्गम्हि	तम्बपणिग्गम्हि
40, 16	सारत्थमज्जुसा	सारत्थमज्जूसा
42, 14	कारको	कारका
42, 15	मोगल्लानेन	बुद्धप्पियेन
46, 18	समुपेति	समुपेन्ति
46, 22	अहिंसनायिका	अहिंसनीयका

पृ. एवं पंक्ति सं. अशुद्ध रूप

47, 7	यसापिना
47, 16	ओतरता
48, 11	पिप्फलिकं
49, 13	सद्धमो
49, 14	सिवीधरो
50, 3	विस्सट्ठाय
50, 8	आविङ्गनरज्जुं
50, 18	नप्पतिभाति
51, 8	धम्ममुत्तरं
51, 10	सक्कुनेय्यासि
52, 7	पुप्फेसु भिज्जमानेसु
54, 1	सक्करादीनं
54, 20	बुद्धिपज्जो
57, 3	पस्सेय
60; 3, 4	सरे निमित्तं अगगहेसि। सो तावेदेव
60, 18	सद्धमो
61, 6	अज्जतरसविप्पयोगं
61, 10	संघुट्टे
61, 18	अनुभवित्वा
62, 13	अनुमोदन्ति
62, 15	वग्गुलि
62, 18	मिगसावकादयो
63, 22	थेरकनिट्ठका
65, 10	सामणेरं भूमियं
65; 18, 19	आभुजित्वा। बुद्धारम्मणे चित्तं
66, 4	अनुभवित्वा

शुद्ध रूप

यसादिना
ओतरका
पिप्फलकं
सद्धम्मो
सिखिधरो
विसिट्ठाय
आविज्जनरज्जुं
नप्पटिभाति
धम्ममुत्तमं
सक्कुण्येय्यासि
पुप्फेसु भाजियमानेसु
सक्करादिनं
बुद्धिपज्जो
पस्सेय्य
सरे निमित्तं अगगहेसि। तं वच्छपालको दण्डं ओलुब्भ तिट्ठन्तो तस्स सीसे सन्निरुम्भित्वा अट्ठसि। सो तावेदेव
सद्धम्मो
अज्जत्रसविप्पयोगं
संघुट्ठे
अनुभवित्वा
अनुभोन्ति
वग्गुलि
मिगसूकरादयो
थेरकनिट्ठका
सामणेरं—भूमियं
आभुजित्वा बुद्धारम्मणे। चित्तं
अनुभवित्वा

पृ. एवं पङ्क्ति सं.	अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
66, 9	महीरूहपादपपत्तपानं	महीरूहपादपपत्तपाणानं
66, 17	अहं ताव	अहं तव
66, 22	वातानुगतं	वादानुगतं
67, 2	परिनत	परिणत
67, 13	सतमत्तेहि	सतमत्तेति
68, 19	बुद्धिप्पत्तस्स	बुद्धिप्पत्तस्स
68, 20	महिस—दासादि	महिस—दासी—दासादि
70, 13	धम्मकित्योरूसा मिना	धम्मकित्योरूसा मिना

इन अशुद्धियों के अतिरिक्त नालंदा संस्करण के 6, 7, 8 एवं 9वें अध्यायों में अन्तिम गाथा का क्रमांक न दिया जाना भी उनमें गाथाओं की कुल संख्या को लेकर भ्रम की स्थिति उत्पन्न कर रहा था। इन स्थितियों को देखते हुए मैंने हिन्दी अनुवाद के साथ ग्रन्थ का शुद्ध पालि रूप भी देने का निश्चय किया।

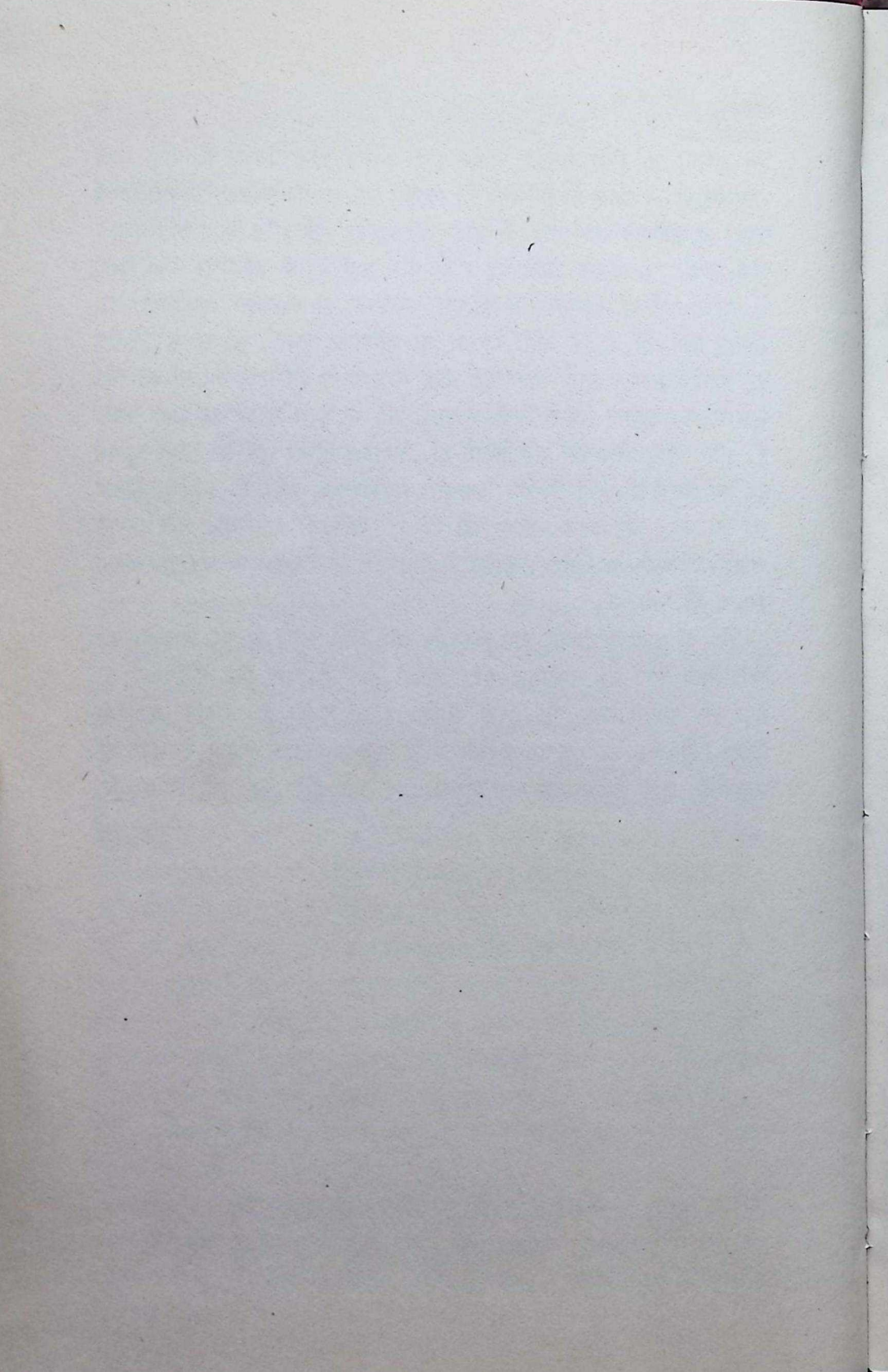
अनुवाद की शुद्धता बनाये रखने हेतु मैंने यथासंभव हिन्दी अनुवाद के शब्दों का क्रम 'सद्धम्मसङ्गहो' में विद्यमान पालि शब्दों के अनुसार ही रखने का प्रयास किया है, जिससे पाठक अनुवाद के आधार पर यदि किसी हिन्दी शब्द के लिए प्रयुक्त होने वाले पालि शब्द को जानना चाहें तो उन्हें असुविधा न हो। हालांकि कुछ स्थानों पर वाक्य को अर्थहीनता से बचाने तथा समझने योग्य बनाने के लिए यह प्रयास भंग भी हुआ है। मैंने संज्ञा एवं पारिभाषिक पदों का हिन्दी में अनुवाद करने की अपेक्षा उनका पालि रूप ही यथावत् छोड़ देना श्रेयस्कर समझा है, जैसे धम्म, बुद्धघोस आदि; जिससे केवल हिन्दी अनुवाद पर निर्भर करने वाला पाठक भी कम-से-कम प्रसिद्ध पदों या संज्ञाओं के लिए प्रयुक्त होने वाले पालि शब्दों से अवगत हो सके। अस्पष्ट शब्दों को पादटिप्पणी के माध्यम से तथा पारिभाषिक पदों को ग्रन्थ के अन्त में 'बोधिनी' के अन्तर्गत विस्तार से स्पष्ट किया गया है। ग्रन्थ-परिचय के अन्तर्गत समस्त अध्यायों की विषयवस्तु को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है।

सर्वप्रथम विद्वान् स्वर्गीय डॉ. महेश तिवारी के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ, जिनके द्वारा संपादित 'सद्धम्मसङ्गहो' ग्रन्थ को आधार बनाकर मैंने हिन्दी अनुवाद की योजना बनायी। पालि साहित्य के संरक्षण

एवं उन्नति के लिए उनका आग्रह एवं उत्साह बौद्ध विद्या से जुड़े सभी शोधकर्ताओं के लिए प्रेरणा स्रोत है। स्वर्गीय डॉ. लक्ष्मी नारायण तिवारी प्रथम विद्वान् थे, जिन्होंने पालि ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद हेतु मुझे प्रेरित किया और पुत्रवत् स्नेह दिया। दुर्भाग्यवश आज वह हमारे बीच नहीं हैं। मैं जीवनभर उनके ऋण से उद्धार नहीं हो सकता। डॉ. सी.एस. उपासक, डॉ. एन.एच. साम्ताणी, डॉ. संघसेन सिंह, डॉ. दीपक कुमार बरूआ, डॉ. हरिशंकर शुक्ल, डॉ. प्रद्युम्न दूबे एवं डॉ. ब्रह्मदेवनारायण शर्मा—पालि एवं बौद्ध साहित्य के इन सभी विद्वानों का स्नेह सदा से मेरा सम्बल रहा है, अतः मैं इनके प्रति भी हृदय से आभार प्रकट करता हूँ। अपने युवा विभागीय सहयोगियों डॉ. विमलेन्द्र कुमार एवं डॉ. प्रीति कुमारी दूबे का भी मैं कृतज्ञ हूँ, जिनका आत्मीय सहकार मुझे सदैव ही अभिभूत करता रहा है। कहने की आवश्यकता नहीं कि माँ—पिता के आशीर्वाद तथा अपनी अर्द्धांगिनी वन्दना के अपार सहयोग के बिना मेरे लिए इस कार्य को पूर्ण करना सम्भव ही नहीं था।

कोई भी कार्य सर्वांगपूर्ण नहीं होता है। उसमें अन्य लोगों के द्वारा परिष्कार एवं वृद्धि किये जाने की सम्भावना सदैव निहित रहती है। यदि ऐसा नहीं होता तो ज्ञान की परंपरा आज तक इतनी समृद्ध न हुई होती। ज्ञान—प्रवाह का यही सिद्धान्त है। मेरा कार्य तमाम प्रयासों के बावजूद भी तमाम त्रुटियों से युक्त हो सकता है। सुधी पाठक ऐसी गलतियों को क्षमा करेंगे, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

—सिद्धार्थ



ग्रन्थ—परिचय

‘सद्धम्मसङ्गहो’ चौदहवीं शताब्दी में गद्य—पद्य मिश्रित शैली में रचित पालि ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ बुद्ध के महापरिनिर्वाण से प्रारम्भ कर लगभग तेरहवीं शताब्दी तक के पालि साहित्य एवं बौद्ध धर्म का संक्षिप्त क्रमिक इतिहास प्रस्तुत करता है, जिसके अन्तर्गत भारत में तृतीय बौद्ध संगीति तक होने वाले बौद्ध धर्म के महत्वपूर्ण घटनाक्रम एवं तत्पश्चात् श्रीलंका में बौद्ध धर्म के विकास और शास्त्र—रचना का वृत्तान्त समाहित है। इस वर्णन—क्रम में ग्रन्थ भारत के अन्य पड़ोसी देशों में भी बौद्ध धर्म के प्रचार की सूचना देता है। ‘सद्धम्मसङ्गहो’ अनूठे रूप से सारी सूचनाओं को सुगठित एवं क्रमबद्ध रूप में पहले गद्य रूप में प्रस्तुत करता है, तत्पश्चात् वही बातें उसमें गाथा रूप में दर्शायी गई है। प्रायः पालि ग्रन्थों, विशेषतः इतिहास सम्बन्धी ग्रन्थों में गाथाएँ या तो पूर्व वर्णित गद्यांश का निष्कर्ष प्रस्तुत करती हैं या उसे आगे बढ़ाती हैं और या फिर आगे वर्णित गद्यांश के लिए आधार प्रदान करती हैं, किन्तु गद्यांश की सामग्री को यथावत गाथा रूप में दोहराती नहीं है। ‘सद्धम्मसङ्गहो’ की प्रस्तुति की विधि देखकर लगता है कि लेखक ने संभवतः इस ग्रन्थ का प्रणयन आम जनता में बौद्ध धर्म का इतिहास प्रचारित करने के लिए किया होगा। ग्रन्थ अंतिम दो अध्यायों में जिस प्रकार बुद्ध वचनों के लेखन एवं श्रवण का माहात्म्य दर्शाते हुए समाप्त होता है, वह भी इसी तरह संकेत करता है कि ग्रन्थ की सामग्री को लोगों की जबान पर सहजता से चढ़ाने के लिए इतिहास को पहले गद्य रूप में सुनाने के पश्चात् उसी सामग्री का गाथा रूप में भी गायन किया जाता रहा होगा और अन्त में बुद्ध वचनों के लेखन एवं श्रवण का गुणगान करते हुए उन्हें धर्म—कार्य हेतु प्रेरित किया जाता होगा। ग्रन्थ के अन्त में दिये गये लेखक—परिचय से स्पष्ट है कि लेखक लंका में ज्ञानार्जन हेतु गया था, इसके उपरान्त स्वदेश लौट कर उसने इस ग्रन्थ की रचना की। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक की मंशा बौद्ध धर्म के श्रद्धेय स्थल लंका में प्राप्त अपने अनुभवों को स्वदेशवासियों के बीच पहुँचाना एवं उन्हें धर्मोन्मुख करना था, इसलिए गद्यांश की पूरी सामग्री को उसने गाथाओं की माला में पिरो दिया। लेखक ने विषयवस्तु को अन्य इतिहास प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थों

की तुलना में अत्यन्त संक्षेप में रखा है। वह सामग्री अधिकांशतः पूर्वकालीन पालि पिठकों, अट्ठकथाओं, महावंस, दीपवंस आदि ग्रंथों पर न केवल आधारित है, बल्कि कई स्थानों पर तो उनके उद्धरणों को यथावत या थोड़े ही बदले रूप में प्रस्तुत किया गया है; जिससे लगता है कि लेखक का सर्वप्रमुख उद्देश्य नयी ऐतिहासिक सूचनाओं का उद्घाटन करना नहीं, बल्कि विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में ही बिखरे तथ्यों को एकत्रित कर उनका संक्षिप्त, सुव्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप देना रहा है, हालांकि इस सीमित एवं निश्छल ध्येय के बावजूद वह बहुत-सी ऐसी सामग्री उपलब्ध करा देता है, जो नई एवं प्रासंगिक है।

‘सद्धम्मसङ्गहो’ में वर्तमान में पालि भाषा के नाम से प्रचलित एवं व्यवहृत भाषा के लिए अट्ठकथाओं एवं वंस ग्रंथों की भांति ‘मगध वालों की बोली’ अर्थात् ‘मागधी’ शब्द का प्रयोग किया गया है। रेवत थेर बुद्धघोष को निर्देश देते हैं—“सीहलट्ठकथा पन सङ्गीतित्तयमारूळ्हा सारिपुत्तादीहि कतं महिन्देन कथामगं ओलोकेत्वा सीहलभासाय कता सीहलदीपे पवत्तति। त्वं पि तत्थ गत्त्वा सब्बं उपपरिक्खत्वा मागधाय निरुत्तिया परिवत्तेहि।”¹

अर्थात्—तीन संगीतियों में सारिपुत्त आदि द्वारा कृत तथा महिन्द द्वारा सविवरण अवलोकित (मागधी अट्ठकथाएँ अब) सिंहली भाषा में तैयार हो सिंहली अट्ठकथाओं के रूप में सिंहल द्वीप में विद्यमान है। तुम वहाँ जाकर उन सबका परीक्षण करके (उन्हें) मगध वालों की बोली (मागधी) में परिवर्तित करो।

बुद्धघोष के सिंहल में पहुँचने के पश्चात् का विवरण है—“आयस्मा बुद्धघोसो सब्बे पोत्थके गहेत्वा महाविहारस्स दक्खिणभागे पधानघरं नाम एकस्मिं पासादे वसन्तो पिटकत्तयस्स अट्ठकथं कुरूपमानो सब्बं सीहलट्ठकथं मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया परिवत्तेसि।”²

अर्थात्—सभी पुस्तकों को लेकर, महाविहार के दक्षिण भाग में पधानघर नामक एक प्रासाद में रहते हुए, तीन पिठकों की अट्ठकथा तैयार करने की इच्छा से, आयुष्मान बुद्धघोष ने सभी सिंहली अट्ठकथाओं को मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में परिवर्तित किया।

‘सद्धम्मसङ्गहो’ में प्राप्त उपर्युक्त उद्धरणों एवं ऐसे कई अन्य उद्धरणों से स्पष्ट है कि तिपिटक, अट्ठकथाओं आदि की भाषा के लिए ‘पालि’ नहीं, बल्कि

1. सद्धम्मसङ्गहो, पृ. 80.

2. वही, पृ. 84.

‘मागधी’ शब्द का प्रयोग किया गया है।

तो प्रश्न है कि ‘पालि’ शब्द जब भाषा के लिए नहीं, तो किन अर्थों में प्रयुक्त हुआ है? ‘सद्धम्मसङ्गहो’ में ‘पालि’ शब्द प्रसंगानुसार तीन अर्थों को दर्शाता है, ये हैं— (1) तिपिटक या बुद्धवचन (2) ग्रन्थ के पाठ या अध्याय (3) पंक्ति।

रेवत धेर बुद्धघोष को निर्देश देते हैं—“इधवुसो बुद्धघोस, जम्बुदीपे पिटकत्तयपालिमत्तमेव अत्थि, तस्स अट्ठकथा च आचरियवादा च न विज्जन्ति।”³

अर्थात्—आवुस बुद्धघोष! यहाँ, जम्बू द्वीप में, पिटकत्रय पालि ही है, उनकी अट्ठकथाएँ तथा आचार्यों के मत विद्यमान नहीं हैं।

इसी मन्तव्य को गाथा में दर्शाया गया है “पालिमत्तमिधानीतं, नत्थि अट्ठकथा इध।”⁴ अर्थात्—यहाँ (भारत में) पालि मात्र ही है, अट्ठकथाएँ नहीं हैं।

इसी प्रकार—“पिटकत्तय पालिं च, तस्सा अट्ठकथं च”⁵ अर्थात्—पिटकत्रय पालि एवं उनकी अट्ठकथा आदि। इन समस्त उदाहरणों में स्पष्टतः पालि शब्द से ‘बुद्धवचन’ अर्थ अभिप्रेत है जो अट्ठकथाओं, जो कि बुद्धवचन नहीं हैं, से भिन्नता दर्शाने के लिए प्रयोग किया गया है। यहाँ प्रथम एवं अन्तिम उदाहरण में प्रयुक्त ‘पिटकत्रय पालि’ का अर्थ ‘तिपिटक बुद्धवचन’ है। द्वितीय उदाहरण में ‘तिपिटक’ या ‘बुद्धवचन’ के लिए केवल ‘पालि’ शब्द का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः तिपिटक तो बुद्धवचन ही है इसलिए पालि शब्द को स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त किया गया हो या ‘पिटकत्रय’ के साथ, अर्थ वही प्रकट होता है—कभी ‘तिपिटक बुद्धवचन’ तो कभी ‘तिपिटक’ मात्र। बात एक ही है, दोनों प्रयोगों में कोई अन्तर नहीं। सिर्फ लेखक के प्रस्तुत करने की विधि पर निर्भर है।

कुछ ऐसे भी प्रसंग हैं जहाँ ‘तिपिटक’ एवं ‘बुद्धवचन’ शब्दों के साथ—साथ पालि शब्द का प्रयोग हुआ है जैसे, प्रस्तुत प्रसंग में भिक्षुसंघ लंका के राजा वट्टगामिनी से कहता है—“महाराज, मुखपाठेन परम्पराय आनीतं तेपिटकं बुद्धवचनं सब्बं साट्ठकथं च पालिं च इदानीं मुखपाठेसु तिट्ठति। अनागते पन सासनस्स च लोकस्स च परिहानि भविस्सति। सब्बं तेपिटकं बुद्धवचनं साट्ठकथं च पालिं च परिहायिस्सति। तस्मा दानि मुखपाठो तेपिटकं बुद्धवचनं सब्बं साट्ठकथं च पालिं च पौत्थकेसु लिखापेतब्बं भवेय्या” ति।⁶

3. सद्धम्मसङ्गहो, पृ. 80.

4. वही, पृ. 82.

5. वही, पृ. 74.

6. वही, पृ. 72.

अर्थात्—महाराज! मुख पाठ की परम्परा से लाया गया तिपिटक बुद्धवचन, सभी अट्ठकथाओं एवं पालि समेत, अभी तक मौखिक पाठ में विद्यमान है। भविष्य में (बौद्ध) शासन एवं संसार की अवनति होगी। तिपिटक बुद्धवचन, सभी अट्ठकथाओं एवं पालि सहित नष्ट हो जायेंगे। इसलिए अब मुखपठित तिपिटक बुद्धवचन, सभी अट्ठकथाओं एवं पालि सहित पुस्तकों में लिखा जाना चाहिए।

उपर्युक्त उदाहरण में 'तिपिटक बुद्धवचन' के अतिरिक्त भी पालि शब्द का प्रयोग किया गया है, जो दर्शाता है कि यहाँ पालि शब्द तिपिटक या बुद्धवचन के बजाय उसके ग्रन्थों के अध्यायों या पाठों की तरफ संकेत कर रहा है।

'सद्धम्मसङ्गहो' में पालि शब्द का तीसरा प्रयोग 'पंक्ति' अर्थ में हुआ है। भिक्षु जगदीश काश्यप ने स्वरचित ग्रन्थ 'पालि महाव्याकरण' की भूमिका में पालि शब्द के 'पंक्ति' अर्थ को अस्वीकार करते हुए लिखा है— (1) 'पालि साहित्य' में कहीं भी 'पालि' शब्द 'ग्रन्थ की पंक्ति' के अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ है। (2) यदि 'पालि' शब्द का अर्थ पंक्ति होता तो उसे बहुवचन में भी प्रयुक्त होना चाहिए था। भिक्षु जगदीश काश्यप के दोनों आक्षेपों का उत्तर 'सद्धम्मसङ्गहो' में विद्यमान है। प्रसंग है कि बुद्धघोष ने जब 'विसुद्धिमग्ग' की रचना की तो देवताओं ने उसे गायब कर दिया। बुद्धघोष द्वारा पुनः उसी ग्रन्थ की रचना किए जाने पर वह प्रति भी देवताओं द्वारा गायब कर दी गई। अन्त में उनकी प्रतिभा को देखते हुए देवताओं ने गायब प्रतियाँ प्रस्तुत कर दीं। इस प्रकार 'विसुद्धिमग्ग' की कुल तीन प्रतियाँ हो गईं। इन तीन प्रतियों के सम्बन्ध में 'सद्धम्मसङ्गहो' में कथन है—“गन्थतो वा अकखरतो वा पदतो वा व्यज्जनतो वा अत्थतो वा पुब्बापरवसेन वा थेरवादीहि वा पालीहि वा तीसु पोत्थकेसु अज्जत्थत्तं नाम नाहोसि।”⁷

अर्थात्—संयोजन या अक्षरों या पदों या व्यञ्जनों या अर्थों या पूर्व—अपर या थेरवाद की परम्परा या पालियों (की दृष्टि) से तीनों पुस्तकों में जरा भी भिन्नता नहीं थी।

आगे की गाथा भी दी गई है —

“थेरवादेहि पालीहि, पदेहि व्यज्जनेहि च।

अज्जत्थत्तमहु नेव, पोत्थकेसु पि तीसु पिति”।⁸

7. काश्यप, भिक्षु जगदीश: 'पालि—महाव्याकरण', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1985 भूमिका पृ. 8.

8. 'सद्धम्मसङ्गहो', पृ. 82.

9. वही, पृ. 84.

अर्थात्—थेरवाद की परम्परा, पालियों, पदों, व्यञ्जनों से तीनों पुस्तकों में जरा भी भिन्नता नहीं थी।

इन उद्धरणों में पालि शब्द तिपिटक या बुद्धवचन के अर्थ में तो प्रयुक्त ही नहीं हुआ है, पाठ के अर्थ में भी प्रयुक्त नहीं हुआ है क्योंकि पद, व्यञ्जन आदि पाठ के ही तो अंग होते हैं। लेखक ने यदि पद, व्यञ्जन, अर्थ, पूर्व—अपर आदि पाठ के अंगों का प्रयोग अलग—अलग कर ही दिया, तो फिर 'पालि' शब्द को 'पाठ' अर्थ में प्रयुक्त कर वह क्यों पुनरुक्ति करेगा? सूक्ष्म रूप से गौर करने पर स्पष्ट है कि 'पालि' शब्द यहाँ 'पक्ति' अर्थ को दर्शाने हेतु प्रयुक्त हुआ है। साथ ही 'पालीहि' का प्रयोग भिक्षु जगदीश काश्यप के उस मत का भी खण्डन कर रहा है कि पालि साहित्य में पालि शब्द का बहुवचन में प्रयोग नहीं हुआ है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि पालि शब्द का भाषा के अर्थ में प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी में भिक्षु प्रज्ञास्वामी द्वारा रचित ग्रन्थ 'सासनवंस' में प्रथम बार दिखलायी पड़ता है, जो आगे चलकर इसी रूप में प्रचलित हो गया। इसके पहले तो, जैसा कि ऊपर दर्शाया गया, यह भाषा मागधी नाम से ही प्रचलित थी।

सामान्यतः थेरवादी परम्परा वट्टगामिनी अभय के शासन काल में हुई बौद्ध संगीति को चतुर्थ संगीति मानती है, किन्तु 'सद्धम्मसङ्गहो' में इससे भी पहले महिन्द के लंका प्रवास की अवधि में राजा देवानाम्पियतिसस के काल में आयोजित होने वाली संगीति के रूप में चतुर्थ संगीति का वर्णन उपलब्ध होता है। यह संगीति अनुराधपुर के थूपाराम में अड़सठ अर्हत्तों एवं साठ हजार भिक्षुओं की उपस्थिति में आयोजित हुई। वट्टगामिनी अभय के काल में हुई संगीति का वर्णन यहाँ पाँचवीं संगीति के रूप में आया है। इस संगीति में पहली बार तिपिटक एवं अट्ठकथाएँ आदि लिखी गईं। यह सम्पूर्ण आयोजन एक वर्ष में समाप्त हुआ। 'सद्धम्मसङ्गहो' बुद्धघोषकृत अट्ठकथाओं—सुमंगलविलासिनी, अट्ठसालिनी एवं समन्तपासादिका के समान अभिधम्मपिटक का संगायन प्रथम संगीति में ही स्वीकार करता है। समस्त बुद्धवचनों को धम्म एवं विनय के रूप को व्याख्यायित करते हुए यहाँ कहा गया है—“विनयपिटकं विनयो, अवसेसबुद्धवचनं धम्मो” ति।¹⁰ अर्थात्—विनयपिटक विनय है, अवशेष बुद्धवचन धम्म है। इस प्रकार सुत्तपिटक

एवं अभिधम्मपिटक दोनों को 'धम्म' के अन्तर्गत रखा गया है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि महिन्द का परिचय सद्धम्मसङ्गहो में सम्राट अशोक के पुत्र के रूप में है ही नहीं। लंका में धम्म-प्रचार के प्रकरण में उसका परिचय महिन्द धेर के रूप में मिलता है, जो अपने गुरु मोग्गलिपुत्तत्तिस्स के आदेश से अपने गुरु भाइयों इट्ठिय, उत्तिय, सम्बल तथा भद्दसाल के साथ लंका में बौद्ध शासन की स्थापना हेतु जाता है।

लेखक बारहवीं शताब्दी के राजा परक्कमबाहु प्रथम के योगदान के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी देते हुए उसके काल में लिखी गई टीकाओं की सूची प्रस्तुत करता है। ये सूचनाएँ 'सद्धम्मसङ्गहो' के पूर्व के ग्रन्थों में चूलवंस के अतिरिक्त संभवतः किसी अन्य पालि ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं हैं। लेखक इतिहास लेखन करते हुए बौद्ध धर्म की मूल भावना विराग को आत्मसात किये रहता है। वह अधिकांश तथ्यों की प्रस्तुति के लिए पूर्व लिखित ग्रन्थों पर निर्भर रहा है एवं अनेक स्थानों पर उसने विभिन्न ग्रंथों के वर्णन भी यथावत ले लिए हैं। संभवतः उसने ग्रन्थ के तथ्यों की प्रामाणिकता को सुरक्षित रखने हेतु ऐसा किया हो। यद्यपि लेखक की लेखन-प्रतिभा का विशेष परिचय अन्तिम अध्याय, हांलांकि जो ऐतिहासिक तथ्यों की दृष्टि से महत्वहीन है, से होता है, जब वह पूर्व लिखित ग्रन्थों से उधार लेने की प्रवृत्ति से मुक्त हो सका है।

'सद्धम्मसङ्गहो का लेखक'

ग्रन्थ की समाप्ति के पश्चात् सात गाथाओं में लेखक का परिचय दिया गया है, जो लेखक के नाम को लेकर भ्रमित करने वाला है। श्री बी.सी. लॉ ने 'सद्धम्मसङ्गहो' के अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका¹¹ में लेखक को धम्मकित्ति नामक भिक्षु बताया है, किन्तु सात गाथाओं के अनुवाद में वे यह स्पष्ट न कर सके कि उनका संकेत दूसरी गाथा में आगत गुरु धम्मकित्ति के तरफ है अथवा चौथी गाथा में शिष्य के रूप में वर्णित धम्मकित्ति महासामी की तरफ। वास्तव में यह सन्देह सातवीं एवं अंतिम गाथा में लेखक के रूप में दिए गए नाम 'धम्मकित्ति सामी' ने उत्पन्न कर दिया है। श्री बी.सी. लॉ ने इस गाथा में 'सामी' शब्द का भी अंग्रेजी अनुवाद 'मास्टर' करते हुए लेखक के रूप में धम्मकित्ति को दर्शाया है।

11. Law, B.C.: *A Manual of Buddhist Historical Traditions*, Bharatiya Pub. House, Delhi, 1980, p. 1.

उनके अनुवाद में यह अस्पष्ट रह जाता है कि अध्ययन हेतु श्री लंका जाने वाले एवं धम्मकिति (गुरु) के शिष्य के रूप में वर्णित धम्मकिति महासामी के 'महासामी' का अनुवाद न कर जब उन्होंने उसे यथावत् छोड़ दिया तो फिर उन्होंने अंतिम गाथा के धम्मकिति सामी के 'सामी' का अनुवाद क्यों कर दिया? यही अनावश्यक अनुवाद विरोधाभास उत्पन्न कर रहा है। श्री बी. सी. लॉ ने ही अपनी अन्य पुस्तक 'ए हिस्ट्री ऑफ पालि लिटरेचर'¹² में धम्मकित्याभिधान थेर को 'सद्धम्मसङ्गहो' का लेखक बताया है। 'धम्मकित्याभिधान' शब्द ग्रन्थ के लेखक—परिचय देने वाली सात गाथाओं में से द्वितीय गाथा में आया है किन्तु यह मत तो सर्वथा ही अमान्य है, क्यों यह शब्द धम्मकिति एवं अभिधान—इन दो पदों की 'इवण्णोयन्न वा' (कच्चायन व्याकरण)¹³ सूत्रानुसार निर्मित सन्धि है, जिसका अभिप्राय 'धम्मकिति नामक' है। अतः धम्मकित्याभिधान को स्वयं में नाम समझ लेना उचित नहीं है।

श्री महेश तिवारी ने देवनागरी में स्वसम्पादित 'सद्धम्मसङ्गहो' की भूमिका¹⁴ में गुरु के रूप में धम्मकिति एवं शिष्य के रूप में धम्मकिति महासामी को दर्शाए बिना ही धम्मकिति महासामी को ग्रन्थ का लेखक स्वीकार किया है, किन्तु दुर्भाग्यवश प्रमाण के रूप में दी गई गाथाओं के अनुवाद के रूप में उन्होंने श्री बी.सी. लॉ के अनुवाद को प्रस्तुत किया है, परिणामस्वरूप वही विरोधाभास यहाँ भी है—लंका जाने वाले व्यक्ति का नाम तो धम्मकिति महासामी, किन्तु स्वदेश लौटकर लंकाराम नामक विहार में 'सद्धम्मसङ्गहो' की रचना करने वाले व्यक्ति का नाम धम्मकिति बताया गया है।

ग्रन्थ के अन्त में दिए गए लेखक—परिचय का ठीक—ठीक अनुवाद कर यदि उसकी प्रथम तीन गाथाओं पर दृष्टि डाली जाए तो पता लगता है कि लंका द्वीप में एक प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् धम्मकिति रहते थे। पुनः आगे की गाथा में लंका में ज्ञानार्जन हेतु जाने वाले व्यक्ति का नाम धम्मकिति महासामी कहा गया है, जो वहाँ जाकर धम्मकिति के शिष्य के रूप में प्रसिद्ध हुआ। वहाँ पब्वजा लेकर वह अपने देश योदयपुर नामक स्थान पर लौट आया। फिर अंतिम गाथा में वर्णन इस

12. Law, B.C.: *A History of Pali Literature*, Indica Books, Varanasi, 2000, p. 550.

13. तिवारी, लक्ष्मीनारायण: 'कच्चायन व्याकरण', तारा बुक एजेन्सी, वाराणसी, 1989, पृ. 19.

14. तिवारी, महेश संपादक: 'सद्धम्मसङ्गहो', नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा, 1961, पृ. xi.

प्रकार है—“धम्मकित्योरुसामिना, धीमता रचितं इदं सद्धम्मसङ्गहं नाम।” यहाँ प्रथम पद में विद्यमान ‘उरु’ (उत्कृष्ट) तथा द्वितीय पद धीमता (बुद्धिमान) का ही यदि अनुवाद किया जाए तो लेखक का नाम न धम्मकिति और न धम्मकिति महासामी, बल्कि धम्मकिति सामी ठहरता है। किन्तु किसी धम्मकिति सामी के नाम का आगमन ही यहाँ अप्रासंगिक होगा क्योंकि ठीक पीछे की गाथाओं में तो चर्चा धम्मकिति महासामी की ही हुई है, इसलिए धम्मकिति सामी शब्द निश्चय ही शिष्य धम्मकिति महासामी के लिए प्रयुक्त हुआ है, न कि उसके श्रीलंका स्थित गुरु धम्मकिति के लिए। गुरु धम्मकिति को लेखक मानना इसलिए भी असंगत प्रतीत होता है कि शिष्य के कार्यों की चर्चा के क्रम में तो गुरु का नाम देने की परंपरा है या यों कहें कि शिष्य की पहचान ही गुरु से होती रही है, किन्तु गुरु का परिचय देने के लिए किसी शिष्य के नाम का उल्लेख करने की सामान्य तौर पर परम्परा नहीं रही है।

लेखक की जन्मभूमि भी स्पष्ट नहीं है। अन्त में दिए गए उसके परिचय में कहा गया है—“वह (लेखक) बहुत सारे पुण्यकर्मों को कर (धम्मकिति) थेर के पास उपसम्पदा प्राप्त कर, पुनः अपने देश योदयपुर लौटा। परमराजा नामक महाराजा द्वारा निर्मित लंकाराम नामक विशाल आवास में रहते हुए शुद्ध आचरण वाले, बुद्धिमान एवं उत्कृष्ट धम्मकिति महासामी द्वारा सभी प्रकार से पूर्ण इस ‘सद्धम्मसङ्गहो’ की रचना की गई।” प्रसिद्ध विद्वान् जी.पी. मललसेकेरे ने ‘योदयपुर’ नाम का अयोध्या से साम्य बताते हुए लेखक को भारत के अयोध्या का निवासी बताया है।¹⁵ इस मत का कोई आधार नहीं प्रतीत होता है, क्योंकि चौदहवीं शताब्दी में न तो अयोध्या के बौद्ध धर्म के केन्द्र होने का कोई प्रमाण है, न भारत में परमराजा नामक किसी राजा के अस्तित्व का और न ही लंकाराम जैसे किसी स्थान के विद्यमान होने का। श्री बी.सी. लॉ ने ग्रन्थ के अंग्रेजी अनुवाद की भूमिका¹⁶ में धम्मकिति को सिंहल का ही बताया है और लंकाराम को सिंहल में ही विद्यमान। चूंकि श्री बी.सी. लॉ ने गुरु धम्मकिति एवं शिष्य धम्मकिति

15. Malalasekera, G.P.: *Dictionary of Pali Proper Names*, Vol. I, Munshiram Manoharlal Pub., N. Delhi, 1995, p. 1137.

16. Law, B.C.: *A Manual of Buddhist Historical Traditions*, Bharatiya Pub. House, Delhi, 1980, p. 1.

महासामी में कोई भेद ही नहीं किया है, इसलिए उन्होंने लेखक का देश सिंहल मान लिया है। लेखक के विषय में तो मैंने अपना स्पष्टीकरण दे दिया है, ऊपर दिए गए उद्धरण से भी इस मत का खण्डन हो जाता है। इसलिए इस मत का तो कोई आधार ही नहीं है। यह तो स्पष्ट है कि लेखक न तो भारत का था न ही सिंहल देश का।

अपेक्षाकृत सर्वाधिक तार्किक मत श्री महेश तिवारी का है। उनका मत है कि यहाँ योदयपुर से अभिप्राय स्याम (थाईलैण्ड) के अयूथिया नामक स्थान से है।¹⁷ वस्तुतः चौदहवीं शताब्दी ईस्वी (सन् 1350) में दक्षिणी स्याम का अयूथिया नगर स्याम की राजधानी एवं सत्ता का केन्द्र हो गया। शासक-संरक्षण प्राप्त कर बौद्ध धर्म वहाँ का प्रमुख धर्म हो गया। शासक परम्परा में सन् 1370 ईस्वी में परमराजा प्रथम नामक शासक सत्तासीन हुआ, जिसने पूर्व शासकों की भांति ही बौद्ध धर्म को महत्त्व एवं योगदान दिया। इस काल में सिंहल एवं स्याम के बीच परस्पर धार्मिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान अपने चरम पर रहा। श्री मल्लसेकेर की पुस्तक को उद्धृत करते हुए श्री तिवारी प्रमाण देते हैं कि सन् 1406 ईस्वी में धम्मकित्ति महासामी नामक थेर को स्याम के भिक्षुओं ने संघराज बनाया था। इस प्रकार श्री महेश तिवारी के मत के तीन प्रमुख आधार हैं—(1) योदयपुर शब्द का अयूथिया से साम्य होना। (2) चौदहवीं शताब्दी में परमराजा नामक शासक का अयूथिया में सत्तासीन होना। (3) धम्मकित्ति का संघराज बनाया जाना।

इन आधारों में सबसे समर्थ आधार है परमराजा के शासक होने का प्रमाण। श्री तिवारी ने अयूथिया के लिए ही 'अयोध्या' शब्द का भी प्रयोग करते हुए उसी आधार पर उसका 'योदयपुर' से साम्य दिखलाया है। यह मत आंशिक रूप से ही स्वीकार्य एवं तर्कसंगत प्रतीत होता है, क्योंकि उन्होंने अयूथिया के लिए 'अयोध्या' शब्द प्रयोग करने का कोई ठोस प्रमाण या उदाहरण नहीं प्रस्तुत किया है। धम्मकित्ति को संघराज बनाए जाने का आधार प्रासंगिक होते हुए भी लेखक को अयूथिया का वासी मानने के निष्कर्ष को बहुत बल नहीं प्रदान करता, क्योंकि एक तो धम्मकित्ति नाम बौद्ध धर्म के लिए अकेला एवं नया नहीं है, अनेक धम्मकित्ति नामक भिक्षुओं के उदाहरण बौद्ध साहित्य में मिलते हैं, और फिर धम्मकित्ति को संघराज बनाए जाने की घटना तो भुवनेकबाहु पञ्चम एवं वीरबाहु

17. तिवारी, महेश संपादक: 'सद्धम्मसङ्गहो', नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा, 1961, पृ. xi.

द्वितीय (लगभग सन् 1372-1410) के शासनकाल में हुई।¹⁸ यह अभी तक अस्पष्ट है कि संघराज बनाए जाने वाले धम्मकित्ति वही थे या कोई अन्य धम्मकित्ति, जिनके लिए परमराजा ने लंकाराम बनवाया।

उत्तरी थाईलैण्ड का 'सुखोदय' नामक स्थान चौदहवीं शताब्दी ईस्वी के मध्य (सन् 1350 ई.) अर्थात् अयूथिया के केन्द्र बनने के ठीक पहले तक राजधानी थी। इसके विषय में स्याम में ही रतनपञ्जा थेर द्वारा रचित पालि ग्रन्थ 'जिनकालमाली' में चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में स्याम और सिंहल देश के बीच घनिष्ठ सांस्कृतिक एवं धार्मिक सम्बन्धों एवं उत्तरी थाईलैण्ड में थेरवाद (सिंहली) बौद्ध धर्म की स्थापना का वर्णन किया गया है। इस काल में भी बौद्ध धर्म को शासक वर्ग का पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है। 'जिनकालमाली' सुखोदय में सिंहली भिक्षुओं के लिए विशेष तौर पर बनाए गए एक भिक्षुसंघ की चर्चा करता है।¹⁹ संभव है कि लंकाराम यहीं हो और लेखक ने उस समय के शासक 'धम्मराजा' को ही परमराजा कहा हो।

यद्यपि यह एक छोटे से प्रमाण के आधार पर किया हुआ अनुमान मात्र है, किन्तु पर्याप्त प्रमाणों के अभाव में संभवतः यही शोधकर्ताओं को कोई दिशा दे सके।

कुल मिलाकर उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर इतना ही कहा जा सकता है कि लेखक स्याम (थाईलैण्ड) का निवासी था। अयूथिया का था या सुखोदय का, इसका अंतिम निष्कर्ष निकालने के लिए उपलब्ध सामग्री अपर्याप्त प्रतीत होती है।

समस्त अध्यायों की विषयवस्तु संक्षेप में इस प्रकार है—

अध्याय 1—इस अध्याय में प्रथम बौद्ध संगीति की कार्यवाही के अन्तर्गत तिपिटक के संगायन का वर्णन किया गया है। सर्वप्रथम विनयपिटक के संगायन का वर्णन है, जिसके दो विभागों—महाविभंग एवं भिक्खुनीविभंग, खन्धक एवं परिवार के रूप में भेद बताये गये हैं। सुत्तपिटक में दीघनिकाय के अन्तर्गत चौत्तीस सुत्तों, मज्झिमनिकाय के अन्तर्गत एक सौ बावन सुत्तों, संयुत्तनिकाय के

18. Hazra, Kanai Lal: *History of Theravada Buddhism in South-East Asia*, Munshiram Manoharlal Pub., N. Delhi, 1981, p. 4

19. Ibid, p. 142.

अन्तर्गत सात हजार सात सौ बासठ सुत्तों, अंगुत्तरनिकाय के अन्तर्गत नौ हजार पाँच सौ सत्तावन सुत्तों तथा खुद्दकनिकाय के अन्तर्गत पन्द्रह ग्रन्थों के संकलन की चर्चा है। आनन्द एवं उनके शिष्यों को दीघनिकाय, सारिपुत्त एवं उनके शिष्यों को मज्झिमनिकाय, महाकस्सप एवं उनके शिष्यों को संयुत्तनिकाय तथा अनुरुद्ध एवं उनके शिष्यों को अंगुत्तरनिकाय कंठस्थ एवं संरक्षित करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। चुल्लवग्ग के पञ्चसतिकाखन्धक के विपरीत यहाँ प्रथम संगीति में ही अभिधम्मपिटक के सात ग्रन्थों के संगायन की बात भी स्वीकार की गई है।

समस्त बुद्धवचन सार की दृष्टि से एक, धम्म एवं विनय के भेद से दो, आदि, मध्य तथा अन्त के भेद से तीन, पिटक के भेद से तीन, निकाय के भेद से पाँच, अंग के भेद से नौ तथा धर्म—स्कन्ध के भेद से चौरासी हजार होते हैं। इन बातों को भी इस अध्याय में विस्तार दिया गया है। पाँच सौ भिक्षुओं द्वारा बुद्धवचन (तिपिटक) का संकलन किए जाने के कारण यह संगीति 'पञ्चसत्ता' तथा चूँकि वे सभी थेर थे, 'थेरिका' कहलाई। यह संगीति सात मास में समाप्त हुई इस संगीति में उपस्थित रहने वाले भिक्षुओं की संख्या सात लाख बताई गई है, जो पूर्ववर्ती प्रामाणिक वर्णनों से मेल न खाने के कारण अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होती है। आनन्द के अर्हत् न होने एवं उन पर भिक्षुसंघ द्वारा लगाये गये आरोपों की यहाँ कोई चर्चा नहीं है।

अध्याय 2—बुद्ध परिनिर्वाण के सौ वर्ष पश्चात् राजा कालाशोक के काल में वैशाली में हुई द्वितीय बौद्ध संगीति इसका प्रमुख विषय है। वैशाली के भिक्षु दस प्रकार से विनय द्वारा प्रतिपादित नियमों का उल्लंघन करने लगे थे। उनके आचरण की परीक्षा करने हेतु काकण्डपुत्र यश नामक थेर ने सात सौ अर्हत् भिक्षुओं की द्वितीय संगीति बुलाई, जो आठ मास तक चली। इसमें तिपिटक का पुनः संगायन किया गया एवं रेवत थेर द्वारा सब्बकामी थेर से दस आचरणों सम्बन्धी प्रश्न पूछकर बौद्ध शासन की समस्त मलों का शोधन किया गया। तथागत का पूर्व में दर्शन किये हुए सब्बकामी, साळ्ह, रेवत, खुज्जसोभित, यस, साणसंभूत, सुमन तथा वासभगामी जैसे थेरों की भागीदारी के कारण इस संगीति का महत्त्व और बढ़ गया। इस संगीति में एक लाख बारह हजार भिक्षुओं के एकत्र होने का उल्लेख है। सात सौ अर्हत् भिक्षुओं के संगायन में हिस्सा लेने के कारण यह संगीति 'सत्तसत्ता' कहलाई।

अध्याय 3—इस अध्याय में सम्राट अशोक के काल में पाटलिपुत्र में हुई तृतीय बौद्ध संगीति का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ के अनुसार यह संगीति बुद्ध—महापरिनिर्वाण के दो सौ अट्ठाइस वर्ष पश्चात् हुई। अशोक के काल तक बौद्ध धर्म के अन्तर्गत अन्य विचारधारा वाले अनेक व्यक्ति भी बौद्धों को प्राप्त होने वाले लाभ एवं सत्कार को प्राप्त करने की इच्छा से सिर मुड़ा एवं काषाय वस्त्र पहनकर बौद्ध संघ में प्रविष्ट हो गए। ये बौद्ध धर्मानुसार आचरण करना तो दूर, उल्टे उसमें कलह एवं गन्दगी उत्पन्न कर रहे थे। यह स्थिति देख अशोक ने थेर मोग्गलिपुत्त तिस्स से परामर्श कर ऐसे साठ हजार दुराचारी भिक्षुओं को श्वेत वस्त्र देकर बौद्ध संघ से बहिष्कृत कर दिया। संघ के शुद्ध होने के पश्चात् बुद्धवचनों के पुनः निश्चयीकरण हेतु मोग्गलिपुत्त तिस्स थेर ने एक हजार अर्हत् भिक्षुओं को आमंत्रित कर तृतीय बौद्ध संगीति का आयोजन किया। यह संगीति नौ मास में समाप्त हुई। इसमें मोग्गलिपुत्त तिस्स थेर ने परवाद का खण्डन एवं थेरवाद का मण्डन करते हुए 'कथावत्थु' नामक ग्रन्थ की रचना की, जो अपने विशेष महत्त्व के कारण अभिधम्मपिटक के पाँचवें ग्रन्थ के रूप में मान्य है।

अध्याय 4—इस अध्याय में तृतीय संगीति के पश्चात् मोग्गलिपुत्त तिस्स थेर द्वारा विभिन्न स्थानों पर भेजे गए भिक्षुओं के नाम तथा सिंहल में बौद्ध धर्म की स्थापना का वर्णन है। वर्णित भिक्षु एवं स्थान निम्नलिखित हैं —

मज्झनिक थेर	—	कश्मीर एवं गान्धार
महादेव थेर	—	महिसमण्डल
रक्खित थेर	—	वनवासी
यूनानी मूल का धम्मरक्खित थेर	—	अपरान्तक
महाधम्मरक्खित थेर	—	महारट्ट
महारक्खित थेर	—	यवन देश
मज्झिम थेर	—	हिमवन्त प्रदेश
सोणक एवं उत्तर थेर	—	सुवण्णभूमि
महिन्द, इट्ठिय, उत्तिय, सम्बल, भद्दसाल थेर	—	लंका

बुद्ध परिनिर्वाण के दो सौ छत्तीस वर्ष पश्चात् महिन्द थेर मित्रों समेत राजा देवानम्पियतिस्स के शासनकाल में लंका द्वीप पर पधारे। राजा एवं जनता को प्रभावित कर उन्होंने लंका में बौद्ध धर्म की स्थापना की। राजा द्वारा विशाल मेघवन

उद्यान एवं चेतिय नामक स्थान पर अड़सठ गुफाएँ निर्मित कराकर उन्हें बौद्ध संघ को दान किए जाने का वर्णन भी यहाँ प्राप्त होता है।

अध्याय 5—इस अध्याय में लंका द्वीप में राजा देवानाम्पियतिसस के काल में महिन्द थेर द्वारा आयोजित चतुर्थ संगीति का वर्णन किया गया है। समन्तपासादिका में लंका में तिपिटक के संगायन का तो उल्लेख है, किन्तु चतुर्थ बौद्ध-संगीति का महत्त्व इसे केवल 'सद्धम्मसङ्गहो' में दिया गया है। इस अध्याय में देवानाम्पियतिसस के भाई एवं उपराजा महानाग की पत्नी अनुला देवी के एक हजार स्त्रियों के साथ संघमित्त थेरी के पास प्रव्रज्या ग्रहण करने का प्रसंग है। चतुर्थ संगीति की कार्यवाही के अन्तर्गत राजा के भान्जे अरिट्ट ने भिक्षु बनकर अर्हत्व प्राप्त किया एवं विनय का आद्योपान्त पाठ कर लंका में बौद्ध धर्म की स्थापना करने वाले प्रथम लंकावासी होने का गौरव प्राप्त किया। इस अवसर पर महिन्द थेर ने अड़सठ अर्हत्तों एवं साठ हजार भिक्षुओं की उपस्थिति में धम्म एवं विनय का संगायन किया। यहीं पर बुद्ध के दाहिने हाथ की हँसली की हड्डी के अवशेष के श्रृपाराम नामक स्थान पर प्रतिष्ठापन का उल्लेख भी मिलता है। श्रृपाराम में ही संगीति की सम्पूर्ण कार्यवाही सम्पन्न हुई।

अध्याय 6—इस अध्याय का मुख्य विषय तिपिटक का वट्टगामिनी अभय के शासन काल में पहली बार लिखा जाना है। यहाँ वट्टगामिनी अभय के भी पूर्व के शासक दुट्ठगामिनी अभय के द्वारा बौद्ध धर्म को किए गए योगदान का संक्षिप्त वर्णन आया है। बुद्ध-परिनिर्वाण के चार सौ तैंतीस वर्ष पश्चात् राजा वट्टगामिनी अभय के पास पहुँचकर भिक्षुसंघ ने आग्रह किया कि अब तक मौखिक परंपरा में विद्यमान बुद्धवचन (तिपिटक) एवं अट्ठकथाओं का लिखा जाना अति आवश्यक है, अन्यथा ये भविष्य में समाप्त हो जाएँगे। वट्टगामिनी अभय ने विशाल मण्डप बनवा लेखन हेतु समस्त आवश्यक सामग्री उपलब्ध कराई। लेखन हेतु कई हजार वरिष्ठ भिक्षुओं का चयन किया गया, जिन्होंने लेखन कार्य एक वर्ष में समाप्त किया। 'सद्धम्मसङ्गहो' में इस सम्पूर्ण कार्यवाही को पाँचवीं बौद्ध संगीति का नाम दिया गया है, यद्यपि यह अन्य पालि ग्रन्थों में चतुर्थ संगीति के रूप में वर्णित है।

अध्याय 7—लंका में राजा महानाम के शासन काल के समय भारत में मज्झिम देश के बोधिमण्ड नामक स्थान पर ब्राह्मण परिवार में एक बालक का जन्म हुआ।

इसने आगे चलकर सिंहल द्वीप में सिंहली भाषा में विद्यमान अट्ठकथाओं को पुनः मागधी (पालि) में परिवर्तित किया तथा बुद्धघोष के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह सभी शास्त्रों, तीनों वेदों का ज्ञाता एवं शास्त्रार्थ में पारंगत था। एक बार किसी विहार में उसका शास्त्रार्थ बौद्ध भिक्षु रेवत थेर से हो गया। रेवत थेर के महान ज्ञान के समक्ष वह न टिक सका और पराजित हो वह उनसे ज्ञान प्राप्त करने की आकांक्षा से बौद्ध हो गया। उसकी वाणी माहात्म्य में बुद्ध के समान गम्भीर थी, अतः वह 'बुद्धघोष' कहलाने लगा। जिस विहार में उसकी प्रव्रज्या हुई, उसी में उसने स्वतंत्र ग्रन्थ 'जाणोदय' तथा धम्मसंगणि की अट्ठकथा 'अट्ठसालिनी' की रचना की। इसके पश्चात् जब उसने 'परित्तट्ठकथा' लिखना प्रारम्भ किया तो गुरु रेवत थेर ने उन्हें लंका में विद्यमान सिंहली अट्ठकथाओं को पुनः मागधी में रूपान्तरित करने हेतु लंका जाने का निर्देश दिया। बुद्धघोष भारत के नागपट्टन नामक स्थान से नाव द्वारा लंका में अनुराधपुर पहुँचे। वहाँ जब उन्होंने भिक्षुसंघ से अट्ठकथाओं की मांग की तो भिक्षुसंघ ने सर्वप्रथम उनके ज्ञान की परीक्षा लेने के लिए दो गाथाएँ व्याख्या हेतु दे दीं। व्याख्यास्वरूप बुद्धघोष ने अत्यन्त विद्वतापूर्ण 'विसुद्धिमग्ग' ग्रन्थ का प्रणयन कर दिया। भिक्षुसंघ ने प्रभावित हो उन्हें समस्त सिंहली अट्ठकथाएँ मागधी में रूपान्तरण के लिए सौंप दीं।

बुद्धघोष ने महाविहार के दक्षिण भाग में पधानघर नामक एक प्रासाद में कार्य प्रारम्भ किया। यहाँ तीन सिंहली अट्ठकथाओं का उल्लेख मिलता है—महा अट्ठकथा, महापच्चरि अट्ठकथा एवं महाकुरुन्द अट्ठकथा। महा अट्ठकथा के विषय में कहा गया है कि चूँकि यह प्रथम महासंगीति में महाकस्सप द्वारा रची गई एवं महामहिन्द द्वारा लंका ले जायी गई, इसलिए यह महा अट्ठकथा कहलाई। बेड़े (पच्चरि) पर बैठकर रचे जाने के कारण दूसरी अट्ठकथा महापच्चरि अट्ठकथा कहलाई। तीसरी अट्ठकथा चूँकि कुरुन्दवेलुविहार में तैयार हुई थी, इसलिए वह महाकुरुन्द अट्ठकथा कहलाई। बुद्धघोष ने इन तीन सिंहली अट्ठकथाओं के आधार पर मागधी में अट्ठकथाएँ तैयार कीं। महा अट्ठकथा के आधार पर उन्होंने दीघनिकाय की अट्ठकथा सुमंगलविलासिनी, मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा पपञ्चसूदनी, संयुत्तनिकाय की अट्ठकथा सारत्थप्पकासनी, अंगुत्तरनिकाय की अट्ठकथा मनोरथपूरणी तथा खुद्दकनिकाय की अट्ठकथा तैयार की। महाकुरुन्द अट्ठकथा के आधार पर उन्होंने विनयपिटक की अट्ठकथा

समन्तपासादिका का प्रणयन किया। महापच्चरि अट्ठकथा के आधार पर उन्होंने धम्मसंगणि की अट्ठकथा अट्ठसालिनी, विभंग की अट्ठकथा सम्मोहविनोदनी की रचना की। ये कार्य एक वर्ष में समाप्त हुए। 'सद्धम्मसङ्ग्रहो' में कुछ पालि अट्ठकथाओं में आगत अक्षरों की संख्या तक दी गई है। इसके अनुसार समन्तपासादिका में सत्ताईस हजार, प्रथम चार निकायों में कुल अस्सी हजार, खुद्दकनिकाय में सैंतीस हजार तथा अट्ठसालिनी में तीस हजार अक्षर विद्यमान हैं।

महा अट्ठकथा के नाम पड़ने का पूर्व उल्लिखित कारण यह स्पष्ट कर देता है कि महा अट्ठकथा प्रथम बौद्ध संगीति में ही मागधी में तैयार हो गई थी। पूर्व में तिपिटक की भाषा (मागधी) पर विचार करते हुए हमने इसी अध्याय का उद्धरण दिया है, जिसमें रेवत थेर बुद्धघोष से कहते हैं कि प्रथम तीन संगीतियों में सारिपुत्त आदि द्वारा तैयार (मागधी) अट्ठकथाएँ सिंहल देश में सिंहली भाषा में विद्यमान हैं। इससे यह पता लगता है कि सिंहली अट्ठकथाओं से भी पूर्व प्रथम संगीति में तिपिटक के संकलन के साथ-साथ उन पर महाकस्सप, सारिपुत्त आदि भिक्षुओं ने अट्ठकथाएँ लिखीं और यह क्रम तृतीय संगीति अर्थात् महिन्द के लंका जाने तक चला। वहाँ जाने पर वहीं मागधी अट्ठकथाएँ सिंहली अट्ठकथाओं का आधार बनीं। दुर्भाग्यवश आज जब महा अट्ठकथा आदि सिंहली अट्ठकथाएँ ही विलुप्त हो चुकीं हैं तो उनके आधार ग्रन्थों की तो बात ही क्या? बुद्धघोष के प्रयास से वे सिंहली अट्ठकथाएँ पुनः मूल भाषा मागधी में परिवर्तित हो सकीं। यद्यपि इस अध्याय में बुद्धघोष द्वारा सिंहली अट्ठकथाओं को परिवर्तित किए जाने मात्र का उल्लेख मिलता है, किन्तु बुद्धघोष कृत अट्ठकथाओं को देखने पर उसमें उनका मौलिक योगदान भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

अध्याय 8—इस अध्याय में राजा परक्कमबाहु प्रथम के शासनकाल में लिखी गई टीकाओं की सूची दी गई है। बुद्ध परिनिर्वाण के एक हजार, पाँच सौ सत्तासी वर्ष पश्चात् लंका में परक्कमबाहु नामक राजा हुआ। बौद्ध धर्म उस समय तक कई भागों में बंटा हुआ एवं हासोन्मुख था, जिसमें अनेक दुराचारियों का प्रवेश हो चुका था। राजा ने उदुम्बरगिरिवासी महाकस्सप थेर से मार्गदर्शन प्राप्त कर कई सौ दुराचारी भिक्षुओं को श्वेत वस्त्र देकर बौद्ध धर्म से बहिष्कृत कर दिया। उसने बौद्ध भिक्षुओं के लिए कपिलवत्थु, इसिपतन, कुसिनाराराम, वेलुवन आदि अनेक

महाविहार, कूटागार, उपोसथागार, महाप्रासाद, जलाशय आदि बनवाए।

बौद्ध शासन के शुद्धिकरण के पश्चात् कई हजार भिक्षुओं के साथ संघ के प्रमुख महाकस्सप थेर ने विचार किया कि पुरानी अट्ठकथाएँ छिपे हुए अर्थों के प्रकाशन एवं उनकी व्याख्या करने में सक्षम एवं प्रासंगिक नहीं है, अतः इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए टीकाओं की रचना की आवश्यकता है। परवक्कमबाहु द्वारा निर्मित प्रासाद में एकत्र भिक्षुओं ने विभिन्न टीकाओं की रचना की, जो इस प्रकार हैं—

- | | | |
|------------------------|---|-----------------------------------|
| 1. सारत्थदीपनी | — | समन्तपासादिका की टीका |
| 2. पठमसारत्थमञ्जूसा | — | सुमंगलविलासिनी की टीका |
| 3. दुतियसारत्थमञ्जूसा | — | पपञ्चसूदनी की टीका |
| 4. ततियसारत्थमञ्जूसा | — | सारत्थपकासनी की टीका |
| 5. चतुत्थसारत्थमञ्जूसा | — | मनोरथपूरणी की टीका |
| 6. पठमपरमत्थपकासिनी | — | अट्ठसालिनी की टीका एवं अनुटीका |
| 7. दुतियपरमत्थपकासिनी | — | सम्मोहविनोदनी की टीका एवं अनुटीका |
| 8. ततियपरमत्थपकासिनी | — | परमत्थदीपनी की टीका एवं अनुटीका |

विस्तार की दृष्टि से सारत्थदीपनी में तीस हजार, चारों सारत्थमञ्जूसा में चौरानबे हजार एवं तीनों परमत्थपकासिनी में सत्ताईस हजार अक्षर विद्यमान हैं।

अध्याय 9—पूर्णतः गाथाओं में प्रस्तुत यह अध्याय विभिन्न ग्रन्थों का नामोल्लेख करते हुए उनके लेखकों की सूची तो प्रस्तुत करता ही है, पिटकों, अट्ठकथाओं एवं टीकाओं में भाणवारों, पाठों एवं अक्षरों की कुल संख्या भी दर्शाता है। प्रथमतः भाणवार आदि की संख्या पर दृष्टि डालें—

तिपिटक—1183 भाणवार, 225750 पाठ तथा 9464000 अक्षर।

बुद्धघोष कृत अट्ठकथाएँ—1163 भाणवार, 295750 पाठ तथा 9340000 अक्षर।

टीकाएँ — 632 भाणवार, 158000 पाठ तथा 556000 अक्षर।

इस अध्याय में उल्लिखित रचनाओं एवं लेखकों की सूची इस प्रकार है—

- | | | |
|-----------------|---|----------|
| 1. विसुद्धिमग्ग | — | बुद्धघोस |
| 2. कंखावितरणि | — | बुद्धघोस |
| 3. खुद्दसिक्खा | — | धम्मसिरि |

4.	अभिधम्मावतार	—	बुद्धदत्त
5.	परमत्थविनिच्छय	—	अनु रूद्ध
6.	अभिधम्मत्थसंगह	—	अनु रूद्ध
7.	सच्चसंखेप	—	आनन्द के एक शिष्य द्वारा
8.	खेम	—	खेम
9.	संघनन्दि	—	कच्चायन
10.	संघनन्दि टीका	—	विमलबोधि एवं ब्रह्मपुत्त
11.	रूपसिद्धि	—	बुद्धप्पिय
12.	अभिधानप्पदीपिका	—	मोगल्लान
13.	जिनालंकार	—	बुद्धरक्खित
14.	जिनचरित	—	मेधंकर
15.	परमत्थमञ्जूसा	—	धम्मपाल
16.	विनयसंगह	—	सागरमति
17.	निस्सयट्ठकथा	—	महाबोधि
18.	मुखमत्तका	—	महाबोधि
19.	परमत्थदीपनी	—	धम्मपाल
20.	सुबोधालंकार	—	संघरक्खित
21.	वुत्तोदय	—	संघरक्खित
22.	खुद्दकसिक्खाटीका	—	संघरक्खित
23.	सम्बुद्धवण्णना	—	संघरक्खित
24.	विनयविनिच्छय	—	बुद्धसीह
25.	कंखावितरणि टीका	—	बुद्धनाग
26.	अभिधम्मत्थसंगह टीका	—	सारिपुत्त के एक शिष्य द्वारा
27.	धम्मपद अट्ठकथा	—	बुद्धघोस
28.	नेत्तिप्पकरण	—	कच्चायन
29.	सारत्थसालिनी	—	सारिपुत्त के एक शिष्य द्वारा

अध्याय 10—इस अध्याय में बुद्धवचनों के लेखन के माहात्म्य पर प्रकाश डाला गया है। तथागत ने चौरासी हजार धर्म स्कन्धों को प्रतिपादित कर एक प्रकार से चौरासी हजार बुद्धों को उत्पन्न किया है। प्रत्येक अक्षर को बुद्ध का रूप

समझते हुए ज्ञानी व्यक्ति द्वारा तिपिटक का लेखन किया जाना चाहिए, यही इस अध्याय का सन्देश है। तिपिटक के अक्षरों को लिखना बुद्ध-प्रतिमा बनाने के समान है। बुद्धवचनों के जनमानस में प्रचार-प्रसार हेतु पिटक के अक्षरों के लेखन के सुपरिणामों का वर्णन लेखक विविध प्रकार से करता है। वह ऐसा करने पर न केवल उत्तम ब्राह्मण एवं क्षत्रिय कुल में जन्म प्राप्त करने का आश्वासन देता है, बल्कि परलोक में उत्तम वाद्यों को बजाने वाली सुन्दर स्त्रियों से घिरे हुए आनन्दित होने का स्वप्न भी दिखलाता है। अध्याय के अन्त में वह तिपिटक लिखने के अतिरिक्त उन्हें लिखवाने, लिखे हुए का अनुमोदन करने, लिखने हेतु वेतन देने तथा लेखन-सामग्री के दान को भी अत्यन्त पुण्यदायक बताता है।

अध्याय 11—सद्धम्म-लेखन के पश्चात् सद्धम्म-श्रवण की महिमा का गुणगान किया गया है। यह परिच्छेद पाठकों के लिए नहीं श्रोताओं के लिए है। प्रारम्भ में ही कहा गया है— “अपने-अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आये हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।” स्पष्ट है लेखक वक्ता के रूप में किसी सभा में श्रोताओं को सम्बोधित कर रहा है, जिसका विवरण इस अध्याय में दर्ज है। नौवें प्रकरण तक तटस्थ भाव से इतिहास-वाचन करने एवं दसवें अध्याय में तिपिटक-लेखन का महत्त्व बताने के पश्चात् अब ग्यारहवें अध्याय में श्रोताओं के समक्ष मौलिक प्रस्तुति करते हुए लेखक उन्हें सद्धर्म के श्रवण हेतु प्रेरित करता है। वह कहता है कि चार पदों की गाथा का अनुमोदन मात्र भी सत्ताईस करोड़ रूपयों के दान से श्रेष्ठ है। इसी क्रम में वह अनेक रोचक प्रसंग श्रोताओं को सुनाता है, जिनकी विषयवस्तु एवं विरागयुक्त उद्गार सहज ही थेरीगाथा में बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा व्यक्त उद्गारों का स्मरण कराते हैं।

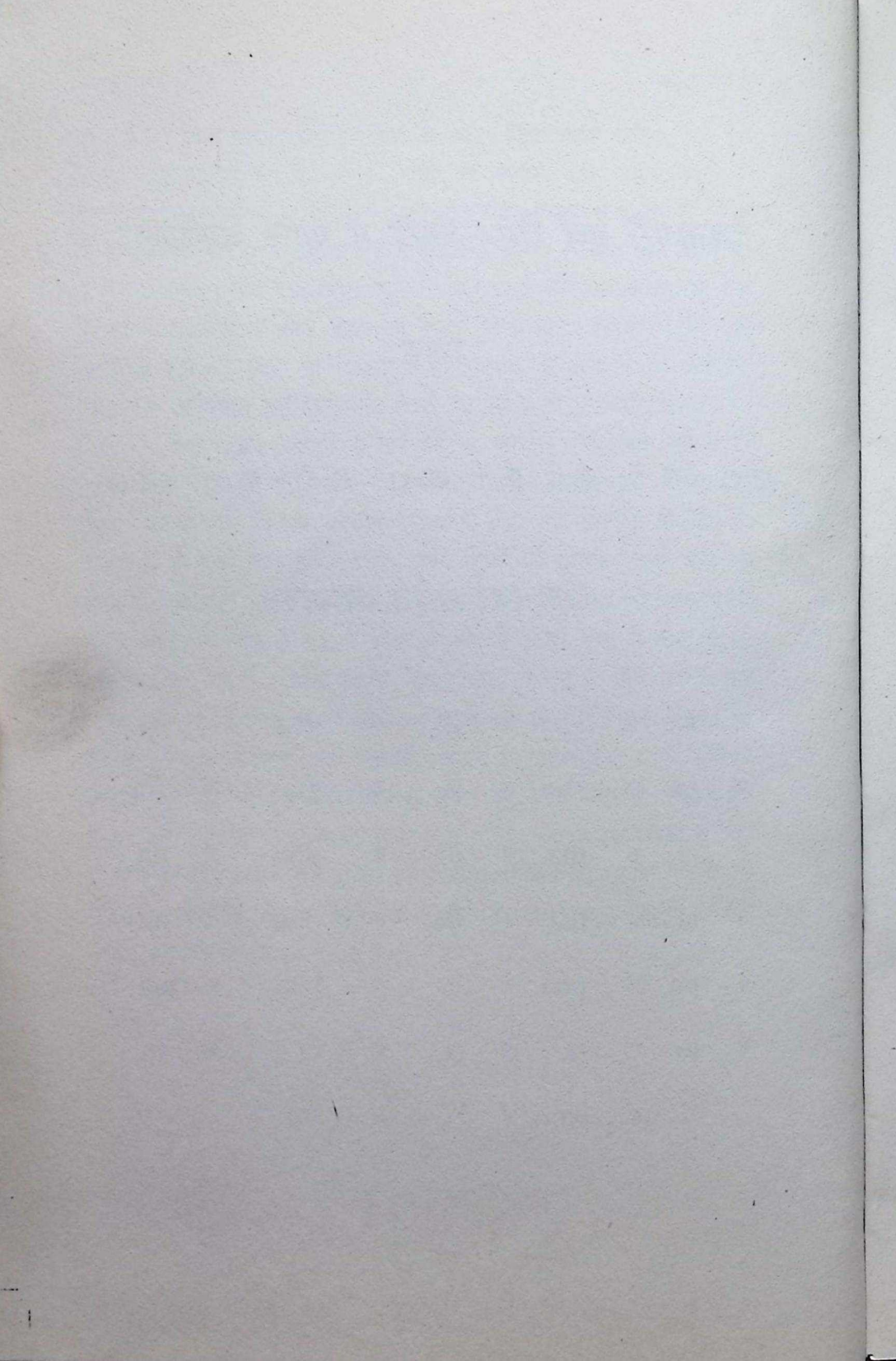
देवनागरी एवं रोमन लिपि में पालि वर्णमाला

स्वर

अ a आ ā इ i ई ī उ u ऊ ū ए e ओ o

‘अ’ स्वर सहित व्यञ्जन

क	ka	ख	kha	ग	ga	घ	gha	ङ	ṅa
च	ca	छ	cha	ज	ja	झ	jha	ञ	ña
ट	ṭa	ठ	ṭha	ड	ḍa	ढ	ḍha	ण	ṇa
त	ta	थ	tha	द	da	ध	dha	न	na
प	pa	फ	pha	ब	ba	भ	bha	म	ma
य	ya	र	ra	ल	la	व	va	स	sa
		ह	ha	ळ	ḷ	अं	aṃ		



सद्धम्मसङ्गहो

मूल पालि एवं हिन्दी अनुवाद

पठमो परिच्छेदो पठमसंगीतिवण्णना

१. “बुद्धं धम्मञ्च संघञ्च, नमस्सित्वा गुणालयं।
सद्धम्मसङ्गहं नाम, पवक्खामि समासतो॥”
२. “निपञ्चाकारपुञ्जस्स, कतस्स रतनत्तये।
आनुभावेन सोसेत्वा, अन्तराये ससेसतो॥”
३. “पिटकट्टकथामगं, आदाय सब्बअत्थतो।
जिनसासनवुद्धत्थं, पिटकत्तयलेखिनं॥”
४. “पसादजननत्थञ्च, धीमता रचितं इदं।
सुणाथ साधवो सब्बे, सोतुकामा इधालया।
सद्धम्मसङ्गहं नाम, परिपुण्णं अनाकुलं॥”

तदत्थदीपनत्थं अयमानुपुब्बिकथा—

अम्हाकं किर भगवा बोधिसत्तभूतो इतो कप्प सतसहस्साधिकानं चतुन्नं असंखेय्यानं मत्थके चतुवीसतिबुद्धानं सत्तिके लद्धव्याकरणो हुत्वा सम तिसंपारमियो पूरेत्वा परमाभिसम्बोधिं पत्वा बोधितो पट्ठाय पञ्चचत्ताळीससंवच्छरानि ठत्वा चतुरासीति धम्मकखन्धसहस्सानि देसेत्वा गणनपथातीते सत्ते संसारकन्तारतो सन्तारेत्वा याव सुभट्टपरिब्बाजकविनयनयनं ताव सब्बबुद्धकिच्चाणि निट्ठापेत्वा कुसिनारायं सालानं अन्तरे परिनिब्बानमञ्चके निपन्नो परिनिब्बायि। तेनाहु पोराणा—

५. “दीपंकरादयो पुरा, सम्बुद्धे चतुवीसति।
आराधेत्वा महावीरो, तेहि बोधाय ज्याकतो॥”
६. “पूरेत्वा पारमी सब्बा, पत्ते सम्बोधिमुत्तमं।
उत्तमो गोतमो बुद्धो, सत्ते दुक्खा पमोचयि॥”
७. “सब्बसम्बुद्धकिच्चं सो, कत्वा सत्तिकरं पदं।
परिनिब्बानमञ्चमिह, निब्बुतो लोकनायकोति॥”

परिनिब्बुते भगवति लोकनाथे तत्थ सन्निपतितानं सत्तन्नं भिक्खुसतसहस्सानं संघत्थेरो आयस्मा महाकस्सपत्थेरो सत्ताहपरिनिब्बुते भगवति सुभदेन बुद्धपब्बजितेन वुत्तवचनं समनुस्सरन्तो भिक्खू आमन्तेसि—

पहला परिच्छेद प्रथम संगीति का वर्णन

१. बुद्ध, धम्म और संघ—(इन) सदगुणों के आवास को प्रणाम करके मैं संक्षेप में 'सद्धम्मसङ्गह' को कहता हूँ।
- २-३. त्रिरत्नों^१ के प्रति की गई सेवा और पुण्य के माहात्म्य से बाधाओं को पूर्णतया समाप्त कर, पिटकों के समस्त अर्थों से युक्त अट्ठकथाओं के मार्ग को ग्रहण कर, बुद्ध के शासन की वृद्धि एवं त्रिपिटक के प्रतिलिपिकों में प्रसाद उत्पन्न करने के उद्देश्य से बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा इसकी रचना की गई।
४. इस आवास में (उपस्थित) समस्त सज्जनों! परिपूर्ण एवं स्पष्ट 'सद्धम्मसङ्गह' को सुनने की इच्छा रखते हुए श्रवण करो।

अर्थ के प्रकाशन हेतु यह आनुपूर्वी (सम्बन्धित) कथा है—आज से सौ हजार कल्पों एवं चार असंखेय्यों से भी अधिक पहले, हमारे भगवान् (बुद्ध), बोधिसत्त्व के रूप में (पूर्व के) चौबीस बुद्धों के समीप (बुद्ध होना) घोषित होकर के, सभी तीस पारमिताओं को पूर्ण कर, परम अभिसम्बोधि को प्राप्त कर, बोधि प्राप्ति के समय से पैंतालिस वर्षों तक जीवित रहकर चौरासी हजार धर्मस्कन्धों की देशना करते हुए अनगिनत प्राणियों को संसार (भवचक्र) रूपी जंगल से मुक्त कर सुभद्द परिव्राजक को दीक्षा देने तक बुद्धों के समस्त कर्तव्यों का निष्पादन कर कुसीनारा में साल वृक्षों के बीच परिनिर्वाण शय्या पर लेटे हुए परिनिवृत्त हुए।

इसलिए पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

५. प्राचीन काल में, दीपंकर आदि चौबीस बुद्धों को प्रसन्न करके महावीर ने (भविष्य में) बुद्ध होने की भविष्यवाणी प्राप्त की।
६. सभी पारमिताओं को पूर्ण कर, उत्तम सम्बोधि को प्राप्त कर श्रेष्ठ गौतम बुद्ध ने प्राणियों को दुःखों से मुक्त किया।
७. सभी सम्बुद्धों के कृत्य कार्यों को पूर्ण कर, शान्त पद को प्राप्त कर, वह लोकनायक परिनिर्वाणशय्या पर परिनिवृत्त हुए।

लोकनाथ, भगवान् के परिनिवृत्त हो जाने पर वहाँ एकत्र सात सौ हजार भिक्षुओं के संघ के स्थविर आयुष्मान् महाकस्सप थेर ने भगवान् के परिनिर्वाण के सप्ताह भर पश्चात् वृद्धावस्था में प्रव्रजित हुए सुभद्द भिक्षु द्वारा कहे गए वचनों^२ को स्मरण करते हुए भिक्षुओं को आमन्त्रित किया—

१. बुद्ध, धम्म एवं संघ।

२. बुद्ध के परिनिर्वाण हो जाने पर शोकमग्न वातावरण में सुभद्द नामक एक भिक्षु ने कहा—

“मयं, आवुसो, धम्मञ्च विनयञ्च संगायेय्यामा” ति। भिक्खू आहंसु—“तेन हि, भन्ते, थेरो भिक्खू उच्चिनातू”ति।

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो पञ्चअरहन्तभिक्खुसतानि उच्चिनित्वा—“राजगहे, आवुसो, वस्सं वसन्ता धम्मञ्च विनयञ्च संगायेय्यामा” ति। तेनाहु पोराणा—

८. “सत्तसतसहस्सानि, तेसु पामोक्खभिक्खवो।

थेरो महाकस्सपो च, संधत्थेरो तदा अहु॥”

९. “लोकनाथे दसबले, सत्ताहपरिनिब्बुते।

दुब्भासितं सुभद्दस्स, बुद्धस्स वचनं सरं॥”

१०. “भिक्खुपञ्चसते येव, महाखीणासवे वरे।

उच्चिनित्वा महाथेरो, महासंगीतिकातवे॥”

११. “वस्सानं दुतिये मासे, दुतिये दिवसे पन।

रुचिरे मण्डपे तस्मिं, थेरा सन्निपतिसु ते’ति॥”

अथ थेरा भिक्खू दुतिये दिवसे कतभत्तकिच्चावसाने पत्तचीवरं पटिसामेत्वा अजातसत्तुना कतधम्मसभायं सन्निपतिसु। एवं निसिन्ने तस्मिं भिक्खुसंधे महाकस्सपत्थेरो भिक्खू आमन्तेसि—“आवुसो, किं पठमं संगायेय्याम—धम्मं वा विनयं वा” ति? भिक्खू आहंसु—“भन्ते महाकस्सप, विनयो नाम बुद्धसासनस्स आयु, विनये ठिते सासनं ठितं होति, तस्मा पठमं विनयं संगायेय्यामा” ति।

“कं धुरं कत्वा विनयं संगायितब्बं” ति?

“आयस्मन्तं उपालिं धुरं कत्वा” ति आहंसु।

महाकस्सपत्थेरो विनयं पुच्छनत्थाय अत्तना व अत्तानं सम्मन्नि। उपालित्थेरो विनयं विस्सज्जनत्थाय अत्तना व अत्तानं सम्मन्नि। अथायस्मा उपालि उट्ठायासना एकसं उत्तरासंगं करित्वा थेरे भिक्खू वन्दित्वा धम्मासने निसीदित्वा दन्तखचितवीजनिं अगगहेसि।

‘आवुसों! हम धम्म तथा विनय का संगायन करें।’ भिक्षुओं ने उत्तर दिया—‘भन्ते! तब वरिष्ठतम भिक्षु का चयन करें।’

तब आयुष्मान् महाकस्सप ने पाँच सौ अर्हत भिक्षुओं का चयन कर ऐसा कहा—‘राजगृह में, आवुसों, वर्षावास करते हुए हम धम्म एवं विनय का संगायन करें।’

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

८. तब उन सात लाख प्रमुख भिक्षुओं में महाकस्सप थेर संघ के ज्येष्ठतम थे।
९. लोक के नाथ, दस बलों* से युक्त (बुद्ध) के परिनिर्वाण के सप्ताह भर बाद वृद्ध सुभद्र के दुर्वचनों को (आर्य महाकस्सप ने) स्मरण किया।
१०. महाथेर (महाकस्सप) ने महासंगीति करने हेतु पाँच सौ प्रमुख क्षीणास्रव भिक्षुओं का चयन किया।
११. वर्षा ऋतु के द्वितीय मास के द्वितीय दिन उस सुन्दर मण्डप में वे स्थविर एकत्र हुए।

इसके बाद थेर भिक्षुगण दूसरे दिन भोजन करके, पात्र—चीवर तैयार करके, अजातसत्तु द्वारा बनाए गए धर्म सभा में एकत्र हुए। इस प्रकार बैठे हुए उस भिक्षु संघ को महाकस्सप थेर ने सम्बोधित किया—‘आवुसों! किसका प्रथमतः संगायन किया जाए— धम्म या विनय?’ भिक्षुओं ने उत्तर दिया ‘भन्ते महाकस्सप! विनय बौद्ध शासन की आयु है, विनय के स्थित रहने पर शासन स्थित रहता है, इसलिए प्रथमतः विनय का संगायन करें।’

‘किसको उत्तरदायी कर विनय का संगायन करना चाहिए?’

‘आयुष्मान् उपालि को उत्तरदायी करके’ (उन्होंने) जवाब दिया। स्थविर महाकस्सप ने विनय सम्बन्धी प्रश्न पूछने के लिए स्वयं ही स्वयं को अधिकृत किया। उपालि थेर ने विनय सम्बन्धी उत्तर देने के लिए स्वयं ही स्वयं को अधिकृत किया। इसके बाद आयुष्मान् उपालि ने आसन से उठकर, एक कन्धे पर उत्तरासंग लेकर, ज्येष्ठ भिक्षुओं की वन्दना करके, धम्म—आसन पर बैठकर हाथी—दाँत से जटित पंखा (हाथ में) लिया।

‘बस आयुष्मानों! मत शोक करो! मत विलाप करो। हम उस महाश्रमण से अच्छी तरह से मुक्त हो गये। वह सदा ही यह कह कर हमें पीड़ित किया करता था। यह तुम्हें विहित है, यह तुम्हें विहित नहीं है? अब हम जो चाहेंगे, करेंगे; जो नहीं चाहेंगे, वह नहीं करेंगे।’ उसके इन वचनों ने पूरे संघ को चिन्तित कर दिया। विस्तृत वर्णन के लिए देखें—*पञ्चसतिका खन्धक, चुल्लवग्ग, विनयपिटक*।

* बोधिनी में देखें।

ततो आयस्मा महाकस्सपो थेरासने निसीदित्वा आयस्मन्तं उपालिं पुच्छि—

“पठमपाराजिकं, आवुसो, कत्थ पज्जत्तं” ति?

“वेसालियं, भन्ते” ति।

“कं आरब्भा” ति?

“सुदिन्नं कलन्दकपुत्तं आरब्भा” ति।

“किस्मिं वत्थुस्मिं” ति?

“मेथुनधम्मे” ति।

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो आयस्मन्तं उपालिं पठमस्स पाराजिकस्स वत्थुमि पुच्छि, निदानमि पुच्छि, पुग्गलमि पुच्छि, पज्जत्तिमि पुच्छि, अनुपज्जत्तिमि पुच्छि, आपत्तिमि पुच्छि, अनापत्तिमि पुच्छि।

यथा पठमस्स तथा दुतियस्स तथा ततियस्स तथा चतुत्थस्स वत्थुमि पुच्छि....पे० अनापत्तिमि पुच्छि। पुट्ठो पुट्ठो उपालित्थेरो विस्सज्जेसि। ततो इमानि चत्तारि पाराजिकानि पाराजिककण्डं नाम इदं ति सङ्गहं आरोपेत्वा ठपेसुं, तेरस्स संघादिसेसानि तेरस्स—कण्डं ति ठपेसुं, द्वे सिक्खापदानि अनियतानी ति ठपेसुं, तिस्रं सिक्खापदानि निस्सगियपाचित्तियानी ति ठपेसुं, द्वेनवुति सिक्खापदानि पाचित्तियानी ति ठपेसुं, चत्तारि सिक्खापदानि पाटिदेसनियानी ति ठपेसुं, पञ्चसत्तति सिक्खापदानि सेखियानी ति ठपेसुं, सत्त धम्मे अधिकरणसमथानी ति ठपेसुं। एवं महाविभंगसङ्गहं आरोपेत्वा भिक्खुनिविभंगे अट्ठसिक्खापदानि पाराजिककण्डं नाम इदं ति ठपेसुं, सत्तरस्स सिक्खापदानि सत्तरसकण्डं ति ठपेसुं, तिस्रं सिक्खापदानि निस्सगियपाचित्तियानी ति ठपेसुं, दसट्ठिसत्तसिक्खापदानि पाचित्तियानी ति ठपेसुं, अट्ठ सिक्खापदानि पाटिदेसनियानी ति ठपेसुं, पञ्चसत्तति सिक्खापदानि सेखियानी ति ठपेसुं, सत्तधम्मे अधिकरणसमथानी ति ठपेसुं। एवं भिक्खुनिविभंगसङ्गहं आरोपेत्वा एतेनेव उपायेन खन्धकपरिवारे पि आरोपेसुं। एवं एतं उभतोविभंग—खन्धक—परिवारं विनयपिटकं सङ्गहं आरूढ्हं सब्बं महाकस्सपत्थेरो पुच्छि, उपालित्थेरो विस्सज्जेसि। पुच्छाविस्सज्जनापरियोसाने पञ्चअरहन्तसत्तानि सङ्गहं आरोपितनियामेनेव गणसज्जायं अकंसु। विनयसङ्गहावसाने महापठविकम्पो अहोसि।

तब आयुष्मान् महाकस्सप ने थेर—आसन पर बैठकर आयुष्मान् उपालि से पूछा—

‘आवुस! प्रथम पाराजिक (नियम) कहाँ प्रज्ञप्त किया गया?’

‘भन्ते! वेसालि (वैशाली) में।’

‘किसके संदर्भ में?’

‘कलन्दक के पुत्र सुदिन् के संदर्भ में।’

‘किस विषय में?’

‘मैथुन के विषय में।’

इसके बाद आयुष्मान् महाकस्सप ने आयुष्मान् उपालि से प्रथम पाराजिक का विषय भी पूछा, कारण भी पूछा, व्यक्ति भी पूछा, प्रज्ञप्ति (नियम) भी पूछा, अनुप्रज्ञप्ति (उपनियम) भी पूछा, आपत्ति (अपराध) भी पूछा, अनापत्ति भी पूछा।

जिस प्रकार प्रथम, उसी प्रकार द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ का विषय भी पूछा..... अनापत्ति भी पूछा। उपालि थेर ने पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दिए। तब से (उन्होंने) इन चार पाराजिकों को ‘पाराजिककण्ड’ यह नामक रखकर निश्चित किया, तेरह संघादिसेसों को ‘तेरस—कण्ड’ नाम से निश्चित किया, दो शिक्षापदों को ‘अनियत’ नाम से निश्चित किया, तीस शिक्षापदों को ‘निसग्गियपाचित्तिय’ नाम से निश्चित किया, बयानबे शिक्षापदों को ‘पाचित्तिय’ नाम से निश्चित किया, चार शिक्षापदों को ‘पाटिदेसनीय’ नाम से निश्चित किया, पचहत्तर शिक्षापदों को ‘सेखिय’ नाम से निश्चित किया एवं सात धर्मों को ‘अधिकरणसमथ’ नाम से निश्चित किया। इस प्रकार महाविभंग संग्रह को तैयार कर भिक्खुनीविभंग में आठ शिक्षापदों को ‘पाराजिक कण्ड’ इस प्रकार निश्चित किया, सत्तर शिक्षापदों को ‘सत्तरसकण्ड’ नाम से निश्चित किया, तीस शिक्षापदों को ‘निसग्गियपाचित्तिय’ नाम से निश्चित किया, एक सौ छियासठ शिक्षापदों को ‘पाचित्तिय’ नाम से निश्चित किया, आठ शिक्षापदों को ‘पाटिदेसनीय’ नाम से निश्चित किया, पचहत्तर शिक्षापदों को ‘सेखिय’ नाम से निश्चित किया, सात धर्मों को ‘अधिकरणसमथ’ नाम से निश्चित किया। इस प्रकार उन्होंने भिक्खुनीविभंग संग्रह को तैयार कर इसी विधि से खन्धक, परिवार को भी तैयार किया। इस प्रकार दो विभंग, खन्धक और परिवार—इन सभी के संग्रह विनयपिटक को महाकस्सप थेर ने पूछा एवं उपालि थेर ने उत्तर दिया। प्रश्नोत्तर की समाप्ति पर पाँच सौ अर्हत्तों ने संग्रह का निर्धारित विधि से ही सामूहिक पाठ किया। विनय का संग्रह पूर्ण हो जाने पर पृथ्वी में महान् कम्पन हुआ।

अथ खो आयस्मा उपालित्थेरो दन्तखचितवीजनिं निक्खिपित्वा धम्मासनतो ओरोहित्वा बुद्धे भिक्खू वन्दित्वा अत्तनो पत्तासने निसीदि।
तेनाहु पोराणा—

१२. “महाथेरो पि अत्तानं, विनयं पुच्छितुं सयं।
सम्मन्नुपालित्थेरो च, विस्सज्जेतुं तं एव तु॥”
१३. “थेरासने निसीदित्वा, विनयं तं अपुच्छि सो।
धम्मासने निसीदित्वा, विस्सज्जेसि तं एव सो॥”
१४. “विनयञ्चू तमग्गेन, विस्सज्जितकमेन ते।
सब्बे सज्झायमकरं, विनये नयकोविदाति॥”

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो विनयं संगायित्वा धम्मं संगायितुकामो भिक्खू पुच्छि—“धम्मं संगायन्तेहि कं पुग्गलं धुरं कत्वा धम्मो संगायितब्बो” ति? भिक्खू “आनन्दत्थेरं धुरं कत्वा” ति आहंसु।

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो धम्मं पुच्छन्त्याय अत्तना व अत्तानं सम्मन्नि। आनन्दत्थेरो धम्मं विस्सज्जनत्याय अत्तना व अत्तानं सम्मन्नि। आयस्मा आनन्दो उट्ठायासना एकंसं चीवरं कत्वा थेरे भिक्खू वन्दित्वा धम्मासने निसीदित्वा दन्तखचितवीजनिं अगगहेसि। महाकस्सपत्थेरो थेरासने निसीदित्वा आनन्दत्थेरं धम्मं पुच्छि—

- “ब्रह्मजालं, आवुसो आनन्द, कत्थ भासितं”ति?
“अन्तरा च, भन्ते, राजगहं अन्तरा च नालन्दं राजागारके अम्बलट्टिकायं”ति।
“कं आरब्भा” ति।

“सुप्पियञ्च परिब्बाजकं ब्रह्मदत्तञ्च माणवकं” ति।

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो आयस्मन्तं आनन्दं ब्रह्मजालस्स निदानम्पि पुच्छि, पुग्गलम्पि पुच्छि।

ततो परं—“सामञ्जफलं पन, आवुसो आनन्द, कत्थ भासितं” ति आदिना पुच्छि।

इसके पश्चात् आयुष्मान् उपालि थेर हाथी दाँत से जटित पंखे को एक तरफ रखकर धम्म—आसन^१ से उतरकर ज्येष्ठ भिक्षुओं की वन्दना कर स्वयं के लिए निर्धारित आसन पर बैठ गए।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१२. महाथेर (महाकस्सप) ने स्वयं को विनय (सम्बन्धी प्रश्न) पूछने के लिए तथा उपालि थेर को उत्तर देने के लिए अधिकृत किया।
१३. स्थविर के आसन पर बैठकर उन्होंने उससे विनय (सम्बन्धी प्रश्न) पूछे, धम्म—आसन पर बैठ कर उसने (उपालि) उत्तर दिया।
१४. विनय विशेषज्ञ ने क्रम से सभी को स्पष्ट किया। सभी (भिक्षुओं) ने आचार (प्रथा) को जानते हुए विनय का पाठ किया।

इसके पश्चात् आयुष्मान् महाकस्सप ने विनय का संगायन करके धम्म के संगायन की इच्छा से भिक्षुओं से पूछा—‘धम्म का संग्रह करने हेतु किस व्यक्ति को उत्तरदायी बनाकर धम्म का संगायन किया जाए?’ भिक्षुओं ने जवाब दिया—‘आनन्द थेर को उत्तरदायी करके।’

इसके पश्चात् आयुष्मान् महाकस्सप ने धम्म सम्बन्धी प्रश्न पूछने के लिए स्वयं ही स्वयं को अधिकृत किया। आनन्द थेर ने धम्म सम्बन्धी उत्तर देने हेतु स्वयं ही स्वयं को अधिकृत किया। आयुष्मान् आनन्द ने आसन से उठकर, एक कन्धे पर चीवर लेकर, ज्येष्ठ भिक्षुओं की वन्दना करके, धम्म—आसन पर बैठकर हाथी—दाँत से जटित पंखा (हाथ में) लिया। महाकस्सप थेर ने थेर—आसन पर बैठकर आनन्द थेर से धम्म पूछा—

‘आवुस आनन्द! ब्रह्मजाल^३ कहाँ भाषित किया गया?’

‘भन्ते! राजगृह एवं नालन्दा के मध्य राज—निवास के अम्बलट्टिका में।’

‘किसके संदर्भ में?’

‘सुप्पिय परिव्राजक एवं ब्रह्मदत्त माणवक के संदर्भ में।’

इसके बाद आयुष्मान् महाकस्सप ने आयुष्मान् आनन्द से ब्रह्मजाल का कारण पूछा, व्यक्ति भी पूछा।

उसके उपरान्त—‘सामञ्जफल^३, आवुस आनन्द, कहाँ भाषित किया गया?’ आदि भी पूछा।

१. उपदेश करने के समय उपदेशक का आसन।

२. दीघनिकाय का प्रथम सुत्त।

३. दीघनिकाय का द्वितीय सुत्त।

“राजगहे, भन्ते, जीवकम्बवने” ति।

“केन सद्धिं” ति।

“अजातसत्तुवेदेहिपुत्तेन सद्धिं” ति।

अथ खो आयस्मा महाकस्सपो आयस्मन्तं आनन्दं सामञ्जफलस्स निदानम्पि पुच्छि, पुग्गलम्पि पुच्छि।

एतेनेव उपायेन ब्रह्मजालसुत्तादि—चतुत्तिससुत्तपरिमाणं दीघनिकायं संगायित्वा अयं दीघनिकायो नामा ति वत्वा सज्झायवसेन आयस्मन्तं आनन्दं पटिच्छापेसि—“आवुसो, इमं तुय्हं निस्सितके वाचेही” ति।

ततो परं मूलपरियायसुत्तादि—दियड्डसतञ्चेव—सुत्तपरिमाणं मज्झिमनिकायं संगायित्वा धम्मसेनापति—सारिपुत्तत्थेरस्स निस्सितके पटिच्छापेसि—“इमं तुम्हे परिहरथा”ति।

ततो परं ओघतरणसुत्तादि—सतसहस्ससत्तसतद्वासट्ठिपरिमाणं संयुत्तनिकायं संगायित्वा महाकस्सपत्थेरं पटिच्छापेसि—“भन्ते, इमं तुम्हाकं निस्सितके वाचेथा”ति।

ततो परं चित्तपरियादानसुत्तादि—नवसहस्सपञ्चसतसत्तपञ्जाससुत्तपरिमाणं अंगुत्तरनिकायं संगायित्वा अनुरुद्धत्थेरं पटिच्छापेसुं—“इमं तुम्हाकं निस्सितके वाचेथा” ति।

ततो परं खुद्दकपाठ—धम्मपद—उदान—इतिवुत्तक—सुत्तनिपात—विमानवत्थु—पेतवत्थु—थेरगाथा—थेरीगाथा—जातक—निद्देस—पटिसम्भिता—अपदान—बुद्धवंस—चरियापिटकवसेन पण्णरसप्पभेदं खुद्दकनिकायं संगायित्वा “इदं सुत्तपिटकं नामा” ति ठपेसुं।

ततो परं धम्मसंगणि—विभंग—धातुकथा—पुग्गलपञ्जत्ति—कथावत्थु—यमक—पट्टानमहा पकरणवसेन सत्तप्पभेदं पकरणं संगायित्वा “इदं अभिधम्मपिटकं नामा” ति ठपेसुं। एवं सङ्गहं आरूळहं सब्बं महाकस्सपत्थेरो पुच्छि, आनन्दत्थेरो विस्सज्जेसि। पुच्छाविस्सज्जनापरियोसाने पञ्चअरहन्तसतानि गणसज्झायं अकंसु, धम्मसङ्गहावसाने महापठविकम्पो अहोसि।

अथ खो आयस्मा आनन्दो दन्तखचितवीजनिं निक्खिपित्वा धम्मासनतो ओरोहित्वा बुद्धे भिक्खू वन्दित्वा अत्तनो पत्तासने निसीदि।

‘राजगृह में जीवक के अम्बवन (आमों के वन) में।’

‘किसको (भाषित किया गया)?’

‘वैदेही पुत्र अजातसत्तु को।’

इसके बाद आयुष्मान् महाकस्सप ने आयुष्मान् आनन्द से सामञ्जस्यफल (सुत्त) का कारण भी पूछा, व्यक्ति भी पूछा।

इस प्रकार ब्रह्मजालसुत्त आदि चौतीस सुत्तों के संकलन ‘दीघनिकाय’ का संगायन करके ‘यह दीघनिकाय है’ ऐसा कहकर पाठ करने हेतु आयुष्मान् आनन्द को सौंपा गया—‘आवुस! इसका तुम अनुयायियों में पाठ करो।’

इसके पश्चात् मूलपरियायसुत्त आदि एक सौ बावन सुत्तों के संकलन ‘मज्झिमनिकाय’ का संगायन करके धम्मसेनापति सारिपुत्त के अनुयायियों को सौंपा गया (यह कहते हुए कि)—‘तुम लोग इसका संरक्षण करो।’

इसके पश्चात् ओघतरणसुत्त आदि सात हजार सात सौ बासठ सुत्तों के संकलन ‘संयुत्तनिकाय’ का संगायन करके महाकस्सप थेर को सौंपा गया (यह कहते हुए कि)—‘भन्ते! इसका आप अपने अनुयायियों के बीच पाठ करें।’

इसके पश्चात् चित्तपरियादानसुत्त आदि नौ हजार पाँच सौ सत्तावन सुत्तों के संकलन ‘अंगुत्तरनिकाय’ का संगायन करके अनुरुद्ध थेर को सौंपा गया (यह कहते हुए कि)—‘इसका आप अपने अनुयायियों के बीच पाठ करें।’

तत्पश्चात् खुद्दकपाठ, धम्मपद, उदान, इतिवुत्तक, सुत्तनिपात, विमानवत्थु, पेतवत्थु, थेरगाथा, थेरीगाथा, जातक, निद्देस, परिसम्भिदा, अपदान, बुद्धवंस एवं चरियापिटक—इन पन्द्रह भागों में विभक्त खुद्दकनिकाय का संगायन कर (समस्त सुत्तों के संकलन को) ‘यह सुत्तपिटक है’ ऐसा निश्चित किया गया।

इसके पश्चात् धम्मसंगणि, विभंग, धातुकथा, पुग्गलपञ्जत्ति, कथावत्थु, यमक, पट्ठानमहाप्पकरण—इन सात विभिन्न भागों का संगायन कर ‘यह अभिधम्मपिटक है’ ऐसा निश्चित किया। इस प्रकार इस संग्रह के सम्बन्ध में सब कुछ महाकस्सप थेर ने पूछा तथा आनन्द थेर ने उत्तर दिया। प्रश्नोत्तर समाप्त हो जाने पर पाँच सौ अर्हत्तों ने (उसका) सामूहिक पाठ किया, धम्म का संग्रह पूर्ण होने पर पृथ्वी में महान् कम्पन हुआ।

आयुष्मान् आनन्द हाथी—दाँत से जटित पंखे को एक ओर रखकर धम्म—आसन से उतर कर ज्येष्ठ भिक्षुओं की वन्दना करके स्वयं के लिए निर्धारित आसन पर बैठ गए।

तेनाहु पोरणा—

१५. “अगं बहुस्सुतादीनं, कोसारक्खं महेसिनो।

सम्मन्नित्वान अत्तानं, थेरो धम्मं अपुच्छि सो॥”

१६. “तथा सम्मन्नि अत्तानं, धम्मासनगतो सयं।

विस्सज्जेसि तमानन्द—थेरो धम्मं असेसतो ति॥”

सब्बं पि बुद्धवचनं रसवसेन एकविधं, धम्मविनयवसेन दुविधं, पठम— मज्झिम— पच्छिमवसेन तिविधं तथा पिटकवसेन, निकायवसेन पञ्चविधं, अंगवसेन नवविधं, धम्मक्खन्धवसेन चतुरासीतिसहस्सविधं ति वेदितब्बं।

कथं रसवसेन एकविधं?

यं हि भगवता सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झित्वा याव अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बायन्तेन एत्थन्तरे पञ्चचत्ताळीसवस्सानि देव—मनुस्स—नाग—यक्खादयो अनुसासन्तेन पच्चवेक्खन्तेन वा वुत्तं सब्बं तं एकरसं विमुत्तिसमेव होति। एवं रसवसेन एकविधं।

कथं धम्मविनयवसेन दुविधं?

विनयपिटकं विनयो, अवसेसबुद्धवचनं धम्मो ति। एवं धम्मविनयवसेन दुविधं।

कथं पठम—मज्झिम—पच्छिमवसेन तिविधं? तत्थ—

“अनेकजातिसंसारं, सन्धाविस्सं अनिब्बिसं।

गहकारकं गवेसन्तो, दुक्खा जाति पुनप्पुनं॥”

“गहकारक दिट्ठोसि, पुन गेहं न काहसि।

सब्बा ते फासुका भग्गा, गहकूटं विसंखितं।

विसंखारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा ति॥”

इदं पठमबुद्धवचनं।

केचि—“यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा” ति खन्धके उदानगाथमाहु। सा पन पाटिपददिवसे सब्बञ्जुभावप्पत्तस्स सोमनस्समयजाणेन पच्चायाकारं पच्चवेक्खन्तस्स उप्पन्ना उदानगाथा ति वेदितब्बा ति इदं पठमबुद्धवचनं वदन्ति।

यं परिनिब्बानकाले अभासि—“हन्द दानि, भिक्खवे, वयधम्मा संखारा-अप्पमादेन सम्पादेथा” ति इदं पच्छिमबुद्धवचनं।

इसीलिए पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१५. थेर (महाकस्सप) ने (प्रश्न पूछने हेतु) स्वयं को अधिकृत कर बहुश्रुतों के अग्र, महर्षि (बुद्ध) के वचनों के रक्षक उनसे (आनन्द) धम्म को पूछा।

१६. उसी प्रकार आनन्द थेर ने स्वयं स्वीकार कर धम्म—आसन ग्रहण कर सम्पूर्ण धम्म सम्बन्धित उत्तर दिया।

समस्त बुद्धवचन को सार की दृष्टि से एक; धम्म एवं विनय के भेद से दो; आदि, मध्य तथा अन्त एवं पिटक की दृष्टि से तीन; निकाय के भेद से पाँच; अंग के भेद से नौ तथा धम्म—स्कन्ध* के भेद से चौरासी हजार जानना चाहिए।

किस प्रकार यह सार की दृष्टि से एक है?

जो कुछ भी भगवान् (बुद्ध) ने सम्यक् सम्बोधि प्राप्ति से अनुपाधिशेष निर्वाणधातु, परिनिर्वाण प्राप्ति के बीच में पैंतालिस वर्षों तक अनुशासन अथवा चिन्तन के द्वारा देव, मनुष्य, नाग एवं यक्ष आदि को कहा, उसका सार एक ही है—विमुक्ति। इस प्रकार सार की दृष्टि यह (बुद्धवचन) एक है।

किस प्रकार धम्म तथा विनय के भेद से (बुद्धवचन) द्विविध है?

विनयपिटक का अभिप्राय विनय है, अवशेष बुद्धवचन धम्म है। इस प्रकार धम्म तथा विनय के भेद से (बुद्धवचन) दो प्रकार का है।

किस प्रकार आदि, मध्य एवं अन्त के भेद से यह त्रिविध है?

वहाँ (ऐसा कहा गया है)—

‘बिना रूके अनेक जन्मों तक संसार में दौड़ता रहा। (इस काया रूपी) गृह को बनाने वाले (तृष्णा) को खोजते पुनः पुनः दुःख (मय) जन्म में पड़ता रहा। हे गृहकारक! (तृष्णा!) मैंने तुझे देख लिया, (अब) फिर तू घर नहीं बना सकेगा। तेरी सभी कड़ियाँ भग्न हो गईं, गृह का शिखर गिर गया। चित्त संस्काररहित हो गया, तृष्णा—क्षय (अर्हत्व) प्राप्त हो गया।’

यह प्रथम बुद्धवचन है।

‘जब (सन्तों को) धम्म प्रकट होते हैं’ ऐसा (बुद्ध ने) खन्धक में उदान—गाथा कहा है। वह प्रतिपदा दिवस पर सर्वज्ञता प्राप्त, सौमनस्य युक्त ज्ञान से कार्य—कारण सम्बन्ध पर मनन से उत्पन्न उदान—गाथा है, अतः कुछ लोग इसे प्रथम बुद्धवचन कहते हैं।

परिनिर्वाण के समय जो (बुद्ध ने) कहा—‘सुनो भिक्षुओं! संस्कार (कृतवस्तु) व्यय धर्मा (नाशवान) है; अप्रमाद के साथ (जीवन के लक्ष्य का) संपादन करो’ यह बुद्ध का अन्तिम वचन है।

उभिन्नं अन्तरे यं वुत्तं एतं मज्झिमबुद्धवचनं। एवं पठम—मज्झिम—पच्छिमवसेन
तिविधं।

कथं पिटकवसेन तिविधं?

सब्बं पि हेतं विनयपिटकं, सुत्तपिटकं, अभिधम्मपिटकं ति तिप्पभेदमेव होति।
तेनाहु पोराणा—

१७. “तेसु पाराजिकं कण्डं, पाचित्तियं अथापरं।
भिक्षुणीनं विभंगो च, महावग्गो तथापरो।
चूल्लवग्गो परिवारो, विनयपिटकं मतं ॥”

इदं विनयपिटकं नाम।

१८. “चतुत्तिसेव सुत्तानि, तिवग्गो यस्स सङ्गहो।
एस दीघनिकायो ति, पठमो अनुलोमिको ॥”

१९. “दियङ्कुसतसुत्तन्ता, द्वे च सुत्तानि यत्थ सो।
निकायो मज्झिमो पञ्च—दसवग्गपरिग्गहो ॥”

२०. “सत्तसुत्तसहस्सानि, सत्तसुत्तसत्तानि च।
द्वासड्डिचेव सुत्तानि, एसो संयुत्तसंगहो ॥”

२१. “नव सुत्तसहस्सानि, पञ्च सुत्तसत्तानि च।
सत्तपञ्चाससुत्तानि, संखा अंगुत्तरे अयं ॥”

२२. “खुद्दकपाठो धम्मपदं, उदानं इतिवुत्तकं।
सुत्तनिपातो विमानं, पेतवत्थु अथापरं ॥”

२३. “थेरा थेरी च जातकं, निदेसो पटिसम्भिदा।
अपदानं बुद्धवसो, चरियापिटकमेव च।
पण्णरसप्पभेदो‘यं, निकायो खुद्दको मतो ॥”
इदं सुत्तन्तपिटकं नाम।

२४. “धम्मसंगणि विभंगो च, धातुकथा तथापरं।
तथा पुग्गलपञ्जत्ति, कथावत्थुप्पकरणं ॥”

२५. “यमकं अथ पड्डानं, इमे सत्तप्पभेदतो।
अभिधम्मो ति पिटकं, सम्मासम्बुद्धदेसितं ति ॥”
इदं अभिधम्मपिटकं नाम। एवं पिटकवसेन तिविधं होति।
कथं निकायवसेन पञ्चविधं होति?

इन दो (वचनों) के बीच जो कुछ भी कहा गया, वह बुद्ध का मध्य वचन है। इस प्रकार (बुद्धवचन) आदि, मध्य एवं अंतिम के भेद से त्रिविध हैं।

किस प्रकार पिटक के भेद से त्रिविध हैं?

समस्त बुद्धवचन विनयपिटक, सुत्तपिटक एवं अभिधम्मपिटक—इस भेद से तीन प्रकार के हैं।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१७. उनमें विनयपिटक का अभिप्राय पाराजिक कण्ड, पाचित्तिय, भिक्खुनीविभंग, महावग्ग, चूल्लवग्ग तथा परिवार से है।
यह विनयपिटक है।
१८. चौतीस सुत्त, जिनका संग्रह तीन वर्गों में विभक्त है, क्रम से प्रथम यह दीघनिकाय कहलाता है।
१९. एक सौ बावन सुत्तों का संग्रह, पन्द्रह वर्गों में विभक्त यह मज्झिमनिकाय कहलाता है।
२०. सात हजार, सात सौ बासठ सुत्तों का संग्रह, यह संयुक्त (निकाय) कहलाता है।
२१. नौ हजार, पाँच सौ और सत्तावन—अंगुत्तर (निकाय) में यह सुत्तों की संख्या है।
- २२—२३. खुद्दकपाठ, धम्मपद, उदान, इतिवुत्तक, सुत्तनिपात, विमान (वत्थु) तथा पेतवत्थु, थेर (गाथा) एवं थेरी (गाथा), जातक, निद्देस, पटिसम्भिदा (मग्ग), अपदान, बुद्धवंस तथा चरियापिटक—इन पन्द्रह भेदों वाला खुद्दकनिकाय है।
यह (विनय पिटक के बाद के सभी ग्रन्थों का संग्रह) सुत्तन्तपिटक है।
- २४—२५. धम्मसंगणि, विभंग, धातुकथा, पुग्गलपञ्जति, कथावत्थुप्पकरण, यमक तथा पट्ठान—सम्यक् सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित यह सात भेदों वाला अभिधम्मपिटक है।
यह अभिधम्मपिटक है। इस प्रकार पिटक के भेद से (बुद्धवचन) तीन प्रकार के होते हैं।
कैसे निकाय भेद से पाँच प्रकार के होते हैं?

दीघनिकायो, मज्झिमनिकायो, संयुत्तनिकायो, अंगुत्तरनिकायो, खुदकनिकायो ति।
तेनाहु पोराणा—

२६. “उपेत्वा चतुरो पेते, निकाये दीघ—आदिके।
तदज्जं बुद्धवचनं, निकायो खुदको मतो’ति॥”
एवं निकायवसेन पञ्चविधं होति।
कथं अंगवसेन नवविधं?

सब्बमेव हिदं सुत्तं, गेय्यं, वेय्याकरणं, गाथा, उदानं, इतिवुत्तकं, जातकं, अब्भुतधम्मं, वेदल्लं ति नवंगण्यभेदं होति। तत्थ उभतो—विभंग—निदेस—खन्धकपरिवारादि, सुत्तनिपाते मंगलसुत्त—रतनसुत्त—नाळकसुत्त—तुवटकसुत्तानि, अज्जानि पि च सुत्तनामकं तथागतवचनं सुत्तं ति वेदितब्बं। सब्बं पि सगाथकसुत्तं गेय्यं ति वेदितब्बं, विसेसेन संयुत्तके सकलो पि सगाथकवग्गो। सकलं पि अभिधम्मपिटकं, निग्गाथकसुत्तं, यं च अज्जम्पि अट्ठहि अंगेहि असङ्गहितं बुद्धवचनं तं वेय्याकरणं ति वेदितब्बं। धम्मपदं, थेरगाथा, थेरीगाथा, सुत्तनिपाते सुत्तनामिका सुद्धिकगाथा गाथा ति वेदितब्बा।

सोमनस्सजाणमयिकगाथापटिसंयुत्ता द्वेअसीति सुत्तन्ता उदानं ति वेदितब्बं। “वुत्तं हेतं भगवता”ति आदिनयपवत्ता दसुत्तरसतसुत्तन्ता इतिवुत्तकं ति वेदितब्बं। अपण्णकजातकादीनि पज्जासाधिकानि पञ्चजातकसतानि जातकं ति वेदितब्बं। “चत्तारो मे, भिक्खवे, अच्छरियब्भुतधम्मा आनन्दे” ति आदिनयपवत्ता सब्बे पि अच्छरियब्भुत—धम्मपटिसंयुत्तसुत्तन्ता अब्भुतधम्मं ति वेदितब्बं। चुल्लवेदल्ल—महावेदल्ल—सम्मादिट्ठि—सक्कपञ्च—संखारभाजनिय—महापुण्णमसुत्तन्ता सब्बे पि वेदज्ज तुट्ठिज्ज लद्धा पुच्छिता सुत्तन्ता वेदल्लं ति वेदितब्बं। एवं अंगवसेन नवविधं होति।

कथं धम्मकखन्धवसेन चतुरासीतिसहस्सविधं?
तेनाहु पोराणा—

२७. “द्वासीतिं बुद्धतो गण्हि, द्वेसहस्सानि भिक्खुतो ।
चतुरासीतिसहस्सानि, ये मे धम्मा पवत्तिनो ति ॥”

२८. “एकवीससहस्सानि, खन्धा विनयपिटके ।
एकवीससहस्सानि, खन्धा सुत्तन्तपिटके ।
द्वेचत्ताळीस सहस्सानि, खन्धा अभिधम्मपिटके’ ति ॥”

एवं परिदीपन—धम्मकखन्धवसेन चतुरासीतिसहस्सपण्णभेदं होति।

दीघनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुत्तनिकाय, अंगुत्तरनिकाय, एवं खुद्दकनिकाय इस प्रकार (ये पाँच हैं)।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

२६. दीघ आदि चार निकायों को छोड़कर शेष बुद्धवचन खुद्दकनिकाय हैं।

इस प्रकार निकाय भेद से (बुद्धवचन) पाँच प्रकार के होते हैं।

कैसे अंग भेद से (बुद्धवचन) नौ प्रकार के होते हैं?

सभी (बुद्धवचन) सुत्त, गेय्य, वेय्याकरण, गाथा, उदान, इतिवुत्तक, जातक, अब्भुतधम्म एवं वेदल्ल—इस प्रकार नौ अंग भेद वाले होते हैं। यहाँ दोनों विभंग (भिक्षुविभंग एवं भिक्षुनीविभंग), निद्देस, खन्धक, परिवार आदि, सुत्तनिपात में मंगलसुत्त, रतनसुत्त, नालकसुत्त, तुवटकसुत्त तथा अन्य भी सुत्त नामक बुद्धवचनों को 'सुत्त' जानना चाहिए। सभी गाथा युक्त सुत्तों को 'गेय्य' जानना चाहिए। विशेष रूप से संयुत्तनिकाय के सम्पूर्ण सगाथवग को। सम्पूर्ण अभिधम्मपिटक, गाथारहित सुत्त तथा बुद्ध के अन्य वचन, जो आठ अंगों में समाहित नहीं होते, को 'वेय्याकरण' जानना चाहिए। धम्मपद, थेरगाथा, थेरीगाथा, सुत्तनिपात में बिना 'सुत्त' नाम वाले तथा शुद्ध रूप से गाथा वाले परिच्छेद को 'गाथा' जानना चाहिए।

सौमनस्य ज्ञान से युक्त गाथाओं वाले बयासी सुत्तों को 'उदान' जानना चाहिए। 'ऐसा भगवान् (बुद्ध) द्वारा कहा गया'—इस प्रकार से प्रारम्भ होने वाले एक सौ बारह सुत्तों को 'इतिवुत्तक' जानना चाहिए। अपण्णक जातक आदि पाँच सौ पचास जातकों को 'जातक' जानना चाहिए। 'भिक्षुओं। आनन्द में ये चार आश्चर्यजनक तथा अद्भुत धर्म हैं' इस प्रकार से प्रारम्भ होने वाले सभी आश्चर्यजनक एवं अद्भुत बातों से सम्बन्धित सुत्तों को 'अब्भुतधम्म' जानना चाहिए। चुल्लवेदल्ल, महावेदल्ल, सम्मादिट्ठि, सक्कपञ्च, संखारभाजनिय, महापुण्णम सुत्त—इन सभी ज्ञान एवं सन्तोष प्राप्ति के साथ कहे गये सुत्तों को 'वेदल्ल' जानना चाहिए। इस प्रकार अंगभेद से (बुद्धवचन) नौ प्रकार के होते हैं।

किस प्रकार धम्म—स्कन्धों के भेद से (बुद्धवचन) चौरासी हजार होते हैं?

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

२७. बुद्ध द्वारा उपदेशित बयासी हजार और भिक्षुओं द्वारा दो हजार—ये चौरासी हजार धम्म मैंने सीखे हैं।

२८. विनयपिटक में इक्कीस हजार स्कन्ध, सुत्तन्तपिटक में इक्कीस हजार स्कन्ध तथा अभिधम्मपिटक में बयालीस हजार स्कन्ध हैं।

इस प्रकार व्याख्या की दृष्टि से धम्म—स्कन्ध चौरासी हजार होते हैं।

तत्थ एकानुसन्धिकं सुत्तं एको धम्मक्खन्धो, यं अनेकानुसन्धिकं सुत्तं अनेक-
 धम्मक्खन्धो। तत्थ अनुसन्धिवसेन धम्मक्खन्धगणना। गाथाखन्धेषु पञ्चपुच्छनं एको
 धम्मक्खन्धो, विस्सज्जनं एको धम्मक्खन्धो। अभिधम्मे एकमेकं तिकदुकभाजनं,
 एकमेकं च चित्तवारभाजनं एको धम्मक्खन्धो। विनये अत्थि वत्थु, तस्स तस्स
 सिक्खापदस्स वीतिकमवत्थु, अत्थि मातिका, अत्थि पदभाजनियं, अत्थि अन्तरापत्ति,
 अत्थि अनापत्ति, अत्थि तिकच्छेदो। तत्थ एकमेको कोट्टासो एकमेको धम्मक्खन्धो ति
 वेदितब्बो। एवं धम्मक्खन्धवसेन चतुरासीतिसहस्सविधं होति। एवमादि अनेकप्यभेदं
 बुद्धवचनं संगायन्तेन महाकस्सपपमुखेन वसीगणेन—“अयं धम्मो, अयं विनयो” ति
 आदिना नयप्यभेदं ववत्थपेत्वा सत्तहि मासेहि संगीतं। संगीतिपरियोसाने चस्स—“इदं
 महाकस्सपत्थेरेन दसबलस्स सासनं पञ्चवस्ससहस्सपरिमाणकालप्पवत्तनसमत्थं कतं”
 ति—सज्जातप्पमोदा साधुकारं विय ददमाना अयं महापठवी उदकपरियन्तं कत्वा
 अनेकप्यकारं संकम्पि, सम्पकम्पि सम्पवेधि, अनेकानि च अच्छरियानि पातुरहेसुं।
 अयं पठममहासंगीति नाम। तेनाहु पोराणा—

या लोके—

२९. “सतेहि पञ्चहि कता, तेन पञ्चसता ति च ।
 थेरेहेव कतत्ता च, ‘थेरिका’ ति पवुच्चतीति॥”
३०. “एवं सत्तहि मासेहि, धम्मसंगीति निड्डिता।
 सब्बलोकहितत्थाय, सब्बलोकहितेसिहि ॥”
३१. “महाकस्सपत्थेरेन, इदं सुगतसासनं।
 पञ्चवस्ससहस्सानि, समत्थं वत्तते कतं ॥”
३२. “अतीव जातपामोज्जा, सन्धारकजलन्तिका।
 संगीतिपरियोसाने, छधा कम्पि महामही ॥”
३३. “अच्छरियानि पाहेसुं, लोके नेकानि नेकधा।
 थेरेहेव कतत्ता च, थेरियायं परम्परा॥”
३४. “पठमं सङ्गहं कत्वा, कत्वा लोकहितं बहुं ।
 ते यावतायुकं ठत्वा, थेरा सब्बे पि निब्बुताति॥”
३५. “एवं अनिच्चतं जम्मिं, जत्वा दुरभिसंभवं।
 तुवटं वायमे धीरे, यं निच्चं अमतं पदंति॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे
 पठममहासंगीतिवण्णना
 निड्डिता।

यहाँ एक विषय पर आधारित सुत्त एक धम्म—स्कन्ध है, अनेक विषयों से युक्त सुत्त अनेक धम्म—स्कन्धों वाला है। यहाँ विषय के अनुसार धम्म—स्कन्धों की गणना होती है। गाथा स्कन्धों में पूछा गया प्रश्न एक धम्म—स्कन्ध है, उत्तर एक धम्म—स्कन्ध है। अभिधम्म में प्रत्येक तिक एवं दुक् विभाजन, प्रत्येक चित्त के अनुसार विभाजन एक धम्म—स्कन्ध है। विनय में विषय है, इन उन शिक्षापदों के उल्लंघन सम्बन्धी विषय हैं, मातिका (विषयसूची) है, पदों का विभाजन है, अन्तरापत्ति है, अनापत्ति है, तिक भेद है। यहाँ प्रत्येक भाग को एक धम्म—स्कन्ध समझना चाहिए। इस प्रकार धम्म—स्कन्ध के भेद से (बुद्धवचन) चौरासी हजार प्रकार के होते हैं। इस प्रकार अनेक भेदों से बुद्धवचनों का संगायन करते हुए आत्मनियन्त्रितों के समूह, जिसके प्रमुख महाकस्सप थे, द्वारा—‘यह धम्म है, यह विनय है’—आदि प्रकार से निश्चित कर सात मास तक पाठ किया गया। संगीति की समाप्ति पर—‘महाकस्सप थेर द्वारा दसबल (बुद्ध) का शासन पाँच हजार वर्षों तक के समय के लिए प्रवर्तित होने हेतु समर्थ कर दिया गया’, इस बात से उत्पन्न प्रसन्नता के साथ साधुवाद देने के समान जल से घिरी हुई यह महान् पृथ्वी अनेक बार प्रकम्पित हुई, तीव्र रूप से कम्पायमान हुई तथा अनेक प्रकार के आश्चर्य प्रकट हुए।

यह प्रथम महासंगीति कहलाती है। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया—
इस लोक में—

२९. चूँकि (यह संगीति) पाँच सौ (अर्हतों) के द्वारा की गई, अतः यह ‘पञ्चसता’ एवं थेरों के द्वारा की गई; इसलिए यह ‘थेरिका’ कही जाती है।
३०. समस्त लोक के हित के लिए, समस्त लोक की मुक्ति हेतु धम्म का संगायन सात मास में (थेरों द्वारा) किया गया।
३१. महाकस्सप थेर द्वारा इस सुगत—शासन को पाँच हजार वर्षों तक स्थित रहने के लिए सुदृढ़ किया गया।
३२. संगीति के समापन पर चारों तरफ से जल से घिरी हुई पृथ्वी अति—प्रसन्नता से छः बार प्रकम्पित हुई।
३३. लोक में अनेक प्रकार के आश्चर्य प्रकट हुए। चूँकि यह थेरों द्वारा संकलित थी, इसलिये यह थेरों की परम्परा कहलाई।
३४. प्रथम संगीति कर, महान लोक हित का कार्य करके वे सभी थेर स्वयं के लिए निश्चित आयु तक जीवित रहकर परिनिवृत्त (मुक्त) हो गए।
३५. इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय एवं दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में

‘प्रथम महासंगीति का वर्णन’

समाप्त।

दुतियो परिच्छेदो दुतियसंगीतिवण्णना

अथानुक्कमेन गच्छन्तेसु रत्तिन्दिवेसु वस्ससतपरिनिब्बुते भगवति वेसालिका वज्जिपुत्तका भिक्खू वेसालियं दसवत्थूनि दीपेसुं। कतमानि दसवत्थूनि? कप्पति सिंगिलोणकप्पो, कप्पति द्वंगुलकप्पो, कप्पति गामन्तरकप्पो, कप्पति आवासकप्पो, कप्पति अनुमतिकप्पो, कप्पति आचिण्णकप्पो, कप्पति अमथितकप्पो, कप्पति जळोगिपातुं, कप्पति अदसकं निसीदनं, कप्पति जातरूपरजतं ति। तेसं सुसुनागपुत्तो कालासोको नाम राजा पक्खो अहोसि। तेनाहु पोराणा—

१. “अतीते दसमे वस्से, कालासोकस्स राजिनो ।

सम्बुद्ध—परिनिब्बाना, एवं वस्ससतं अहु ॥”

२. “तदा वेसालिया भिक्खू, अनेका वज्जिपुत्तका।

दस वत्थूनि दीपेसुं, कप्पन्ती ति अलज्जिनो ॥”

तेन खो पन समयेन आयस्मा यसो काकण्डपुत्तो वज्जीसु चारिकं चरमानो—“वेसालिका किर वज्जिपुत्तका भिक्खू दसवत्थूनि दीपेन्ती” ति सुत्वा “न खो पनेतं पतिरूपं, स्वाहं दसबलस्स सासनविपत्तिं सुत्वा अप्पोस्सुक्को भवेय्यं। हन्दाहं अधम्मवादिज्जो निग्गहेत्वा धम्मं दीपेमी” ति चिन्तेन्तो येन वेसालियं तदवसरि। तत्र सुदं आयस्मा यसो काकण्डपुत्तो वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। तेन खो पन समयेन वेसालिका वज्जिपुत्तका भिक्खू तदहुपोसथे कंसपातिं उदकेन पूरेत्वा मज्झे भिक्खुसंघस्स ठपेत्वा आगतागते वेसालिके उपासके एवं वदन्ति—“देथ, आवुसो, संघस्स कहापणं पि, अड्डं पि, पादं पि, मासकं पि, रूपं पि, भविस्सति संघस्स परिक्खारे करणीयं” ति। सब्बं ताव वत्तब्बं याव इमाय संगीतिया सत्तहि भिक्खुसतानि अनूतानि अनधिकानि अहेसुं। तस्मा अयं विनयसंगीति सत्तसत्तिका ति पवुच्चति।

दूसरा परिच्छेद द्वितीय संगीति का वर्णन

इसके बाद क्रमशः रात एवं दिन बीतते गए; भगवान (बुद्ध) के परिनिर्वाण के सौ वर्ष पश्चात् वैशाली के वज्जिपुत्तक भिक्षुओं ने वैशाली में दस बातों (दसवत्थु)* की घोषणा की।

कौन सी दस बात?

१.सिंगिलोणकप्प, २. द्वंगुलकप्प, ३. गामन्तरकप्प, ४. आवासकप्प, ५. अनुमतिकप्प, ६. आचिण्णकप्प, ७. अमथितकप्प, ८. जळ्ळोगिपातुं, ९. अदसक निसीदन, १०. जातरूपरजत।

सुसुनाग का पुत्र कालासोक नामक राजा उनका अनुयायी था।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१. कालासोक के राज्य के दस वर्ष बीतने पर सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के सौ वर्ष पूरे हो चुके थे।

२. तब अनेक वज्जिपुत्तक भिक्षुओं ने वैशाली में निर्लज्जतापूर्वक दस बातों का आचरण किया।

उस समय काकण्ड के पुत्र आयुष्मान् यस ने वज्जियों के बीच चारिका करते हुए—‘वैशाली में वज्जिपुत्तक भिक्षुओं ने दस बातों का आचरण किया है’ ऐसा सुनकर ‘यह उचित नहीं होगा कि मैं दसबल’ (बुद्ध) के शासन पर संकट की बात सुनकर भी उत्साहहीन रहूँ। मैं अधम्मवादियों को रोक कर धम्म का प्रकाशन करूँगा’—ऐसा सोचते हुए वैशाली पहुँचे। वहाँ, वैशाली में, काकण्ड के पुत्र आयुष्मान् यस महावन के कूटागारशाला में विहार करने लगे।

उस समय वैशाली के वज्जिपुत्तक भिक्षु उपोसथ के अवसर पर ताम्र—पात्र को जल से भरकर, भिक्षुसंघ के बीच रखकर, आये हुए वैशाली के उपासकों से ऐसा कहते थे—‘दो, आवुसों, संघ को कहापण या अड्ड या पाद या मासक या रूप दो’, यह संघ के परिष्कार में आवश्यक होगा।’ सात सौ, न ज्यादा न कम, भिक्षुओं की इस संगीति के होने के पहले तक यह सब हुआ। इसीलिए विनय की यह संगीति सत्तसतिका (सात सौ भिक्षुओं की) कहलाती है।

* बोधिनी में देखें।

१. कहापण, अड्ड, पाद, मासक एवं रूप—ये सभी सिक्कों के नाम थे, जिनमें प्रत्येक अगला अपने पूर्ववर्ती के आधे मूल्य का होता था।

एतस्मिं च सन्निपाते द्वादसभिक्षुसतसहस्सानि सन्निपत्तिसु। आयस्मता यसेन काकण्डपुत्तेन समुस्साहितेन तेसं मज्झे आयस्मता रेवतेन पुट्टेन सब्बकामित्थेरेन विनयं विस्सज्जेन्तेन तानि दसवत्थूनि विनिच्छित्तानिच्छित्तानि, अधिकरणं वूपसमितं।

अथ थेरा पन धम्मं च विनयं च संगायिस्सामा ति वत्वा तिपिटकधरे पत्तपटिसम्भिदे सत्तसते अरहन्ते भिक्खू उच्चिनित्वा वेसालियं वालुकारामे सन्निसीदित्वा महाकस्सपत्थेरेन संगायितसदिसमेव सब्बं सासनमलं सोधेत्वा पुन पिटकवसेन च निकायवसेन च अंगवसेन च धम्मक्खन्धवसेन च सब्बं धम्मविनयं संगायिसु। अयं संगीति अट्ठहि मासेहि निट्ठिता। तेनाहु पोराणा—

या लोके—

३. “सतेहि सत्तहि कता, तेन ‘सत्तसता’ ति च।
पुब्बे कतं उपादाय, दुतिया ति पवुच्चति॥”
४. “येहि थेरेहि संगीता, संगीति तेहि विस्सुता।
सब्बकामी च साळ्हो च, रेवतो खुज्जसोभितो॥”
५. “यसो च साणसंभूतो, एते सद्धिविहारिका।
थेरा आनन्दत्थेरस्स, दिट्ठपुब्बा तथागतं॥”
६. “सुमनो वासभगामी च, जेय्या सद्धिविहारिका।
द्वे इमे अनुरुद्धस्स, दिट्ठपुब्बा तथागतं॥”
७. “दुतियो पन संगीतो, येहि थेरेहि सङ्गहो।
सब्बे पि पतितभारा, कतकिच्चा अनासवा॥”
८. “सब्बकामिप्पभुतयो, ते पि थेरा महिद्धिका।
अग्गिक्खन्धा व लोकम्हि, जलित्वा परिनिब्बुता॥”
९. “एवं अनिच्चतं जम्मिं, जत्वा दुरभिसंभवं।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं फलंति॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

दुतियसंगीतिवण्णना

निट्ठिता

इस सम्मलेन में एक लाख बारह हजार भिक्षु एकत्र हुए। उनके बीच काकण्ड पुत्र आयुष्मान् यस द्वारा प्रेरणा प्राप्त आयुष्मान् रेवत द्वारा पूछे जाने पर सब्बकामी थेर द्वारा विनय के सम्बन्ध में उत्तर देते हुए उन दस बातों का परीक्षण कर निर्णय दिया गया एवं कलह शान्त किया गया।

इसके बाद थेरों ने—‘हम धम्म एवं विनय का संगायन करेंगे’ ऐसा कहकर तिपिटकधर, प्रतिसंविदाओं को प्राप्त सात सौ अर्हत् भिक्षुओं का चयन करके वैशाली के बालुकाराम में बैठकर, थेर महाकस्सप द्वारा संगायन किए जाने के समान ही (बौद्ध) शासन की समस्त गन्दगियों का शोधन कर पुनः पिटक, निकाय, अंग एवं धम्म—स्कन्धों के भेद से सम्पूर्ण धम्म एवं विनय का संगायन किया। यह संगीति आठ मास में समाप्त हुई।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

इस लोक में—

३. सात सौ (अर्हत् भिक्षुओं) के द्वारा सम्पन्न हुआ, अतः इसे ‘सत्तसत्ता’ कहा गया। पूर्व में की गई (प्रथम संगीति) के आधार पर इसे द्वितीय कहा जाता है।
- ४-५. संगायन करने वाले उन थेरों के कारण संगीति प्रसिद्ध हुई। सब्बकामी, साळ्ह, रेवत, खुज्जसोभित, यस तथा साणसंभूत—ये छः स्थविर आनन्द के शिष्य थे एवं तथागत को पूर्व में इन्होंने देखा था।
६. ज्ञानसम्पन्न सुमन एवं वासभगामी—ये दो अनुरुद्ध के शिष्य थे एवं इन्होंने तथागत को पूर्व में देखा था।
७. जिन थेरों ने द्वितीय संगीति का संगायन किया, वे सभी जिम्मेदारियों से मुक्त, करणीय कार्यों को समाप्त कर चुके एवं आस्रवों से मुक्त थे।
८. सब्बकामी इत्यादि ये सभी थेर महान ऋद्धियों (दिव्य शक्तियों) से युक्त थे। वे अग्निस्कन्ध के समान संसार में प्रकाशित होकर परिनिवृत्त हो गए।
९. इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय तथा दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में

‘द्वितीय महसंगीति का वर्णन’

समाप्त।

ततियो परिच्छेदो ततियसंगीतिवण्णना

सम्मासम्बुद्धपरिनिब्बानतो द्वित्रं वस्ससतानं उपरि अट्टवीसतिमे वस्से सब्बे अज्जतिथिया सट्ठिसहस्समत्ता विहीनलाभसक्कारा हुत्वा अन्तमसो घासच्छादनं पि अलभन्ता लाभसक्कारं पत्थयमाना सयमेव मुण्डे कत्वा कासायानि अच्छादेत्वा विहारेसु विचरन्ता उपोसथादिकम्मं पि पविसन्ति। सासनस्स अब्बुदज्ज मलज्ज कण्टकज्ज समुट्ठापेसुं। तस्मा इमस्मिं सकलजम्बुदीपे भिक्खुसंघो छ संवच्छरानि उपोसथकम्मं न अकासि।

तदा असोको धम्मराजा पण्णरसवस्साभिसेको अहोसि। राजा सासनं विसोधेतुकामो असोकारामे भिक्खुसंघं सन्निपातापेसि। तस्मिं सन्निपतिते आयस्मा मोग्गलिपुत्ततिस्सत्थेरो संघत्थेरो हुत्वा राजानं समयं उग्गण्हापेसि। राजा अज्जतिथिये पुच्छित्वा—“न इमे भिक्खू, अज्जतिथिया इमे” ति जत्वा सेतवत्थानि दत्वा उप्पब्बाजेसि। ततो राजा—“सुद्धं दानि, भन्ते, सासनं; करोतु भिक्खुसंघो उपोसथं” ति आरक्खं दत्वा नगरं एव पाविसि। समग्गो संघो सन्निपतित्वा उपोसथं अकासि। तेनाहु पोराना—

१. “सम्बुद्धपरिनिब्बाना, द्वे च वस्ससतानि च।
अट्टवीसति वस्सानि, राजासोको महीपति॥”
२. “वसन्तो तत्थ सत्ताहं, राजुय्याने मनोरमे।
सिक्खन्तो सो महीपालो, सम्बुद्धसमयं सुभं॥”
३. “तस्मिं येव च सत्ताहे, द्वे च यक्खे महीपति।
पेसेत्वा महियं भिक्खू, असेसे सन्निपातयि॥”
४. “सत्तमे दिवसे गन्त्वा, सकारामं मनोरमं।
कारेसि भिक्खुसंघस्स, सन्निपातं असेसतो॥”

तीसरा परिच्छेद तृतीय संगीति का वर्णन

सम्यक् सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के दो सौ अट्ठाइस वर्षों पश्चात् अन्य सभी सम्प्रदायों के साथ हजार अनुयायी लाभ एवं सत्कार से विहीन होकर, न्यूनतम भोजन एवं वस्त्र भी न प्राप्त करते हुए, लाभ एवं सत्कार की कामना रखते हुए स्वयं ही बालों को छीलकर, काषाय वस्त्र पहनकर विहारों में विचरण करते हुए उपोसथ* आदि कर्मों में प्रविष्ट होते थे। वे शासन के लिए सड़न (कलह), गन्दगी एवं कांटे उत्पन्न करते थे। इसीलिए इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में भिक्षुसंघ ने छः वर्षों तक उपोसथकर्म नहीं किया।

तब धम्मराज असोक पन्द्रह वर्षों से अभिषिक्त था। राजा ने शासन का विशोधन करने की इच्छा से असोकाराम में भिक्षुसंघ की बैठक बुलाई। उस बैठक में मोग्गलि के पुत्र आयुष्मान तिस्स थेर ने संघ का वरिष्ठतम होते हुए राजा को (थेरवाद के) धार्मिक मत की शिक्षा दी। राजा ने (बौद्ध भिक्षु के वेश वाले) अन्य सम्प्रदाय के अनुयायियों से (उनका मत) पूछकर—‘ये भिक्षु नहीं हैं, ये अन्य मत वाले हैं,’—ऐसा जानकर (उन्हें) श्वेत वस्त्र देकर संघ से बहिष्कृत कर दिया। तब राजा—‘भन्ते! अब शासन शुद्ध है, भिक्षुसंघ उपोसथ करे’ ऐसा कह पहरेदार देकर नगर में प्रविष्ट हुआ। सम्पूर्ण संघ ने एकत्र होकर उपोसथ किया। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के दो सौ अट्ठाइस वर्षों पश्चात् राजा असोक पृथ्वी का स्वामी था।
२. राजा के मनोरम उद्यान में एक सप्ताह व्यतीत करते हुए उसने (मोग्गलिपुत्ततिस्स ने) राजा को सम्बुद्ध के सुन्दर धम्म—सिद्धान्तों की शिक्षा दी।
३. उसी सप्ताह राजा ने दो यक्षों को भेजकर पृथ्वी के समस्त भिक्षुओं को एकत्र कराया।
४. सातवें दिन उसने अपने मनोरम आराम में जाकर वहाँ समस्त भिक्षुसंघ के सम्मेलन को करवाया।

* बोधिनी में देखें।

५. “ते मिच्छादिट्टिके सब्बे, पुच्छित्वा अज्जतिथिये ।
जत्वा सट्ठिसहस्सानि, उप्पब्बाजेसि भूपति ॥”
६. “संघो विसोधितो यस्मा, तस्मा संघो उपोसथं ।
करोतु भन्ते इच्चेवं, वत्वा थेरस्स भूपति ॥”
७. “संघस्स रक्खं दत्त्वान, नगरं पाविसि सुभं ।
संघो समग्गो हुत्वान, तदाकासि उपोसथंति ॥”

तस्मिं समागमे मोग्गलिपुत्ततिस्सत्थेरो परप्पवादं मद्दमानो कथावत्थुप्पकरणं अभासि । ततो सट्ठिसतसहस्ससंखासु भिक्खूसु उच्चिनित्वा तिपिटकपरियत्तिधरानं पभिन्नपटिसम्भिदानं तेविज्जादिभेदानं भिक्खूनां सहस्समेकं गहेत्वा, यथा महाकस्सपत्थेरो च यसत्थेरो च पिटकवसेन च निकायवसेन च अंगवसेन च धम्मक्खन्धवसेन च धम्मज्ज विनयज्ज संगायिसु । एवमेवं धम्मज्ज विनयज्ज संगायन्तो महामोग्गलिपुत्ततिस्सत्थेरो सब्बं सासनमलं विसोधेत्वा ततियसंगीतिं अकासि । संगीतिपरियोसाने अनेकप्पकारं महापथविकम्पो अहोसि । अयं संगीति नवहि मासेहि निड्ढिता । तेनाहु पोराणा—

८. “महाकस्सपत्थेरो च, यसत्थेरो च कारयुं ।
यथा ते धम्मसंगीतिं, तिस्सत्थेरो पि तं तथा ॥”
९. “कथावत्थुप्पकरणं, परवादप्पमद्दं ।
अभासि तिस्सत्थेरो च, तस्मिं संगीतिमण्डले ॥”
१०. “एवं भिक्खूसहस्सेन, रक्खायासोकराजिनो ।
अयं नवहि मासेहि, धम्मसंगीति निड्ढिता ॥”
११. “ततियं सङ्गहं कत्वा, कत्वा लोकहितं बहुं ।
ते यावतायुकं ठत्वा, थेरा सब्बे पि निब्बुता ॥”
१२. “एवं अनिच्चतं जम्मिं, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरे, यं निच्चं अमतं पदंति ॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे
ततियसंगीतिवण्णना
निड्ढिता

५. राजा ने सभी अन्य मतानुयायियों, मिथ्यादृष्टि वालों से प्रश्न पूछे एवं (उनकी मिथ्यादृष्टियों को) जानकर साठ हजार को संघ से बहिष्कृत कर दिया।
६. चूंकि संघ शुद्ध हो गया, अतः 'भन्ते! संघ उपोसथ करे' ऐसा राजा ने थेर (मोग्गलिपुत्ततिस्स) से कहा।
७. संघ के लिये पहरेदार देकर (राजा) शुभ नगर में प्रविष्ट हुआ। संघ ने एकत्रित होकर तब उपोसथ कार्यक्रम का आयोजन किया।

इस सम्मेलन में मोग्गलिपुत्ततिस्स थेर ने परवाद का खण्डन करते हुए कथावत्थु ग्रन्थ का भाषण किया। इसके बाद साठ हजार भिक्षुओं में तिपिटक को कंठस्थ रखने वाले, विविध प्रतिसंविदाओं* के ज्ञाता, तीन विद्याओं आदि के जानकार एक हजार भिक्षुओं का चयन करके, जिस प्रकार महाकस्सप थेर तथा यस थेर ने पिटक, निकाय, अंग तथा धम्म—स्कन्धों के भेद से धम्म एवं विनय का संगायन किया था, उसी प्रकार महान् मोग्गलिपुत्ततिस्स थेर ने धम्म तथा विनय का संगायन करते हुए, (बौद्ध) शासन की समस्त गन्दगियों का शुद्धिकरण करते हुए तृतीय संगीति का सम्पादन किया। यह संगीति नौ माह में समाप्त हुई।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

८. जिस प्रकार महाकस्सप थेर तथा यस थेर ने धम्मसंगीति किया, उसी प्रकार तिस्स थेर ने भी किया।
९. और उस संगीति—कक्ष में तिस्स थेर ने परवाद का खण्डन करने के लिए कथावत्थु ग्रन्थ का भाषण किया।
१०. इस प्रकार राजा असोक के संरक्षण में एक हजार भिक्षुओं द्वारा की गयी यह धम्मसंगीति नौ मास में समाप्त हुई।
११. तृतीय संगीति कर, महान लोकहित का कार्य करके, वे सभी थेर स्वयं के लिए निश्चित आयु तक जीवित रहकर परिनिवृत्त (मुक्त) हो गये।
१२. इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय एवं दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
'तृतीय संगीति का वर्णन'

समाप्त

* बोधिनी में देखें।

चतुर्थो परिच्छेदो चेतियपब्बतविहारपटिग्गहणवण्णना

तत्रायमानुपुब्बिकथा—

मोग्गलिपुत्ततिस्सत्थेरो किर इमं ततियसंगीतिं कत्वा एवं चिन्तेसि—“कत्थ नु खो अनागते सासनं सुप्पतिट्ठितं भवेय्या” ति? अथस्स उपपरिक्खतो एतदहोसि—
“पच्चन्तिमेसु जनपदेसु सुप्पतिट्ठितं भविस्सती” ति। सो तेसं भिक्खूनं भारं कत्वा ते ते भिक्खू तत्थ तत्थ पेसेसि। मज्झन्तिकत्थेरं कस्मीर-गन्धाररट्ठं पेसेसि—“त्वं एतं रट्ठं गत्वा एत्थ सासनं पतिट्ठापेही” ति। महादेवत्थेरं तथेव वत्वा महिसमण्डलं पेसेसि, रक्खितत्थेरं वनवासिं, योनक-धम्मरक्खितत्थेरं अपरन्तकं, महाधम्मरक्खितत्थेरं महारट्ठं, महारक्खितत्थेरं योनकलोकं, मज्झिमत्थेरं हिमवन्तप्पदेसं, सोणकत्थेरं उत्तरत्थेरं च सुवण्णभूमिं। अत्तनो सद्धिविहारिकं महिन्दत्थेरं इट्ठियत्थेरेन उत्तियत्थेरेन सम्बलत्थेरेन भद्दसालत्थेरेन सद्धिं लंकादीपं पेसेसि—“तुम्हे लंकादीपं गत्वा तत्थ सासनं पतिट्ठापेथा” ति। सब्बे पि तं तं दिसाभागं गच्छन्ता अत्तपञ्चमा व अगमंसु—“पच्चन्तिमेसु जनपदेसु पञ्चवग्गो गणो अलं उपसम्पदकम्माया” ति। तेनाहु पोराणा—

१. “थेरो मोग्गलिपुत्तो सो, जिनसासनजोतको ।
निट्ठापेत्वान सङ्गीतिं, पेक्खमानो अनागतं ॥”
२. “सासनस्स पतिट्ठानं, पच्चन्तेसु अपेक्खय ।
पेसेसि कत्तिके मासे, ते ते थेरा तहिं तहिं ॥”
३. “थेरं कस्मीरगन्धारं, मज्झन्तिकं अपेसयि ।
अपेसयि महादेवत्थेरं महिस-मण्डलं ॥”
४. “वनवासिं अपेसेसि, थेरं रक्खितनामकं ।
तथापरन्तकं योनधम्मरक्खितनामकं ॥”

चौथा परिच्छेद चेतियपब्बतविहार के ग्रहण का वर्णन

यहाँ यह आनुपूर्वी कथा है—

मोग्गलिपुत्तस्स थेर ने इस तृतीय संगीति को करके ऐसा सोचा—‘भविष्य में कहाँ पर (बौद्ध) शासन सुप्रतिष्ठित होगा?’ इसके बाद चिन्तन करते हुए उन्होंने सोचा—‘पश्चिमी जनपदों में (धम्म) सुप्रतिष्ठित होगा।’ उन्होंने उन भिक्षुओं पर जिम्मेदारी बाँटकर उन्हें यहाँ वहाँ भेजा। उन्होंने मज्झन्तिक थेर को कश्मीर और गान्धार राष्ट्र भेजा (कहते हुए कि)—‘तुम इस देश में जाकर वहाँ शासन की स्थापना करोगे।’ महादेव थेर को वही बातें कहकर उन्होंने महिसमण्डल^१ भेजा, रक्खित थेर को वनवासी^२, यवन थेर धम्मरक्खित को अपरान्तक^३, महाधम्मरक्खित थेर को महारट्ठ^४, महारक्खित थेर को यवन देश^५, मज्झिम थेर को हिमवन्त प्रदेश^६ एवं सोणक थेर तथा उत्तर थेर को सुवण्णभूमि^७ भेजा। अपने शिष्य महिन्द थेर को इट्ठिय थेर, उत्तिय थेर, सम्बल थेर तथा भट्टसाल थेर के साथ उन्होंने लंका द्वीप भेजा (कहते हुए कि)—‘तुम लोग लंका द्वीप जाकर वहाँ (बौद्ध) शासन की स्थापना करो।’ सभी विभिन्न दिशाओं में पाँच के समूह में गए (क्योंकि)—‘पश्चिमी जनपदों में पाँच भिक्षुओं के समूह को उपसम्पदा कर्म के लिए पर्याप्त माना जाता था।’
इसीलिए पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१. जिन (बुद्ध) शासन का प्रकाशन करने वाले उस मोग्गलिपुत्त थेर ने संगीति की समापन करके भविष्य की ओर देखा।
२. (मध्य देश के) सीमान्त प्रदेशों में (बौद्ध) शासन की स्थापना के उद्देश्य से उन्होंने कार्तिक मास में विभिन्न थेरों को विभिन्न स्थानों पर भेजा।
३. मज्झन्तिक थेर को कश्मीर और गान्धार भेजा, महादेव थेर को महिस—मण्डल भेजा।
४. रक्खित थेर को वनवासी भेजा एवं यवन धम्मरक्खित थेर को अपरान्तक भेजा।

-
१. दक्षिणापथ (दक्कन एवं सुदूर दक्षिणी क्षेत्र) में चण्डक पर्वत के समीप का एक राज्य।
 २. बुहलर के अनुसार यह घाटों, तुंगभद्रा एवं बड़ौदा के बीच स्थित क्षेत्र था।
 ३. पश्चिमी भारत।
 ४. महाराष्ट्र।
 ५. वर्तमान में ग्रीक देश।
 ६. तत्कालीन मध्य देश में स्थित हिमालय क्षेत्र।
 ७. वर्तमान म्यांमार का निचला क्षेत्र।

५. “महारट्ठं महाधम्मराक्खितत्थेरनामकं ।
महारक्खितत्थेरं तु, योनलोकं अपेसयि ॥”
६. “पेसेसि मज्झिमत्थेरं, हिमवन्तपदेसकं ।
सुवण्णभूमिं थेरे द्वे, सोणमुत्तरमेव च ॥”
७. “महामहिन्दत्थेरेन, थेरं इट्ठियमुत्तियं ।
सम्बलं भद्दसालं च, सके सद्धिविहारिके ॥”
८. “लंकादीपे मनुज्जम्हि, मनुज्जं जिनसासनं ।
पतिट्ठापेथं तुम्हे ति, पञ्च थेरे अपेसयि ॥”

महिन्दत्थेरो पन “लंकादीपं गन्त्वा सासनं पतिट्ठापेही” ति उपज्झायेन च भिक्खुसङ्घेन च अज्झित्थो चिन्तेसि—“समयो नु खो इदानीं लंकादीपं गन्तु” ति? तदा सक्को देवानं इन्दो महिन्दत्थेरं उपसंकमित्वा एतदवोच—“कालकतो, भन्ते, मुटसीवराजा, इदानीं देवानम्पियतिस्समहाराजा रज्जं करोति। सम्मासम्बुद्धेन च तुम्हे व्याकता— ‘अनागते महिन्दो नाम भिक्खु लङ्कादीपं पसादेस्सती’ति। तस्मातिह वो, भन्ते, कालो दीपवरं गमनाय, अहं पि वो सहायो भविस्सामी”ति। तेनाहु पोराणा—

९. “महिन्दो नाम नामेन, संधत्थेरो तदा अहु ।
इट्ठियो उत्तियो थेरो, भद्दसालो च सम्बलो ॥”
१०. “सामणेरो च सुमनो, छळभिज्जो महिद्धिको ।
भन्दुको सत्तमो तेसं, दिट्ठसच्चो उपासको ॥”
११. “पेसिता जम्बुदीपा ते, हंसराजा व अम्बरे ।
एवं उप्पतिता थेरा, निपतिंसु नगुत्तमे ॥”
१२. “पुरतो पुरसेट्ठस्स, पब्बते मेघसन्निभे ।
पतिट्ठहिंसु कूटम्हि, हंसा व नभमुद्धनी’ ति ॥”

एवं इट्ठियादीहि सद्धिं आगन्त्वा मिस्सकपब्बते पतिट्ठहन्तो च आयस्मा महिन्दत्थेरो सम्मासम्बुद्धस्स परिनिब्बानतो द्वित्रं वस्ससतानं उपरि छत्तिंसतिमे वस्से इमस्मिं दीपे पतिट्ठही ति वेदितव्वो।

५. महाधम्मरक्खित नामक थेर को महारट्ठ तथा महारक्खित थेर को यवन देश भेजा।
६. मज्झिम थेर को हिमवन्त प्रदेश भेजा तथा दो थेरों—सोण और उत्तर को सुवण्णभूमि भेजा।
- ७—८. महामहिन्द थेर के साथ अपने शिष्यों इट्ठिय, उत्तिय, सम्बल तथा भद्दसाल—इन पाँच थेरों को (इस निर्देश के साथ) भेजा कि 'तुम आनन्दप्रद लंका द्वीप में आनन्दप्रद जिन शासन की स्थापना करो।' महिन्द थेर ने—'लंका द्वीप जाकर शासन की स्थापना करो' इस प्रकार के उपाध्याय* तथा भिक्षुसंघ के आमंत्रण करने पर ऐसा विचार किया—'क्या यह लंका द्वीप जाने का उचित समय है?' तब देवराज शक्र ने महिन्द थेर के पास पहुँच कर ऐसा कहा—'भन्ते! राजा मुटसीव की मृत्यु हो चुकी है, अब महाराजा देवानम्पियतिसस का शासन है। तथा सम्यक् सम्बुद्ध के द्वारा तुम्हारे विषय में भविष्यवाणी की गई थी—'भविष्य में महिन्द नामक भिक्षु लंका द्वीप को पवित्र करेगा' इसलिये यह उत्तम द्वीप पर जाने का उचित समय है, मैं भी आपका सहायक होऊँगा।'

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

९. उस समय महिन्द नामक थेर संघ में वरिष्ठ था। अन्य वरिष्ठ थेर इट्ठिय, उत्तिय, भद्दसाल तथा सम्बल थे।
 १०. तथा सुमन नामक सामणेर* छः अभिज्ञाओं* से सम्पन्न, महान ऋद्धिवान था। उनमें सातवाँ भण्डुक सत्यद्रष्टा उपासक* था।
 ११. वे (भिक्षु) आकाश में भेजे गए राजहंसों के समान जम्बूद्वीप से भेजे गए। इस प्रकार वे थेर उड़कर उत्तम नगर में उतर गए।
 १२. श्रेष्ठ नगर के सामने स्थित बादल के समान पर्वत के शीर्ष पर वे उसी प्रकार प्रतिष्ठित हुए, जिस प्रकार आकाश में ऊँचाई पर हंस (उड़ते हैं)।
- इस प्रकार इट्ठिय आदि के साथ आकर मिस्सक पर्वत पर रहते हुए आयुष्मान् महिन्द थेर सम्यक् सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के दो सौ छत्तीस वर्ष पश्चात् इस द्वीप में प्रतिष्ठित हुए, ऐसा जानना चाहिए।

उस दिन लंका द्वीप में ज्येष्ठ मूल नक्षत्र था।

* बोधिनी में देखें।

तस्मिं च पन दिवसे लंकादीपे जेडूमूलनक्खत्तं नाम होति । देवानम्पियतस्समहाराजा नक्खत्तं घोसापेत्वा “छणं करोथा” ति अमच्चे आणापेत्वा चत्ताळीसपुरिसहस्सपरिवारो नगरम्हा निक्खमित्वा येन मिस्सकपब्बतो तेन पायासि मिगवं कीळितुकामो । अथ खो तस्मिं पब्बते अधिवत्ता एका देवता “रज्जो थेरे दस्सेस्सामी” ति रोहितमिगरूपं गहेत्वा रज्जो अविदूरे तिणं खादियमानो विय चरति । तदा राजा जियं पोढेसि । मिगो अम्बत्थलमगं गहेत्वा पलायितुं आरभि । राजा पिड्डितो पिड्डितो अनुबन्धन्तो अम्बत्थलमेव अभिरूहि । मिगो पि थेरानं अविदूरे अन्तरधायि । महिन्दत्थेरो राजानं अविदूरे आगच्छन्तं दिस्वा ममं येव राजा पस्सतु मा इतरे ति अधिड्डहित्वा “तिस्स तिस्स, इतो एही” ति आह । राजा सुत्वा चिन्तेसि—“इमस्मिं दीपे जातो मं ‘तिस्सा’ ति नामं गहेत्वा आलपितुं समत्थो नाम नत्थि, अयं पन छिन्नभिन्नपट्ठरो भण्डु कासाववसनो मं नामेन आलपति । को नु खो अयं भविस्सति, मनुस्सो वा अमनुस्सो वा” ति ?

थेरो आह—

“समणा मयं महाराजा, धम्मराजस्स सावका ।

तमेव अनुकम्पाय, जम्बुदीपा इधागता’ति ॥”

राजा थेरस्स वचनं सुत्वा तावदेव आयुधं निक्खपित्वा एकमन्तं निसीदि सम्मोदनीयं कथं कथयमानो । यथाह—

“आयुधं निक्खपित्वान, एकमन्तं उपाविसि ।

निसज्ज राजा सम्मोदि, बहुं अत्थूपसंहितं ॥”

तस्मिं खणे तानि पि चत्ताळीसपुरिसहस्सानि आगन्त्वा तं परिवारेसुं । तदा थेरो इतरे पि छ जने दस्सेसि । राजा ते दिस्वा “इमे कदा आगता” ति आह ।

“मया सद्धिं येव, महाराजा” ति ।

“इदानि पन जम्बुदीपे अज्जे पि एवरूपा समणा सन्ती” ति ?

“सन्ति, महाराज, एतरहि जम्बुदीपो कासावपज्जोतो इसिवातपरिवातो” ति वत्वा गाथमाह—

“तेविज्जा इद्धिप्पत्ता च, चेतोपरियायकोविदा ।

खीणासवा अरहन्ता, बहू बुद्धस्स सावका’ ति ॥”

महाराजा देवानम्पियतिस्स नक्षत्र की घोषणा करवा के—‘उत्सव करो?’ ऐसा अमात्यों को आदेश देकर, चालीस हजार लोगों के परिवार के साथ नगर से बाहर निकलकर, शिकार खेलने की इच्छा से मिस्सक पर्वत पहुँचा। उस समय पर्वत पर निवास कर रहा एक देवता ‘मैं राजा को थेरों को दिखाऊँगा’ ऐसा सोच रोहित मृग का रूप ग्रहण कर राजा के समीप घास खाते हुए विचरण करने लगा। तब राजा ने (धनुष की) प्रत्यंचा चढ़ाई। मृग ने अम्बत्थल मार्ग पर भागना आरम्भ किया। राजा पीछे—पीछे दौड़ते हुए अम्बत्थल (मार्ग) पर चढ़ गया। मृग थेरों के पास (पहुँच कर) अन्तर्धान हो गया। महिन्द थेर ने राजा को समीप आते देखकर ‘राजा मुझे ही देखे, अन्य को नहीं’ ऐसा संकल्प कर ‘तिस्स! तिस्स! इधर आओ’ इस प्रकार कहा। राजा ने सुनकर विचार किया—‘इस द्वीप में मुझे ‘तिस्स’ नाम लेकर सम्बोधित करने में कोई समर्थ नहीं है, किन्तु यह छिन्न—भिन्न काषाय वस्त्र धारण करने वाला सिरमुँडा मुझे नाम से सम्बोधित कर रहा है। यह कौन होगा, मनुष्य या अमनुष्य?’

थेर ने कहा—

हम श्रमण हैं, महाराज! धर्मराज के श्रावक हैं। आप पर अनुकम्पा करने के लिए ही जम्बूद्वीप से यहाँ आए हैं।

राजा थेर के वचन सुनकर उसी समय शस्त्र रखकर मित्रतापूर्ण बातें कहते हुए एक तरफ बैठ गया। जैसा कि कहा गया—

शस्त्र रखकर (राजा) एक तरफ बैठ गया। बैठकर राजा ने अनेक अर्थों से युक्त मित्रतापूर्ण बातें की।

उसी क्षण वे चालीस हजार व्यक्ति आकर उनके चारों तरफ इकट्ठे हो गए। तब थेर ने अन्य छः लोगों को भी (राजा को) दिखाया। राजा ने उन्हें देखकर ‘ये कब आ गए?’—ऐसा कहा।

‘मेरे साथ ही, महाराज।’

‘जम्बूद्वीप में अभी अन्य भी इस प्रकार के श्रमण हैं क्या?’

‘महाराज! इस समय जम्बूद्वीप काषाय वस्त्र से प्रज्ज्वलित तथा ऋषियों की सुगन्ध से भरपूर है’ ऐसा कहकर इस गाथा को कहा—

‘तीन विद्याओं के ज्ञाता*, ऋद्धियों को प्राप्त*, दूसरों के चित्त की बातों को जान लेने में कुशल, क्षीणास्रव*, बुद्ध के अर्हत् शिष्य विशाल संख्या में हैं।’

-
1. (1) पूर्वजन्मों का ज्ञान (पुब्बेनिवासानुस्सतिजाण); (2) कर्मानुसार विभिन्न गतियों को प्राप्त प्राणियों की उत्पत्ति एवं मृत्यु का ज्ञान (चुतूप्पतिजाण); (3) आस्रवों के क्षय का ज्ञान (आसवक्खयकरणजाण)। इसके अतिरिक्त कहीं—कहीं लोक के अनित्य, दुःख एवं अनात्म स्वरूप के ज्ञान को भी तीन विद्या कहा गया है।

* बोधिनी में देखें।

“भन्ते, केन मग्गेन आगतत्था” ति? “नेव, महाराज, उदकेन न थलेना”ति। राजा आकासेन आगता ति अज्जासि। थेरो अम्बोपमपज्जं पुच्छि। राजा विस्सज्जेसि।

अथ थेरो “पण्डितो राजा सक्खिस्सति धम्मं अज्जातुं” ति चूळहत्थिपदोपमसुत्तं कथेसि। कथापरियोसाने राजा तीसु सरणेसु पतिट्ठहि सद्धिं चत्ताळीसपाणसहस्सेहि। “भन्ते, स्वे रथं पेसिस्सामि, तं रथं अभिरुहित्वा आगच्छेय्याथा” ति वत्वा वन्दित्वा पक्कामि।

थेरो अचिरपक्कन्तस्स रज्जो सुमनसामणेरं आमन्तेसि—“एहि त्वं, सुमन, धम्मसवनस्स कालं घोसेही” ति।

“भन्ते, कित्तकं ठानं सावेन्तो घोसेमी” ति?

“सकलं लंकादीपं” ति।

“साधु, भन्ते”, ति सामणेरो अभिज्जापादकं चतुत्थज्ज्ञानं समापज्जित्वा उट्ठाय अधिट्ठित्वा समाहितेन चित्तेन सकलं लंकादीपं सावेन्तो तिव्खत्तुं धम्मसवनस्स कालं घोसेसि।

राजा तं सद्दं सुत्वा थेरानं सन्निके पेसेसि—“किं, भन्ते, अत्थि कोचि उपद्दवो” ति?

“नत्थि अम्हाकं कोचि उपद्दवो, धम्मसवनस्स घोसापयिम्ह बुद्धवचनं कथेतुकामम्हा” ति।

तं च पन सामणेरस्स सद्दं सुत्वा भुम्मादेवता सद्दं अनुस्सावेसुं। एतेन उपायेन याव ब्रह्मलोका सद्दो अब्भुग्गज्झि। तेन सद्देन महादेवानं सन्निपातो अहोसि। थेरो महन्तं देवानं सन्निपातं दिस्वा समचित्तसुत्तन्तं कथेसि। कथापरियोसाने असंखेय्यानं देवानं धम्माभिसमयो अहोसि, बहू नागसुपण्णा च सरणेसु पतिट्ठहिंसु।

‘भन्ते! किस मार्ग से आप यहाँ आए?’

‘महाराज! न जल मार्ग से और न थल मार्ग से।’

राजा समझ गया कि वे आकाश मार्ग से आए हैं। थेर (महिन्द) ने आम की उपमा देकर प्रश्न पूछा, राजा ने उत्तर दे दिया।

इसके बाद थेर (महिन्द) ने—‘राजा विद्वान् है, धम्म को समझने के योग्य होगा’—ऐसा सोच चूलहत्थिपदोपमसुत्त का पाठ किया। कथा की समाप्ति पर राजा चालीस हजार प्राणियों के साथ त्रिशरण* में आ गया। ‘भन्ते! कल रथ भेजूँगा, आप रथ पर चढ़ कर आ जाएँ’—ऐसा कह वन्दना करके चला गया।

राजा के लौटने के शीघ्र बाद ही थेर (महिन्द) ने सुमन सामणेरे को बुलाया (और कहा)—‘आओ, सुमन, तुम धम्म—श्रवण के समय की घोषणा करो।’

‘भन्ते! कितनी दूर तक (सुनने के) समय की घोषणा करूँ।’

‘सम्पूर्ण लंका द्वीप में।’

‘अच्छा, भन्ते’—ऐसा कह सामणेरे ने अभिज्ञा* के आधार पर ध्यान* की चतुर्थ अवस्था में रत होकर, उससे उठकर दृढ़ संकल्प करके समाहित चित्त से सम्पूर्ण लंकाद्वीप को सुनाते हुए धम्म—श्रवण के काल की तीन बार घोषणा की।

राजा ने उस आवाज को सुनकर थेरों के पास सन्देश भेजा—‘भन्ते! क्या कोई परेशानी हो गई है?’

‘नहीं, हमें कोई परेशानी नहीं हुई, हमने तो बुद्धवचनों के उपदेश हेतु धम्म—श्रवण (के समय) की घोषणा की है।’

उस सामणेरे के शब्द सुनकर भूमि—देवताओं ने शब्दों को प्रतिध्वनित किया। इस प्रकार आवाज ब्रह्मलोक तक पहुँच गई। उन घोषणाओं से देवों का महान् समूह वहाँ उपस्थित हो गया। थेर (महिन्द) ने देवों के बड़े समूह को देखकर समचित्तसुत्त का पाठ किया। कथा की समाप्ति पर असंख्य देवों को धम्म—ज्ञान उत्पन्न हुआ तथा बहुत से नाग एवं सुपण्ण (त्रि)शरण में प्रतिष्ठित हो गए।

1. बुद्ध, धम्म एवं संघ की शरण।

* बोधिनी में देखें।

अथ तस्सा रत्तिया अच्चयेन राजा थेरानं रथं पेसेसि। सो सारथि रथं एकमन्तं ठपेत्वा थेरानं आरोचेसि—“आभतो, भन्ते, रथो; अभिरुहथ गच्छिस्सामा”ति। थेरा—“न मयं रथं अभिरुहाम, गच्छ त्वं पच्छा मयं गच्छिस्सामा” ति वत्वा वेहासं अब्भुगन्त्वा अनुराधपुरस्स पुरत्थिमदिसायं पठमकचेतियद्धानं ओतरिंसु। तम्हि चेतियं थेरेहि पठमं ओतिण्णद्धाने कतत्ता येव पठमकचेतियं ति वुच्चति। सो सारथि अदस थेरे पठमतरं आगन्त्वा कायबन्धनं बन्धित्वा चीवरं पारुपन्ते। दिस्वा अतिविय पसन्नचित्तो हुत्वा आगन्त्वा रज्जो आरोचेसि—“आगता, देव, थेरा” ति। राजा—“रथं आरुळ्हा” ति पुच्छि। “न आरुळ्हा, देव, अपि च मम पच्छतो निक्खमित्वा पठमतरं आगन्त्वा पाचीनद्वारे ठिता” ति। राजा पि गन्त्वा थेरे वन्दित्वा महिन्दत्थेरस्स हत्थतो पत्तं गहेत्वा महतिया पूजाय च सक्कारेन च थेरे नगरं पवेसेत्वा अन्तोनिवेसनं पवेसेसि।

थेरो निच्चलं आसनं पज्जत्तं दिस्वा “अम्हाकं सत्थुसासनं सकललंकादीपे पठवियं पतिट्ठितं निच्चलं च हुत्वा पतिट्ठहिस्सती” ति चिन्तेन्तो निसीदि।

राजा थेरे पणीतेन खादनियेन भोजनियेन सहत्था सन्तप्पेसि। थेरो कतभत्तकिच्चो रज्जो सपरिजनस्स धम्मरतनवस्सं वस्सेन्तो पेतवत्थु—विमानवत्थु—सच्चसंयुत्तं च कथेसि। तं थेरस्स धम्मदेसनं सुत्वा तानि पज्ज पि इत्थिसतानि सोतापत्तिफलं सच्छिमकंसु। धम्मदेसनावसाने सायणहसमये अमच्चा महामेघवनुय्यानं थेरे नसिंसु। थेरा मेघवनुय्याने वसिंसु।

राजा पि खो तस्सा रत्तिया अच्चयेन थेरस्स समीपं गन्त्वा सुखसयितभावं पुच्छित्वा “कप्पति, भन्ते, भिक्खुसंघस्स आरामो” ति पुच्छि। थेरो—“कप्पति महाराजा” ति आह। राजा तुट्ठो सुवण्णभिकारं गहेत्वा थेरस्स हत्थे उदकं पातेत्वा महामेघवनुय्यानं अदासि। सह उदकपातेन पठवी कप्पि। थेरो सत्तदिवसानि धम्मं कथेसि। अड्ढनवप्पमाणपाणसहस्सानं धम्माभिसमयो अहोसि। थेरो चेतियगिरि एव अगमि। राजा पि तत्थ अगमासि।

उस रात्रि के बीतने पर राजा ने थेरों के लिए रथ भेजा। उस सारथी ने रथ को एक तरफ खड़ा कर थेरों को सूचित किया—‘भन्ते! रथ आ गया है, (उस पर) चढ़कर हम चलेंगे।’ थेरों ने—‘हम लोग रथ पर नहीं चढ़ेंगे, आप चलें, हम लोग पीछे—पीछे आएँगे’—ऐसा कहकर आकाश में ऊपर उठकर वे अनुराधपुर के पूर्व दिशा में पठमकचेतिय नामक स्थान पर उतर गए। उस चेतिय में थेरों के प्रथम बार अवतरित होने के ही कारण वह स्थान पठमकचेतिय कहलाया। उस सारथी ने देखा कि थेर पहले ही आकर कमरबंद बाँधकर चीवर ओढ़े हुए हैं। देखकर अत्यन्त प्रसन्न चित्त वाला हो, आकर राजा को (उसने) सूचित किया—‘देव! थेर आ गए हैं।’ राजा ने पूछा—‘रथ पर आरूढ़ होकर?’

‘चढ़कर नहीं, देव, मेरे पश्चात् निकलकर किन्तु पहले पहुँचकर पूर्वी द्वार पर खड़े हैं।’

राजा ने जाकर थेरों की वन्दना करके, महिन्द थेर के हाथ का पात्र ग्रहण कर, महान् पूजा एवं सत्कार के साथ थेरों को नगर में प्रवेश करा महल के अन्दर ले गए।

थेर (महिन्द) स्वयं के लिए बिछे हुए अचल आसन को देख—‘हमारे शास्ता का शासन सम्पूर्ण लंका द्वीप में पृथ्वी पर स्थित इस अचल आसन के समान ही प्रतिष्ठित होगा’—ऐसा सोचकर बैठ गए।

राजा ने उत्तम खाने योग्य भोज्य पदार्थों को स्वयं अपने हाथों से थेरों को परोसा। भोजन के उपरान्त परिजनों सहित राजा के लिए थेर ने धम्म—रत्न की वर्षा करते हुए पेतवत्थु, विमानवत्थु तथा सच्चसंयुत का भाषण किया। उस थेर की धम्म—देशना सुनकर पाँच सौ स्त्रियों ने सोतापत्ति* फल का साक्षात्कार कर लिया। थेर के धम्म—देशना के समाप्त होने पर संध्याकाल में अमात्य थेरों को विशाल मेघवन उद्यान में ले गए। थेरों ने मेघवन उद्यान में निवास किया।

उस रात्रि के बीत जाने पर राजा ने भी थेर के समीप जाकर सुखपूर्वक निद्रा के विषय में पूछकर—‘भन्ते! भिक्षुसंघ के लिये आराम की अनुमति है या नहीं’—ऐसा पूछा। थेर ने—‘अनुमति है, महाराज’—यह जवाब दिया। राजा ने प्रसन्न होकर स्वर्णपात्र ले थेर के हाथ पर जल गिराकर विशाल मेघवन उद्यान को (दान) दे दिया। जल के (पृथ्वी पर) गिरने के साथ ही पृथ्वी प्रकम्पित हो उठी। थेर (महिन्द) ने सात दिनों तक धम्म—देशना किया। नौ हजार पाँच सौ व्यक्तियों ने धम्म—ज्ञान प्राप्त किया। थेर चेतियगिरि लौट गए। राजा भी वहाँ पहुँचा।

* बोधिनी में देखें।

तं दिवसं अरिद्धो नाम अमच्चो पञ्चपण्णासाय जेड्ड—कनिड्ड—भातुकेहि सद्धिं राजानं वन्दित्वा एवमाह—“इच्छामहं, देव, थेरानं सन्तिके पब्बजितुं” ति। राजा “साधु भणे, पब्बजिस्ससी” ति अनुजानित्वा थेरं सम्पटिच्छापेसि। थेरो तदहेव पब्बाजेसि। सब्बे खुरगगे येव अरहत्तं पापुणिंसु। तेनाहु पोराणा—

१३. “कण्टकचेतियड्डाने, परितो तदहेव सो ।

कम्मानि आरभापेत्वा, लेणानि अड्डसड्डियो॥”

१४. “अगमासि पुरं राजा, थेरा तत्थेव ते वस्सुं ।

काले पिण्डाय नगरं, पविसन्तानुकम्पका ॥”

१५. “निड्डिते लेणकम्महि, आसाळ्हिपुण्णमासियं ।

गन्त्वा अदासि थेरानं, राजा विहारदक्खिणं॥”

१६. द्वतिसंमालकानं च, विहारस्स च तस्स खो ।

सीमं सीमतिको थेरो, वन्दित्वा तदहेव सो॥”

१७. “तेसं पब्बज्जापेक्खानं, अकासि उपसम्पदं ।

सब्बेसं सब्बपठमं, बद्धे तुम्बरूमालके ॥”

१८. “एते द्वासड्डिअरहन्तो, सब्बे चेतियपब्बते ।

तत्थ वस्सं उपगन्त्वा, अकंसु राजसङ्गहं’ ति ॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

चेतियपब्बतविहारपटिग्गहणवण्णना

निड्डिता।

उस दिन पचपन ज्येष्ठ एवं कनिष्ठ भाइयों के साथ अरिट्ठ नामक अमात्य ने राजा की वन्दना करके ऐसा कहा—‘देव! मैं थेर के पास प्रव्रजित होना चाहता हूँ।’ राजा ने ‘ठीक है, प्रव्रज्या ग्रहण करो’—इस प्रकार अनुमति दे थेर को तैयार कराया। थेर ने उसी दिन उन्हें प्रव्रजित किया। वे सभी मुण्डन संस्कार के कक्ष में ही अर्हत् हो गए।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१३. उसी दिन राजा ने कण्टक चेतिय स्थान के पास अड़सठ गुफाओं के निर्माण का कार्य आरम्भ कराया।
१४. राजा वापस नगर लौट गया, किन्तु थेर वहीं पर अनुकम्पापूर्वक (केवल) निश्चित समय पर ही भिक्षाटन हेतु नगर प्रवेश करने के लिए रह गए।
१५. गुफा का निर्माण कार्य समाप्त हो जाने पर आसाढ़ महीने के पूर्णमासी के दिन राजा ने विहार को थेरों के लिए दक्षिणा स्वरूप दे दिया।
१६. बत्तीस मालक (गज) की सीमा वाले उस विहार को उसने सीमतिक थेर की वन्दना करके उसी दिन सौंप दिया।
१७. तुम्बरू मालक, जो सभी में प्रथम निर्धारित किया गया था, में उन सभी प्रव्रज्या की अपेक्षा रखने वालों को उपसम्पदा दी जाती थी।
१८. इन सभी बासठ अर्हतों ने वर्षा काल में चेतिय पर्वत (पर बनी गुफाओं) में जाकर राजसंग्रह किया।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
‘चेतियपब्बत विहार के ग्रहण का वर्णन’

समाप्त.

पञ्चमो परिच्छेदो चतुर्थसंगीतिवण्णना

ततो परं थूपारामे दक्खिणक्खकधातुपतिट्ठापनदिवसे यमकपाटिहारिये दिस्वा नगरा पब्बजिता सब्बे तिसंभिक्षुसहस्सानि अहेसुं। ततो परं महाबोधिपतिट्ठापनदिवसे अनुलादेवी पञ्चहि कज्जासतेहि पञ्चहि अन्तेपुरित्थिकासतेही ति मातुगामसहस्सेहि सद्धिं संघमित्तथेरिया सन्तिके पब्बजित्वा न चिरस्सेव सपरिवारा अरहत्ते पतिट्ठासि। अरिट्ठो पि खो रज्जो भागिनेय्यो पञ्चहि पुरिससतेहि सद्धिं थेरस्स सन्तिके पब्बजित्वा न चिरस्सेव अरहत्ते पतिट्ठासि।

अथ खो राजा महिन्दत्थेरं पुच्छि—“पतिट्ठितं नु खो, भन्ते, लंकादीपे सासनं” ति?

“पतिट्ठितं, महाराज, सासनं; सासनस्स मूलानि न ताव ओतरन्ती” ति।

“कदा पन, भन्ते, मूलानि ओतिण्णानि नाम भविस्सन्ती” ति?

“यदा, महाराज, लंकादीपिकानं मातापितुन्नं लंकादीपे जातो दारको लंकादीपे पब्बजित्वा लंकादीपमिह येव विनयं उग्गहेत्वा लंकादीपे वाचेस्सति, तदा सासनस्स मूलानि ओतिण्णानि नाम भविस्सन्ती” ति।

“अत्थि पन, भन्ते, एदिसो भिक्षू” ति?

“अत्थि, महाराज, महाअरिट्ठो नाम भिक्षु पटिबलो एतस्मिं कम्मे” ति।

“मया एत्थ, भन्ते, किं कातब्बं” ति।

“मण्डपं, महाराज, कातुं वट्ठती” ति।

“साधु, भन्ते” ति।

राजा मेघवण्णाभयस्स अमच्चस्स परिवेण्डाने महासंगीतिकाले अजातसत्तुमहाराजेन कतमण्डपाकारं राजानुभावेन मण्डपं कारापेत्वा सब्बतालावचरे सकसकसिप्पेसु योजेत्वा “सासनस्स मूलानि ओतरन्तानि पस्सिस्सामा” ति अनेकपुरिससहस्सपरिवुतो थूपारामं अनुप्पत्तो।

पाँचवाँ परिच्छेद चतुर्थ संगीति का वर्णन

इसके पश्चात् (बुद्ध के) दाहिने हंसली की हड्डी के अवशेष के शूपाराम में प्रतिष्ठापन के दिन यमक प्रतिहार्य^१ देखकर नगर से प्रव्रजित होने वाले कुल तीस हजार भिक्षु थे। इसके बाद महान् बोधिवृक्ष के प्रतिष्ठापन के दिन अनुला देवी^२ ने अपनी पाँच सौ सेविकाओं तथा पाँच सौ अन्तःपुर की स्त्रियों—इस प्रकार एक हजार स्त्रियों के साथ संघमित्त थेरी के पास प्रव्रज्या ग्रहण कर शीघ्र ही सपरिवार अर्हत्व को प्राप्त कर लिया। राजा के भान्जे अरिदठ ने भी पाँच सौ पुरुषों के साथ थेर के पास प्रव्रज्या ग्रहण कर शीघ्र ही अर्हत्व को प्राप्त कर लिया।

इसके पश्चात् राजा ने महिन्द थेर से पूछा—

‘भन्ते! क्या लंकाद्वीप में (बौद्ध) शासन प्रतिष्ठित हो गया?’

‘महाराज! शासन प्रतिष्ठित हो गया, किन्तु शासन के मूल की स्थापना अभी नहीं हुई है।’

‘भन्ते! कब (शासन के) मूल की स्थापना होगी?’

‘महाराज! जब लंका द्वीप के माता—पिता से लंकाद्वीप में उत्पन्न लड़का लंका द्वीप में प्रव्रजित होकर लंका द्वीप में ही विनय सीखकर लंकाद्वीप में (उसका) पाठ करेगा, तब शासन के मूल की स्थापना होगी।’

‘भन्ते! क्या इस प्रकार का (कोई) भिक्षु है?’

‘महाराज! महाअरिदठ नामक भिक्षु इस कार्य में समर्थ है।’

‘भन्ते! (इस सम्बन्ध में) मेरे द्वारा क्या किया जाना चाहिए।’

‘महाराज! मण्डप^३ का निर्माण करवाया जाना चाहिए।’

‘भन्ते! ठीक है।’

राजा मेघवर्ण अभय के अमात्य द्वारा निर्मित परिवेण* के स्थान पर (प्रथम) महासंगीति काल में महाराज अजातसत्तु द्वारा स्थापित मण्डप के समान (ही), राजा (देवानम्पियतिस्स) अपने प्रताप से कक्ष का निर्माण करा (वहाँ) सभी संगीतज्ञों को अपनी—अपनी कला के प्रदर्शन हेतु बुलाकर ‘शासन के मूल को स्थापित होते हुए देखूँगा’ (ऐसा सोच) अनेक हजार व्यक्तियों से घिरा हुआ शूपाराम पहुँचा।

1. स्वयं को दो की संख्या में दिखाने का चमत्कार।
2. देवानम्पियतिस्स के भाई एवं उपराजा नहानाग की पत्नी।
3. विशेष अवसरों के लिए बना अस्थायी तम्बू या कक्ष।

* बोधिनी में देखें।

तेन खो पन समयेन थूपारामे भिक्खुसहस्सानि सन्निपत्तिंसु। महामहिन्दत्येस्स आसनं दक्खिणाभिमुखं पज्जत्तं होति।

महाअरिद्धत्येस्स धम्मासनं उत्तराभिमुखं पज्जत्तं होति। अथ खो महाअरिद्धत्येरो महिन्दत्येरेन अज्झिट्ठो थेरे भिक्खू वन्दित्वा अत्तनो अनुरूपेन पत्तानुक्कमेन धम्मासने निसीदि। महिन्दत्येरप्पमुखा अट्ठसट्ठि महाथेरा धम्मासनं परिवारेत्वा निसीदिंसु। रज्जो पि कनिट्ठभाता मन्ताभयत्येरो नाम “धुरगगहो हुत्वा विनयं उग्गण्हिस्सामी” ति पज्जहि भिक्खुसत्तेहि सद्धिं महाअरिद्धत्येस्स धम्मासनं परिवारेत्वा निसीदि। अवसेसा पि भिक्खू सराजिकाय परिसाय अत्तनो अत्तनो पत्तासने निसीदिंसु।

अथायस्मा महाअरिद्धत्येरो “तेन समयेन बुद्धो भगवा वेरज्जायं विहरति नळेरुपुचिमन्दमूले” ति विनयनिदानं अभासि। भासिते च पनायस्मता अरिद्धत्येरेन विनयनिदाने आकासे महाविरवं विरवि, अकालविज्जुल्लता निच्छरिंसु, देवता साधुकारं अदंसु, महापठवी उदकपरियन्तं कत्वा संकम्पि। एवं अनेकेसु पाटिहारियेसु वत्तमानेसु आयस्मा अरिद्धत्येरो महिन्दत्येरप्पमुखेहि अट्ठसट्ठिया पच्चेकगणेहि खीणासवमहाथेरेहि तदज्जेहि सट्ठिसहस्सेहि भिक्खूहि परिवुतो महापठमकत्तिकपवारणदिवसे थूपारामविहारमज्झे सत्थु करुणादीपकं भगवतो अनुसित्थकारणं कायकम्म—वचीकम्म—विप्फन्दितविनयकरं विनयपिटकं पकासेसि। यथा महाकस्सपत्येरो च यसत्येरो च मोग्गलिपुत्ततिस्सत्येरो च पिटकवसेन च निकायवसेन च अंगवसेन च षट्ठम्मकखन्धवसेन च धम्मं च विनयं च संगायिंसु, एवं धम्मं च विनयं च संगायन्तो महामहिन्दत्येरो लंकादीपे सासनस्स मूलं ओतारेत्वा चतुत्थसंगीतिं अकासि।

संगीतिपरियोसाने अनेकप्पकारो महापठविकम्पो अहोसि। अयं संगीति अनियमितकालेहि निड्ढिता। तेनाहु पोराणा—

उस समय थूपाराम में एक हजार भिक्षु एकत्र थे। महान् महिन्द थेर का आसन दक्षिण दिशा की तरफ मुख किए हुए बिछा था।

महाअरिट्ठ थेर का धम्म—आसन उत्तर दिशा की तरफ मुख किये हुए बिछा था। महिन्द थेर द्वारा आमंत्रित किये जाने पर महाअरिट्ठ थेर (उपस्थित) थेर भिक्षुओं की वन्दना कर क्रम से बिछे आसनों में से स्वयं के योग्य धम्म—आसन पर बैठ गया। महिन्द थेर के नेतृत्व में अइसठ महाथेर धम्म—आसन के चारों तरफ बैठ गए। राजा का कनिष्ठ भ्राता मन्ताभय थेर—‘पूर्ण दृढ़ता के साथ मैं विनय को सीखूँगा’—ऐसा सोच (वह और) पाँच सौ भिक्षु महाअरिट्ठ थेर के आसन के चारों तरफ बैठ गए। शेष भिक्षु भी राजा तथा उसके सेवकों के साथ अपने—अपने लिए बिछे आसन पर बैठ गए।

इसके पश्चात् आयुष्मान् महाअरिट्ठ थेर ने—‘उस समय भगवान् बुद्ध वेरञ्जा में नल्लेरुपुचिमन्द (वृक्ष) के नीचे विहार कर रहे थे,’ इस प्रकार विनय का निदान कहा। आयुष्मान् अरिट्ठ थेर के विनय का निदान कहते ही आकाश में महाध्वनि ध्वनित हुई, असमय ही बिजली चमक उठी, देवताओं ने करतल ध्वनि किया, जल से धिरी हुई महान् पृथ्वी प्रकम्पित हो उठी। इस प्रकार अनेक चमत्कारों के उपस्थित होने पर आयुष्मान् अरिट्ठ थेर, जो महिन्द थेर के नेतृत्व में अपने—अपने गणों वाले क्षीणास्रव अइसठ महान् थेरों तथा उनके अतिरिक्त साठ हजार भिक्षुओं से घिरा हुआ था, ने कार्तिक महीने के प्रथम महान् प्रवारणा दिवस पर थूपाराम विहार के बीच शास्ता, करुणा—दीपक (स्वयं) भगवान् के द्वारा नियम—प्रतिपादन के कारण तथा शारीरिक कर्म, वाचसिक कर्म के दुराचरण को अनुशासित करने वाले विनयपिटक को प्रकाशित किया। जिस प्रकार महाकस्सप थेर, यस थेर तथा मोग्गलिपुत्तत्तिस्स थेर ने पिटक, निकाय, अंग तथा धम्म—स्कन्धों के भेद से धम्म एवं विनय का संगायन किया, उसी प्रकार धम्म एवं विनय का संगायन करते हुए महान् महिन्द थेर ने लंका द्वीप में (बौद्ध) शासन के मूल की स्थापना करके चतुर्थ संगीति का संपादन किया।

संगीति के समापन पर अनेक प्रकार के महान् पृथ्वी कम्पन हुए। यह संगीति अनिश्चित काल में समाप्त हुई। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१९. "सम्बुद्धपरिनिब्बाना, द्वीसु वस्ससतेसु च।
अट्ठतिसे अतिक्कन्ते, राजाहु पियतिस्सको॥"
२०. "महाकस्सपत्थेरो च, यसो तिस्सो च कारयुं।
यथा ते धम्मसंगीतिं, महिन्दो सो पि तं तथा॥"
२१. "महामहिन्दत्थेरो तु, जिनसासनमुत्तमं।
परियत्तिं पटिपत्तिं, पटिवेधं च साधुकं ॥"
२२. "लंकादीपम्हि दीपेत्वा, लंकादीपो महामुनि ।
लंकाय सो सत्थुकप्पो, कत्वा लंकाहितं बहुं ॥"
२३. "अट्ठसट्ठि महाथेरा, धुरग्गाहा समागता।
पच्चेकगणिनो सब्बे, धम्मराजस्स सावका॥"
२४. "खीणासवा वसिप्पत्ता, तेविज्जा इद्धिकोविदा ।
उत्तमत्यं अभिज्जाय, अनुसासिंसु राजिनो ॥"
२५. "चतुत्थं सङ्गहं कत्वा, कत्वा लोकहितं बहुं।
जलित्वा अग्गिक्खन्धा व, निब्बायिंसु महेसयो'ति॥"
२६. "एवं अनिच्चतं जम्मिं, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं फलं ॥"

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

चतुत्थसंगीतिवण्णना

निद्धिता

१९. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के दो सौ अड़तीस वर्ष पश्चात् पियतिस्सक (नामक) राजा हुआ।
२०. जिस प्रकार महाकस्सप थेर, यस एवं तिस्स ने धम्म—संगीति की, उसी प्रकार महिन्द ने भी (की)।
२१. महान महिन्द थेर ने जिन (बुद्ध) के उत्तम शासन—परियत्ति, पटिपत्ति एवं पटिवेध* को अच्छी प्रकार से सीखा।
२२. लंकाद्वीप में (ज्ञान का) प्रकाश फैलाकर, लंकाद्वीप का महामुनि, वह, लंका का अनेक प्रकार से कल्याण करते हुए लंका के शास्ता के समान था।
२३. पूर्ण दृढ़ता के साथ एकत्र, सभी अपने—अपने गणों (शिष्य समुदाय) वाले अड़सठ महाथेर धम्मराज (बुद्ध) के श्रावक थे।
२४. क्षीणास्रव, इन्द्रिय—संयम को प्राप्त, तीन विद्याओं में कुशल, ऋद्धियों के ज्ञाता, उत्तम अर्थ (निर्वाण) के ज्ञानी ने राजा को उपदेश दिया।
२५. चतुर्थ संगीति कर, अनेक लोककल्याण कर, अग्निस्कन्ध के प्रकाशित होने के समान वह महर्षि परिनिवृत्त हो गया।
२६. इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय एवं दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृतपद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
'चतुर्थ संगीति का वर्णन'
समाप्त।

-
1. परियत्ति—बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन।
पटिपत्ति—बौद्ध पद्धति के अनुसार साधना।
पटिवेध—सत्य का सम्यक् रूप से साक्षात्कार।

छट्टो परिच्छेदो पिटकत्तयलेखनवण्णना

तेसं परिनिब्बानतो अपरभागे अज्जे पि तेसं थेरानं अन्तेवासिका तिस्स—
दन्त—कालसुमन—दीघसुमनादयो च महाअरिडुत्थेरस्स अन्तेवासिका चा ति एवं
पुब्बे वुत्तप्पकार—आचरियपरम्परा इमं विनयपिटकं यावज्जतना आनेसुं। तेन
वुत्तं—“ततियसङ्गहतो पन इमं लंकादीपं महिन्दादीहि आभतं, महिन्दतो उग्गहेत्वा
किञ्चि कालं अरिडुत्थेरादीहि आभतं, ततो यावज्जतना तेसं येव अन्ते—
वासिकपरम्पराभूताय आचरियपरम्पराय आभतं” ति।

कत्थ पतिट्ठितं ति? येसं पालितो च अत्थतो च अनूनं पवत्तति, मणिषटे
पक्खित्ततेलमिव ईसकं पि न पग्घरति, एवरूपेसु सतिगतिधितिमन्तेसु लज्जीसु
कुक्कुच्चकेसु सिक्खाकामेसु पुग्गलेसु पतिट्ठितं ति वेदितब्बं। तस्मा विनयपिटकं
पतिट्ठापनत्थं विनयपरियत्तियानिसंसं सल्लकखेत्वा सिक्खाकामेन भिक्खुना विनयो
परियापुणितब्बो। तत्रायं विनयपरियत्तिया आनिसंसो—विनयपरियत्तिकुसलो हि पुग्गलो
पटिलद्धसद्धानं कुलपुत्तानं मातापितुट्ठानियो होति, तदायं ताहि तेसं पब्बज्जा
उपसम्पदा वत्तानुवत्तपटिपत्ति आचारगोचरकुसलता। अपि चस्स विनयपरियत्तिं
निस्साय अत्तनो सीलक्खन्धो सुगुत्तो होति सुरक्खित्तो, कुक्कुच्चपकतानं भिक्खूनं
पटिसरणं होति विसारदो, संघमज्जे वोहरति, पच्चत्तिके सहधम्मेन सुनिग्गहितं
निग्गण्हाति। ये चापि संवरमूलका कुसला धम्मा वुत्ता भगवता, विनयधरो पुग्गलो
तेसं धम्मानं दायादो, विनयमूलकत्ता तेसं धम्मानं। वुत्तम्पि चेतं भगवता—

“विनयो संवरत्थाय संवरो, अविप्पटिसारत्थाय अविप्पटिसारो, पामोज्जत्थाय
पामोज्जं, पीतत्थाय पीति, पस्सद्धत्थाय पस्सद्धि, सुखत्थाय सुखं, समाधत्थाय
समाधि, यथाभूतजाणदस्सनाय यथाभूतजाणदस्सनं, निब्बिदत्थाय निब्बिदा, विरागत्थाय
विरागो, विमुत्तत्थाय विमुत्ति, विमुत्तिजाणदस्सनत्थाय विमुत्तिजाणदस्सनं, अनुपादाय
परिनिब्बानत्थाया” ति।

तस्मा विनयपरियत्तिया आयोगो करणीयो ति। तेनाहु—

१. “देवानम्पियतिसो सो, लंकिन्दो पुज्जपज्जवा ।

चत्ताळीसं च वस्सानि, राजा रज्जं अकारयि ॥”

छठा परिच्छेद तीन पिटकों के लेखन का वर्णन

उनके (महिन्द आदि थेरों के) परिनिर्वाण के पश्चात् उन थेरों के शिष्य तिस्स, दन्त, कालसुमन, दीघसुमन आदि, तथा महाअरिट्ठ थेर के शिष्यों एवं अन्यो ने भी पूर्व वर्णित आचार्य परम्परा के अनुसार इस विनयपिटक को आज तक पहुँचाया। इस सम्बन्ध में कहा गया—‘तृतीय संगीति के पश्चात् लंका द्वीप में यह (विनयपिटक) महिन्द आदि द्वारा लाया गया, महिन्द से शिक्षा ग्रहण कर कुछ काल तक यह अरिट्ठ थेर आदि द्वारा लाया गया, तब से आज तक उसी शिष्य परम्परा तथा आचार्य परम्परा के द्वारा यह लाया गया है।’

यह कहाँ (अंतिम रूप से) स्थित कर दिया गया? जिस प्रकार मणि के घड़े में डाला गया तेल थोड़ा भी नहीं टपकता है, उसी प्रकार जो ग्रन्थ तथा अर्थ (को समझने) में पूर्ण थे, उस प्रकार के स्मृतिवान्, सदाचारी, संकल्पवान्, लज्जाशील, कर्तव्यनिष्ठ एवं सीखने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों में यह स्थित किया गया, ऐसा जानना चाहिए। इसलिए विनयपिटक को स्थापित करने हेतु, विनय की शिक्षा के माहात्म्य पर विचार कर, सीखने की कामना से भिक्षु द्वारा विनय का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जाना चाहिए। विनय की शिक्षा का माहात्म्य इस प्रकार है—‘विनय—ज्ञान में कुशल व्यक्ति श्रद्धा प्राप्त कुलपुत्रों के लिए माता—पिता के स्थान पर होता है, इसलिए उसके (विनय—ज्ञानी) द्वारा उनकी (कुलपुत्रों की) प्रव्रज्या, उपसम्पदा*, सभी प्रकार के कार्य, आचार—व्यवहार कुशलतापूर्वक किए जाते हैं। विनय—ज्ञान के कारण उसका शील भी सुसंयमित एवं सुरक्षित होता है; (वह अन्य) भिक्षुओं के दुराचरण को भी रोकने वाला, रक्षा करने वाला एवं दक्ष होता है; संघ में अच्छा व्यवहार करता है एवं विरोधियों को भी धम्मपूर्वक वश में कर लेता है। जो कुछ भी संयम मूलक कुशल धम्म भगवान् द्वारा कहे गए हैं, विनय—ज्ञानी व्यक्ति उन धम्मों का उत्तराधिकारी होता है, क्योंकि उन सभी धम्मों का मूल विनय है।’

भगवान् द्वारा भी ऐसा कहा गया है—

विनय संयम के लिए है, पश्चाताप के उन्मूलन के लिए है, प्रमोद के लिए है, प्रीति के लिए है, प्रश्रब्धि के लिए है, सुख के लिए है, समाधि के लिए है, सत्य के ज्ञान एवं दर्शन के लिए है, निर्वेद के लिए है, वैराग्य के लिए है, विमुक्ति के लिए है, विमुक्ति के ज्ञान एवं दर्शन के लिए है, उपादानरहित परिनिर्वाण के लिए है।

इसलिये व्यक्ति को विनय ज्ञान हेतु प्रयास करना चाहिए। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

१. लंका नरेश, पुण्यवान् एवं प्रज्ञावान् राजा देवानम्पियतिस्स ने चालीस वर्षों तक शासन किया।

* बोधिनी में देखें।

२. "तस्सच्चये कनिट्ठो सो, उत्तियो इति विस्सुतो।
अनुराधपुरे रम्मे, रज्जं कारेसि खत्तियो ॥"
३. "उपराजा महानागो, यटालो यो महब्बलो ।
गोठाभयो महापुज्जो, काकवण्णो च विरियवा ॥"
४. "चत्तारो ते च राजानो, पुत्तनत्तपरम्परा ।
धम्मेन रज्जं कारेसु, महागामे मनोरमेति ॥"

सम्मासम्बुद्धस्स परिनिब्बानतो छसत्ततिवस्साधिकतिसतसंवच्छरे दुट्ठगामिनिअभयमहाराजा लंकादीपे एकरज्जं पत्वा मरिचवट्टिविहारं कारापेत्वा नवभूमिकं लोहपासादं कारापेत्वा रतनवालिकं महाथूपं सन्निट्ठापेत्वा छन्नवुतिकोटि अरहन्ते भिक्खू सन्निपातेत्वा महादानं दत्वा चतुवीसतिवस्सानि अनुराधपुरे धम्मेन समेन रज्जं कारेत्वा आयुपरियोसाने सुत्तप्पबुद्धो विय तुसितभवने निब्बत्ति। तेन खो पन समयेन लंकादीपवासिभिक्खुसंघो सासनस्स बुद्धत्थाय मुखपाठेन परम्पराय आनीतं तेपिटकबुद्धवचनं सब्बं साट्ठकथं च पाळिं च परिमापुणिंसु। तेनाहु पोराणा—

५. "सम्बुद्धपरिनिब्बाना, तीसु वस्ससतेसु च ।
छसत्तत्यतिकन्तेसु, राजाहु दुट्ठगामिनि ॥"
६. "दुट्ठगामिनि अभयो, लंकिन्दो पुज्जपज्जवा ।
चतुवीसतिवस्सानि, लंकारज्जं अकारयि ॥"
७. "एवं पुज्जानि कत्वान, अनेकानि महीपति ।
कायस्स भेदा सप्पज्जो, तुसितेसूपपज्जथ ॥"

ततो महाथूपपटिष्ठानतो सत्तपज्जाससंवच्छरेसु अतिक्कन्तेसु वट्ठगामिनिअभयमहाराजा लंकादीपे रज्जं कारेसि। सो राजा अभयगिरिमहाविहारं कारापेत्वा तस्मिं विहारे सधातुकं महाथूपपमाणं महन्तं चेतियं कारापेत्वा महातिस्सत्येरपमुखस्स भिक्खुसंघस्स नीयादेसि।

तेन खो पन समयेन लंकादीपवासिभिक्खुसंघो सासनस्स च लोकस्स च परिहीनभावं जत्वा सब्बे भिक्खू धम्मधरा विनयधरा बहुस्सुता पभित्रपटिसम्भिदा महाविहारे सन्निपत्तिंसु। तदा वट्ठगामिनिअभयमहाराजा महाविहारं गत्वा येन भिक्खुसंघो तेनुपसंकमि; उपसंकमित्वा भिक्खुसंघं वन्दित्वा एकमन्तं निसीदि। अथ खो भिक्खुसंघो राजानं एतदवोच—

२. उसकी मृत्यु के बाद उसका उत्तिय नाम से प्रसिद्ध कनिष्ठ भाई राजा हुआ तथा रम्यक अनुराधपुर पर उसने शासन किया।

३-४. महानाग नामक उपराजा, महाबलशाली यटाल, महापुण्यवान गोठाभय तथा वीर्यवान काकवण्ण—इन चार राजाओं ने पुत्र-पौत्र की परम्परा में मनोरम महागाम में धम्मपूर्वक राज्य किया।

सम्यक् सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के तीन सौ छिहत्तर वर्ष पश्चात् लंका द्वीप में महाराजा दुट्ठगामिनी अभय राज्य प्राप्त कर मरिचवट्टि विहार का निर्माण करा, नौ मंजिल का लौह—प्रासाद निर्मित करा, रत्नचूर्ण से महास्तूप को पूर्ण करा, छियानबे करोड़ अर्हत भिक्षुओं को एकत्रित कर महादान देकर, अनुराधपुर में धम्मपूर्वक एवं समानता के साथ चौबीस वर्षों तक राज्य कर, आयु के समाप्त हो जाने पर सोये से जाग गए के समान तुसित भवन में उत्पन्न हुआ। उस समय लंका द्वीप में रहने वाले भिक्षुसंघ ने (बौद्ध) शासन की वृद्धि के लिए मुख पाठ परम्परा से लाए हुए बुद्धवचन तिपिटक को सभी अट्ठकथाओं एवं पाठ के साथ कंठस्थ कर लिया था।

इसी सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

५. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के दो सौ छिहत्तर वर्ष पश्चात् दुट्ठगामिनी नामक राजा हुआ।

६. लंका नरेश, पुण्यवान् एवं प्रज्ञावान् दुट्ठगामिनी ने लंका पर चौबीस वर्षों तक राज्य किया।

७. प्रज्ञावान् राजा अनेक पुण्यों को करके शरीर के नष्ट हो जाने पर तुसित लोक में उत्पन्न हुआ।

तब महास्तूप की स्थापना के सत्तावन वर्ष पश्चात् महाराज वट्ठगामिनी अभय ने लंकाद्वीप पर राज्य किया। उस राजा ने अभयगिरिमहाविहार को निर्मित करा उस विहार में धातु (अवशेष) युक्त विशाल स्तूप के आकार का विशाल चैत्य* बनवाकर उसे महातिस्स थेर के प्रमुखत्व वाले भिक्षुसंघ को सौंप दिया।

उस समय लंका द्वीपवासी भिक्षुसंघ के सभी धम्मधर, विनयधर, बहुश्रुत तथा प्रतिसंविदाओं के ज्ञाता भिक्षु (बौद्ध) शासन एवं संसार के अवनति की संभावना को जानकर महाविहार में एकत्र हुए। तब महाराजा वट्ठगामिनी अभय महाविहार जाकर भिक्षुसंघ के पास गया, पहुँचकर भिक्षुसंघ को प्रणाम कर एक तरफ बैठ गया। इसके बाद भिक्षुसंघ ने राजा से ऐसा कहा—

1. दुट्ठगामिणी का काल प्रथमतः बुद्ध परिनिर्वाण के 376 वर्ष पश्चात् कहा गया है, तत्पश्चात् गाथा सं. 5 में 276 वर्ष पश्चात् कहा गया है। महावंस आदि ग्रन्थों तथा आगे के वर्णन के आधार पर 376 वर्ष ही मान्य प्रतीत होता है।

* बोधिनी में देखें।

“महाराज, मुखपाठेन परम्पराय आनीतं तेपिटकं बुद्धवचनं सब्बं साट्ठकथं च पाळिं च इदानीं मुखपाठेसु तिष्ठति। अनागते पन सासनस्स च लोकस्स च परिहानि भविस्सति। सब्बं तेपिटकं बुद्धवचनं साट्ठकथं च पाळिं च परिहायिस्सति। तस्मा दानि मुखपाठतो तेपिटकं बुद्धवचनं सब्बं साट्ठकथं च पाळिं च पोत्थकेसु लिखापेतब्बं भवेय्या” ति।

“मया एत्थ, भन्ते, किं कातब्बं” ति?

“मण्डपं, महाराज, कारापेतुं सब्बं पोत्थकपण्णं सम्पादेतुं च वट्ठती” ति।

“साधु, भन्ते” ति।

राजा महाविहारे महासंगीतिकाले अजातसत्तुमहाराजेन कतमण्डपाकारं राजानुभावेन मण्डपं कारापेत्वा सब्बं पोत्थकपण्णं सम्पादेत्वा महारहानि आसनानि मण्डपमज्जे पज्जापेत्वा भिक्खुसंघस्स आरोचापेसि—“निष्ठितं, भन्ते, रज्जो किच्च” ति।

तदा भिक्खुसंघो अनेकसतसहस्ससंखासु भिक्खूसु उच्चिनित्वा तेपिटकपरियत्ति— धरानं पभिन्नपटिसम्भिदानं तेविज्जादिभेदानं भिक्खूनं अनेकसहस्समत्ते थेरे भिक्खू अगगहेसि। अथ खो थेरा भिक्खू अत्तनो अत्तनो पत्तासने निसीदित्वा यथा महाकस्सपत्थेरो च यस्सत्थेरो च तिस्सत्थेरो च महिन्दत्थेरो च धम्मविनयं संगायमाना पिटकवसेन च निकायवसेन च अंगवसेन च धम्मकखन्धवसेन च धम्मविनयं संगायिंसु। एवमेव भिक्खुसंघो धम्मं च विनयं च मुखपाठतो पोत्थकेसु लिखापयमानो पिटकवसेन च निकायवसेन च अंगवसेन च धम्मकखन्धवसेन च धम्मविनयसंखातं तेपिटकं बुद्धवचनं साट्ठकथं च पोत्थकेसु लिखापयित्वा पञ्चवस्ससहस्सानि सासनस्स चिरट्ठितं कत्वा पञ्चमं धम्मसंगीतिसदिसं एव अकासि। धम्मलिखितपरियोसाने अनेकप्पकारेन महापठविकम्पो अहोसि। अयं पिटकतयलेखना एकसंवच्छरेन निष्ठिता। तेनाहु प्रोराणा—

८. “सम्बुद्धपरिनिब्बाना, चतुवस्ससतेसु च ।
तेत्तिसेसतिक्कन्तेसु, राजाहु वट्ठगामिनि ॥”
९. “लंकावासि भिक्खुसंघो, पेक्खमानो अनागतं।
हानिं दिस्वान सत्तानं, तदा भिक्खू समागता ॥”
१०. “तेपिटकधरा सब्बे, पभिन्नपटिसम्भिदा ।
खीणासवा वसिप्पत्ता, विनये सुविसारदा ॥”

‘महाराज! मुख पाठ की परम्परा से लाया गया तिपिटक बुद्धवचन सभी अट्ठकथा और पाठ समेत अभी तक मुख पाठ के रूप में ही विद्यमान है। भविष्य में (बौद्ध) शासन एवं संसार की अवनति होगी। सब तिपिटक बुद्धवचन अट्ठकथा एवं पाठ सहित नष्ट हो जाएँगे। इसलिए अब मुखपठित तिपिटक बुद्धवचन सभी अट्ठकथाओं एवं पाठ के साथ पुस्तकों में लिखा जाना चाहिए।’

‘भन्ते! मेरे द्वारा क्या किया जाना चाहिए?’

‘महाराज! कक्ष का निर्माण कराकर पुस्तक के लिए सभी पत्तियों को उपलब्ध कराना चाहिए?’

‘भन्ते! ठीक है।’

(प्रथम) महासंगीति के समय महाराज अजातसत्तु द्वारा निर्मित मण्डप के आकार का राजा (वट्टगामिनी अभय) ने महाविहार में मण्डप का निर्माण करा, पुस्तक के लिए सभी पत्तियों को उपलब्ध करा कर अत्यन्त मूल्यवान आसन को मण्डप के बीच में रखवा कर भिक्षुसंघ को सूचित करवाया—‘भन्ते! राजा का कार्य समाप्त हो गया।’

तब भिक्षुसंघ ने अनेक सौ हजार भिक्षुओं में से तिपिटक को कंठस्थ रखने वाले, प्रतिसंविदाओं में कुशल तथा तीन विद्याओं के ज्ञाता आदि भेद से कई हजार वरिष्ठ (थेर) भिक्षुओं का चयन किया। इसके बाद थेर भिक्षुओं ने अपने-अपने बिछे आसन पर बैठकर (प्रथम संगीति में) महाकस्सप थेर, यस्स थेर, तिस्स थेर तथा महिन्द थेर के द्वारा धम्मविनय का संगायन किए जाने के समान पिटक, निकाय, अंग तथा धम्म—स्कन्ध के भेद से धम्म एवं विनय का संगायन किया। ऐसे ही भिक्षुसंघ ने धम्म तथा विनय को मुख पाठ से पुस्तकों में लिखते हुए; पिटक, निकाय, अंग तथा धम्म—स्कन्ध के भेद से धम्म एवं विनय के संग्रह तिपिटक बुद्धवचन को अट्ठकथा सहित पुस्तकों में लिखकर, पाँच हजार वर्षों तक के लिए (बौद्ध) शासन की उम्र दृढ़ कर के पाँचवीं धम्म—संगीति किया। धम्म लेखन समाप्त होने पर महान् पृथ्वी में अनेक प्रकार से कम्पन हुआ। यह तीन पिटकों का लेखन एक वर्ष में समाप्त हुआ।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

८. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के चार सौ तैंतीस वर्ष पश्चात् वट्टगामिनी राजा हुआ।

९. लंकावासी भिक्षुसंघ ने भविष्य को देखते हुए प्राणियों की अवनति को देखा, तब (समस्त) भिक्षु एकत्र हुए।

१०. सभी तिपिटक को कंठस्थ किये हुए, विविध प्रतिसंविदाओं के ज्ञाता, क्षीणास्रव, आत्मनियंत्रित तथा विनय में अत्यन्त कुशल थे।

9
28
6
0
00
16



११. "तस्मिं महाविहारे च, थेरा भिक्खू समागता ।
पटिपाटिया सन्निसिन्ना, सकसकेपत्तासने ॥"
१२. "पिटकत्तयपाळिं च, तस्सा अट्ठकथं च तं ।
मुखपाठेन आनेसुं, पुब्बे भिक्खू महामती ॥"
१३. "संगीतिवुत्तनयेन, ते थेरा पिटकत्तयं ।
सब्बे सज्झायमकरुं, तस्सा अट्ठकथं च तं ॥"
१४. "चिराट्ठितत्थं धम्मस्स, सासनस्स च बुद्धिया ।
पञ्चवस्सहस्सानि, समत्थं वत्तने कतं ॥"
१५. "सज्झायितनयेनेव, थेरा विनयकोविदा ।
विनयपिटकं सब्बं, पोत्थकेसु लिखापयुं ॥"
१६. "सज्झायितनयेनेव, थेरा सुत्तन्तकोविदा ।
सुत्तन्तपिटकं सब्बं, पोत्थकेसु लिखापयुं ॥"
१७. "सज्झायितनयेनेव, थेराभिधम्मकोविदा ।
अभिधम्मपिटकं चेव, पोत्थकेसु लिखापयुं ॥"
१८. "सब्बम्मि थेरवादं च, सब्बं साट्ठकथं च तं ।
मुखपाठेन आनेत्वा, पोत्थकेसु लिखापयुं ॥"
१९. "लिखितपरियोसाने, अकम्मित्थ महामही ।
अच्छरियानि पाहेसुं, लोके नेकानि नेकधा ॥"
२०. "पिटकत्तयं लिखित्वा, कत्वा लोकहितं बहुं ।
ते यावतायुकं ठत्वा, थेरा सब्बे पि निब्बुता ॥"
२१. "वट्ठगामिनिअभयो, लंकारज्जं अकारयी ।
इति द्वादसवस्सानि, पञ्चमासेसु आदितो ॥"
२२. "एवं पुज्जानि कत्वान, अनेकानि महीपति ।
कायस्स भेदा सप्पज्जो, सगं सो उपपज्जथ ॥"
२३. "एवं अनिच्चतं जम्मि, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं पदं ॥"

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे
पोत्थकेसु पिटकत्तयलिखित-
वण्णना निडिता

११. उस महाविहार में एकत्र थेर भिक्षु क्रमानुसार बिछे हुए आसन में से अपने-अपने आसन पर बैठ गए।
१२. पूर्व में महान् बुद्धि वाले भिक्षुओं द्वारा पिटकत्रय पालि एवं उनकी अट्ठकथा को मुख पाठ द्वारा लाया गया।
१३. वे थेर अट्ठकथा सहित तीन पिटकों को संगीतियों में बोल कर के सामूहिक पाठ करते थे।
१४. धम्म को चिरस्थित करने, शासन की वृद्धि के लिए एवं (उसे) पाँच हजार वर्षों तक स्थित रखने के लिए दृढ़ किया गया।
१५. विनय में कुशल थेरों के द्वारा पाठ किए जाने पर सम्पूर्ण विनयपिटक पुस्तकों में लिखा गया।
१६. सुत्तन्त में कुशल थेरों के द्वारा पाठ किए जाने पर सम्पूर्ण सुत्तपिटक पुस्तकों में लिखा गया।
१७. अभिधम्म में कुशल थेरों के द्वारा पाठ किए जाने पर अभिधम्मपिटक पुस्तकों में लिखा गया।
१८. सम्पूर्ण थेरवाद तथा समस्त अट्ठकथा उन्होंने मुख पाठ से प्रस्तुत कर पुस्तकों में लिखवाया।
१९. लेखन के समाप्त होने पर महान् पृथ्वी में कम्पन हुआ, संसार में अनेक चमत्कार विभिन्न प्रकार से प्रकट हुए।
२०. तीनों पिटकों को लिख, अनेक लोक कल्याण करके वे थेर स्वयं के लिए निश्चित आयु तक जीवित रहकर परिनिवृत्त हो गए।
२१. वट्टगामिनी अभय ने लंका पर बारह वर्ष और पाँच महीने राज्य किया।
२२. इस प्रकार के अनेक पुण्य करके प्रज्ञावान् राजा शरीर के नष्ट होने के पश्चात् स्वर्ग में उत्पन्न हुआ।
२३. इस संसार को अनित्य, तिरष्करणीय एवं दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
 'पुस्तकों में तीन पिटकों के लेखन का वर्णन'
 समाप्त।

सत्तमो परिच्छेदो तेपिटकडुकथापरिवत्तनवण्णना

ततो पिटकत्तयलिखिततो पञ्चसु वस्ससतेसु सोळसवस्सेसु अतिक्कन्तेसु महानामो नाम राजा लंकादीपे रज्जं कारेसि। तस्मिं किर समये जम्बुदीपे मज्झिमदेसे बोधिमण्डसमीपे ब्राह्मणकुले निब्बत्तो एको ब्राह्मणमाणवो अहोसि। सो सब्बसिप्पेसु विसारदो तीसु वेदेसु पारंगतो जम्बुदीपे गाम—निगम—जनपद—राजधानीसु विचरित्वा यत्थ यत्थ पण्डितसमणब्राह्मणा वसन्ति तत्थ तत्थ गन्त्वा साकच्छं करोति। तेन पुट्टपज्जं अज्जे कथेतुं न सक्कोन्ति, सो पि अज्जेन पुट्टपज्जं विस्सज्जेति।

एवं सकलजम्बुदीपमिह परिगणित्वा एकं विहारं पापुणि। तस्मिं पन विहारे अनेकसतभिकखू वसन्ति। तेसं भिकखूनं संघत्थेरो आयस्मा रेवतत्थेरो नाम महा खीणासवो अहोसि पत्तपटिसां इदो परवादप्पमद्दो। अथ खो सो ब्राह्मणमाणवो दिवा च त्तो च मन्तं परिवत्तेत्वा सम्मुण्णपदपरिमण्डलो अहोसि। अथ खो थेरो ब्राह्मणस्स सज्झायन्तस्स सद्दं सुत्वा एवं चिन्तेसि—“अयं ब्राह्मणो महापज्जो, तं दमेतुं वट्ठती” ति। ततो तं आमन्तेत्वा एवं आह—“ब्राह्मण, को नु खो गद्वभरवेन विरवन्तो” ति? ब्राह्मणो, भो पब्बजित, गद्वभरवानं अत्थं किं जानासी ति! “आम जानामी” ति वुत्ते, अथ खो ब्राह्मणो तीसु वेदेसु इतिहासपञ्चमेसु यानि यानि गण्ठिठ्ठानानि, येसं नयं नेव अत्तना पस्सति नास्स आचरियो अद्दस, ते थेरं पुच्छि। थेरो पकतिया पि तिण्णं वेदानं पारगू हुत्वा इदानि पन पटिसम्भिदापत्तो होति, तेनस्स नत्थि तेसं पज्जानं विस्सज्जने भारो ति। तावदेव ते पज्जे विस्सज्जेत्वा ब्राह्मणं आह—“भो ब्राह्मण! अहं तया बहुपुच्छितो, अहं पि दानि तं एकं पज्जं पुच्छामि, व्याकरिस्ससि मे पज्जं” ति।

“आम, भो पब्बजित, पुच्छ व्याकरिस्सामी” ति।

थेरो चित्तयमके इमं पज्जं पुच्छि—“यस्स चित्तं उप्पज्जति न निरुज्झति तस्स चित्तं निरुज्झिस्सति नुप्पजिस्सति; यस्स वा पन चित्तं निरुज्झिस्सति नुप्पज्जिस्सति तस्स चित्तं उप्पज्जिस्सति न निरुज्झिस्सती”ति।

ब्राह्मणो उद्धं वा अधो वा हरितुं असक्कोन्तो “किन्नाम, भो पब्बजित, इदं” ति आह?

“बुद्धमन्तो नामायं ब्राह्मणा”ति।

सातवाँ परिच्छेद तिपिटक की अट्ठकथा के परिवर्तन (अनुवाद) का वर्णन

तिपिटक के लेखन के पाँच सौ सोलह वर्ष पश्चात् महानाम नामक राजा लंका द्वीप में राज्य करता था। उस समय जम्बूद्वीप में मज्झिम देश में बोधिमण्ड के समीप ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न एक ब्राह्मण लड़का था। वह सभी शिक्षाओं में पारंगत एवं तीनों वेदों का ज्ञाता हो, जम्बूद्वीप में ग्राम, निगम, जनपद तथा राजधानियों में विचरण कर जहाँ-जहाँ विद्वान् श्रमण, ब्राह्मण रहते थे, वहाँ-वहाँ जाकर शास्त्रार्थ करता था। उसके पूछे हुए प्रश्नों का उत्तर देने में दूसरे समर्थ नहीं होते थे, किन्तु वह दूसरों के प्रश्नों के उत्तर दे देता था।

इस प्रकार समस्त जम्बूद्वीप में विचरण करते हुए (वह) एक विहार में पहुँचा। उस विहार में कई सौ भिक्षु निवास करते थे। उन भिक्षुओं के संघ का वरिष्ठतम आयुष्मान् रेवत थेर नामक भिक्षु महान् क्षीणाम्रव, प्रतिसंविदाओं को प्राप्त तथा परवाद का खण्डन करने वाला था। वह ब्राह्मण लड़का दिन और रात एक मंत्र का पाठ करते हुए उसके समस्त अंगों का ज्ञाता हो गया था। इसके बाद थेर ने ब्राह्मण के उच्चरित शब्दों को सुनकर ऐसा सोचा—‘यह ब्राह्मण महाप्रज्ञावान् है, उसे दमन (संयत) करना उचित होगा।’ तब उसे आमन्त्रित कर ऐसा कहा—‘ब्राह्मण! यह कौन गधे की आवाज में चिल्ला रहा है।’ ब्राह्मण ने जवाब दिया—‘प्रव्रजित! गधे की आवाज का अर्थ जानते हो?’ ‘हाँ जानता हूँ’ ऐसा (रेवत थेर द्वारा) कहे जाने पर ब्राह्मण ने उससे तीन वेदों तथा (ज्ञान के) पाँचवें भाग इतिहास में से ऐसे-ऐसे उलझे हुए प्रश्न पूछे, जिसे न वह स्वयं जानता था न उसका आचार्य ही। (रेवत) थेर स्वाभाविक रूप से तीन वेदों में पारंगत हो अब प्रतिसंविदाओं को प्राप्त कर चुका था, अतः उसके लिये उन प्रश्नों का उत्तर देना कठिन नहीं था। उसी क्षण उन प्रश्नों के उत्तर देकर (रेवत थेर ने) ब्राह्मण को कहा—‘ब्राह्मण! तुम्हारे द्वारा मुझसे बहुत (से प्रश्न) पूछे गए, अब मैं एक प्रश्न पूछता हूँ, उत्तर दोगे?’

‘हाँ, प्रव्रजित, उत्तर दूँगा।’

थेर ने यमक चित्त से यह प्रश्न पूछा—‘जिसका चित्त उत्पन्न होता है, निरुद्ध नहीं होता, उसका चित्त निरुद्ध होगा, उत्पन्न नहीं होगा; किन्तु जिसका चित्त निरुद्ध होगा और उत्पन्न नहीं होगा, उसका चित्त उत्पन्न होता है, निरुद्ध नहीं होता।’

(वह) ब्राह्मण ऊपर या नीचे से (प्रश्न को) संभालने में असमर्थ हो बोला—‘प्रव्रजित! यह क्या है?’

‘ब्राह्मण! यह बुद्धमन्त्र है।’

“सक्का पन तं भो, मय्हमि दातुं” ति।

“सक्का, ब्राह्मण, अम्हेहि गहितपब्बज्जं गण्हन्तस्स दातुं” ति।

ततो ब्राह्मणो मन्तत्थाय पब्बज्जं याचि। थेरो ब्राह्मणं पब्बाजेत्वा उपसम्पादेसि।

अथ खो थेरो सब्बं पि तेपिटकं बुद्धवचनं उगगण्हापेसि। तेनाहु पोरणा—

१. “बोधिमण्डसमीपमिह, जातो ब्राह्मणमाणवो ।
विज्जासिप्पकलावेदी, तीसु वेदेसु पारगो ॥”
२. “सम्माविज्जातसमयो, सब्बवादविसारदो ।
वादत्थि जम्बुदीपमिह, आहिन्डन्तो पवादको ॥”
३. “विहारं एकं आगम्म, रत्तिं पातज्जली मतं ।
परिवत्तेति सम्मुण्ण—पदं सुपरिमण्डलं ॥”
४. “तत्थेको रेवतो नाम, महाथेरो विजानिय ।
महापज्जो अयं सत्तो, दमेतुं वट्ठी’ ति सो ॥”
५. “को नु गद्रभरवेन विरवन्तो’ति अब्रुवि ।
गद्रभानं रवे अत्थं, किं जानासी’ति आह तं ॥”
६. “आम जानामि’ वुत्तो सो, ओतारेसि सकं मतं ।
पुट्ठं पुट्ठं वियाकासि, विरोधं पि च दस्सयि ॥”
७. “तेन हि त्वं सकं वादं, ओतरेही’ति चोदितो ।
पाळिमाहाभिधम्मस्स, अत्थं अस्स न सोधिय ॥”
८. “आह ‘कस्सेस मन्तो’ति, ‘बुद्धमन्तो’ति सो ब्रुवि ।
‘देहि मे तं’ति वुत्ते पि, ‘गण्ह पब्बज्जितं’ इति ॥”
९. “चोदितो पुब्बहेतूहि, मन्तत्थाय स पब्बजि ।
कम्मट्ठानमदा थेरो, पब्बाजेत्वा यथारहं ॥”

‘क्या तुम मुझे दे सकते हो?’

‘ब्राह्मण! हमारे द्वारा प्रव्रज्या ग्रहण किए हुए को ही देना संभव है।’

तब ब्राह्मण ने मन्त्र की प्राप्ति के लिए प्रव्रज्या की याचना की। थेर ने ब्राह्मण को प्रव्रजित कर (उसे) उपसम्पदा दी। इसके बाद थेर ने (उसे) सभी तिपिटक बुद्धवचन की शिक्षा दी।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१. विद्या, शिल्प एवं कला का ज्ञाता, तीन वेदों में पारंगत ब्राह्मण लड़का बोधिमण्ड के समीप उत्पन्न हुआ।
२. शास्त्र का सम्यक् प्रकार से ज्ञाता, सभी वादों (मतों) में दक्ष, शास्त्रार्थी जम्बूद्वीप में शास्त्रार्थ की इच्छा से विचरण करता था।
३. एक विहार में आकर रात्रि में समस्त पदों सहित शुद्धता के साथ पातज्जल—मत का पाठ कर रहा था।
४. तब रेवत नामक एक महाथेर ने उसे जानकर ‘यह व्यक्ति महाप्रज्ञावान् है, इसे दमन (संयम) करना उचित होगा’ ऐसा सोचा।
५. ‘कौन गधे की आवाज में चिल्ला रहा है?’ (थेर ने) ऐसा कहा। ‘गधे की आवाज का अर्थ जानते हो?’ (ब्राह्मण ने) ऐसा जवाब दिया।
६. ‘हाँ जानता हूँ’ (थेर द्वारा) ऐसा कहे जाने पर उसने (ब्राह्मण ने) अपने मत का प्रदर्शन किया। (थेर ने) पूछे गए प्रश्नों का उत्तर दिया तथा (उसके मत से) विरोध भी दर्शाया।
७. खण्डन किए जाने पर ‘तब तुम अपना मत बतलाओ’ (ब्राह्मण ने) ऐसा कहा। (थेर द्वारा) कहे गए अभिधम्म के पाठ को वह (ब्राह्मण) न समझ सका।
८. ‘यह किसका मन्त्र है?’ (ब्राह्मण ने) पूछा, ‘यह बुद्धमन्त्र है’ उसने (थेर ने) जवाब दिया। ‘तुम मुझे इसे सिखा दो’ ऐसा (ब्राह्मण द्वारा) कहे जाने पर ‘प्रव्रज्या ग्रहण करो’ ऐसा (थेर ने) कहा।
९. खण्डन किए जाने पर पूर्ववर्णित कारणों से उसने मन्त्र जानने की इच्छा से प्रव्रज्या ग्रहण कर लिया। थेर ने उसे उचित विधि से प्रव्रजित करा कर कम्मट्ठान* सिखाया।

* बोधिनी में देखें।

१०. “उपसम्मादयित्वा सो, उग्गणिह पिटकत्तयं ।

अतीव पाकटो आसि, चन्दो व सुरियो व सो ॥”

११. “बुद्धस्स विय गंभीरघोसत्ता नं वियाकरुं ।

बुद्धघोसो ति घोसो हि, बुद्धो विय महीतले’ ति ॥”

ततो पट्ठाय सो भिक्खु बुद्धघोसत्थेरो नामा ति लोके पाकटो अहोसि। तदा सो तत्थ विहारे जाणोदयं नाम पकरणं कत्वा धम्मसङ्गणिया अट्ठकथं च अट्ठसालिनी नाम परित्तट्ठकथं च कातुं आरभितो होति। अथ खो आयस्मा रेवतत्थेरो तं दिस्वा एवं आह—“इधायुसो बुद्धघोस, जम्बुदीपे पिटकत्तयपाळित्तमेव अत्थि, तस्स अट्ठकथा च आचरियवादा च न विज्जन्ति। सीहलट्ठकथा पन सङ्गीतित्तयमारुहहा सारिपुत्तादीहि कतं महिन्देन कथामगं ओलोकेत्वा सीहलभासाय कता सीहलदीपे पवत्तति। त्वं पि तत्थ गन्त्वा सब्बं उपपरिक्खित्वा मागधाय निरुत्तिया परिवत्तेहि। सा अट्ठकथा सब्बलोकितावहा” ति।

एवं वुत्ते, आयस्मा बुद्धघोसो पीतिसोमनस्सप्पत्तो हुत्वा उपज्झायं च भिक्खुसङ्घं च वन्दित्वा आपुच्छित्वा अनुगमनेन नागपट्टनं सम्पापुणि। अथ सक्को देवराजा हरीतकीफलं च लेखनिं च तस्स दत्त्वा सकट्टानमेव गतो। ततो सो नावं अभिरुहित्वा महासमुद्रमज्जे आयस्मन्तं बुद्धदत्तत्थेरं पटिपथं दिस्वा कथासल्लापं कत्वा, ततो परं लङ्कापट्टनं पापुणित्वा, इमस्स महानामस्स रज्जो रज्जप्पत्तकाले अनुराधपुरे महाविहारे भिक्खुसङ्घं पस्सित्वा, महापधानघरे सङ्घपालत्थेरस्स सन्तिकं गन्त्वा, सीहलट्ठकथं सब्बं थेरवादं च सुणित्वा, अयं धम्मसामिस्स बुद्धस्स अधिप्पायो ति निच्छयं कत्वा, तस्मिं विहारे सङ्घसन्निपातं कत्वा एवमाह—“भन्ते सङ्घ, पिटकट्ठकथं कातुं मम पोत्थके देथा” ति।

तदा भिक्खुसङ्घो तस्स समत्थभावं विमंसितुं गाथाद्वयं दत्त्वा—“तव समत्थभावं पस्सित्वा, सब्बे पोत्थके देमा” ति आह। अथ खो आयस्मा बुद्धघोसो पिटकत्तयपाळिं च तस्स अट्ठकथं च पस्सित्वा विसुद्धिमगं नाम पकरणं सङ्गहेत्वा अकासि। तदा देवता तस्स नेपुज्जं महाजने पकासेतुं तं पोत्थकं अन्तरधापेसि। सो पि अज्जं अकासि येव। तं पि देवता अन्तरधापेसि। सो पि तिकखत्तुं अकासि येव। तस्मिं खणे देवता द्वे पोत्थके तस्स अदासि। तदा तीणि पोत्थकानि अहेसुं।

१०. उपसम्पदा प्राप्त कर उसने तीन पिटकों की शिक्षा ग्रहण की तथा वह चन्द्रमा एवं सूर्य के समान प्रकाशित हुआ।
११. उसकी वाणी माहात्म्य में बुद्ध के समान गम्भीर थी, अतः वह बुद्धघोस (बुद्धघोष) कहलाया। सम्पूर्ण पृथ्वी पर उसका घोष बुद्ध के समान कहा गया।

उसके बाद से वह भिक्षु बुद्धघोस थेर नाम से संसार में प्रसिद्ध हुआ। तब उस विहार में उसने 'जाणोदय' नामक रचना करके, धम्मसंगणि की अट्ठसालिनी नामक अट्ठकथा लिखकर, परित्तट्ठकथा लिखना प्रारम्भ किया। इसके बाद आयुष्मान् रेवत थेर ने यह देखकर ऐसा कहा—'आवुस बुद्धघोस! यहाँ, जम्बूद्वीप में, पिटकत्रय पालि (पालि तिपिटक) ही है, उनकी अट्ठकथाएँ तथा आचार्यों के मत विद्यमान नहीं हैं। तीन संगीतियों में सारिपुत्त आदि कृत तथा महिन्द द्वारा सविवरण अवलोकित (मागधी अट्ठकथाएँ अब) सिंहली भाषा में तैयार हो सिंहली अट्ठकथाओं के रूप में सिंहल द्वीप में विद्यमान है। तुम वहाँ जाकर उन सब का परीक्षण करके (उन्हें) मगध वालों की बोली (मागधी) में परिवर्तित करो। वह अट्ठकथा सम्पूर्ण लोक के लिए हितकारी होगी।'

ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् बुद्धघोस प्रीति एवं सौमनस्य से युक्त हो उपाध्याय तथा भिक्षुसंघ की वन्दना करके एवं अनुमति लेकर मार्ग पर अग्रसर हो नागपट्टन पहुँचा। इसके बाद देवराज सक्क उसे हरीतकी का फल तथा कलम देकर अपने स्थान पर लौट गया। तब नाव पर चढ़कर महासागर के मध्य में आयुष्मान् बुद्धदत्त थेर को मार्ग में देखकर उनसे वार्ता कर तत्पश्चात् लंकापट्टन पहुँचकर, राजा महानाम के शासनकाल में अनुराधपुर के महाविहार में भिक्षुसंघ को देखकर, महापधान कक्ष में संघपाल थेर के पास जाकर सिंहली अट्ठकथा तथा समस्त थेरवाद को सुनकर 'यही धम्म—स्वामी बुद्ध का वास्तविक मंतव्य है' ऐसा निश्चय कर, उस विहार में संघ को एकत्र करके उसने ऐसा कहा—'भन्ते संघ (सदस्यों)! पिटकों की अट्ठकथा को (अनुवाद) करने हेतु मुझे पुस्तकों को सौंप दें।'

तब भिक्षुसंघ ने उनकी प्रतिभा का परीक्षण करने के लिए दो गाथाएँ देकर—'तुम्हारी प्रतिभा देखकर सभी पुस्तकों को सौंपेंगे'—ऐसा कहा। इसके बाद आयुष्मान् बुद्धघोस ने तीन पिटकों और उनकी अट्ठकथा को देखकर 'विसुद्धिमग्ग' नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया। तब देवताओं ने उसकी निपुणता को बड़ी संख्या में लोगों में प्रकाशित करने हेतु उस पुस्तक को अन्तर्धान कर दिया। उसने भी अन्य (दूसरी प्रति) का प्रणयन कर दिया। उसे भी देवताओं ने अन्तर्धान कर दिया। उसने भी तीसरी बार प्रणयन किया। उसी क्षण देवताओं ने (पूर्व—रचित) दोनों पुस्तकें उसे दे दी। तब तीन पुस्तकें (प्रतियाँ) हो गईं।

अथ खो आयस्मा बुद्धघोसो तीणि पोत्यकानि गहेत्वा भिक्खुसङ्घस्स नीयादेसि ।
तदा भिक्खुसङ्घो तीणि पोत्यकानि एकतो वाचेसि । गन्थतो वा अक्खरतो वा पदतो
वा व्यञ्जनतो वा अत्यतो वा पुब्बापरवसेन वा थेरवादादीहि वा पाळीहि वा तीसु
पोत्यकेसु अञ्जत्यतं नाम नाहोसि ।

तेनाहु पोराणा—

१२. “तत्थ जाणोदयं नाम, कत्वा पकरणं तदा ।
धम्मसङ्गणिया कासि, कच्छं सो अट्टसालिनिं ॥”
१३. “परित्तट्ठकथञ्चेव, कातुमारभि बुद्धिमा ।
तं दिस्वां रेवतो थेरो, इदं वचनं अब्रुवी ॥”
१४. “पाळिमत्तमिधानीतं, नत्थि अट्ठकथा इध ।
तथाचरियवादा च, भिन्नरूपा न विज्जरे ॥”
१५. “सीहलट्ठकथा सुद्धा, महिन्देन मतीमता ।
सङ्गीतित्तयमारूळ्हं, सम्मासम्बुद्धदेसितं ॥”
१६. “सारिपुत्तादीहि कतं, कथामगं समेक्खिय ।
कता सीहलभासाय, सीहलेसु पवत्तति ॥”
१७. “त्वं तत्थ गन्त्वा सुत्वा, तं मागधाय निरुत्तिया ।
परिवत्तेहि सा होति, सब्बलोकहितावहा ॥”
१८. “एवं वुत्ते पसन्नो सो, निक्खमित्वा ततो इमं ।
दीपमागा इमस्सेव, रज्जो काले महामती ॥”
१९. “महाविहारं सम्पत्तो, विहारं सब्बसाधुनं ।
महापधानधरं गन्त्वा, सङ्घपालस्स सन्तिका ॥”
२०. “सीहलट्ठकथं सुत्वा, थेरवादं च सब्बसो ।
धम्मस्सामिस्स एसो'व, अधिप्पायो'ति निच्छिय ॥”
२१. “तत्थ सङ्घं समानेत्वा, 'कातुं अट्ठकथं मम ।
पोत्यके देथ सब्बे' ति, आह वीमसितुं सतं ॥”
२२. “सङ्घो गाथद्वयं तस्स दासि 'सामत्थियं तव ।
एत्थ दस्सेहि तं दिस्वा, सब्बे देमा ति पोत्यके ॥”
२३. “पिटकत्तयमेत्थेव, सद्धिं अट्ठकथाय सो ।
विसुद्धिमगं नामाका, सङ्गहेत्वा समासतो ॥”
२४. “ततो सङ्घं समूहेत्वा, सम्बुद्धमतकोविदं ।
महाबोधिसमीपमिहं, सो तं वाचेतुमारभि ॥”

इसके बाद आयुष्मान् बुद्धघोस ने तीनों पुस्तकों को लेकर भिक्षुसंघ के समक्ष प्रस्तुत किया। तब भिक्षुसंघ ने तीनों पुस्तकों का एक साथ पाठ किया। संयोजनों या अक्षरों या पदों या व्यञ्जनों या अर्थों या पूर्व तथा अपर या थेरवाद की परम्परा या पाठ में तीनों पुस्तकों में कहीं भी थोड़ा भी अन्तर नहीं था।

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

१२. तब वहाँ (जम्बूद्वीप में) जाणोदय नामक ग्रन्थ की रचना कर उसने धम्मसंगणि की अट्ठकथा अट्ठसालिनी लिखी।
१३. बुद्धिमान व्यक्ति ने इसके बाद परित्तट्ठकथा आरम्भ ही किया कि रेवत थेर ने उसे देखकर ये वचन कहे।
१४. यहाँ पालि मात्र (तिपिटक) ही है, अट्ठकथाएँ नहीं हैं एवं न ही आचार्यों के मतों के विभिन्न रूप विद्यमान हैं।
१५. तीन संगीतियों में निश्चित किए गए सम्यक् सम्बुद्ध के उपदेशों की मतिवान महिन्द द्वारा (संपादित) की गई सिंहली अट्ठकथाएँ शुद्ध हैं।
१६. सारिपुत्त आदि द्वारा कृत (मागधी अट्ठकथाओं) के विवरण का अवलोकन कर तैयार की गई ये (अट्ठकथाएँ) सिंहली भाषा में सिंहल देश में विद्यमान हैं।
१७. तुम वहाँ जाकर, सुनकर उन्हें मगध वालों की बोली (मागधी) में परिवर्तित करो। वे (अट्ठकथाएँ) सम्पूर्ण लोकहित के लिए होंगी।
१८. इस प्रकार कहे जाने पर वह बुद्धिमान (बुद्धघोस) प्रसन्न हो वहाँ से निकलकर इस राजा (महानाम) के समय में (लंका) द्वीप पहुँचा।
१९. महाविहार पहुँचकर विहारों में सर्वश्रेष्ठ महापधान कक्ष में जाकर वह संघपाल (थेर) के पास गया।
२०. सिंहली अट्ठकथा तथा सम्पूर्ण थेरवाद को सुनकर 'यही धम्म—स्वामी (बुद्ध) का वास्तविक मन्तव्य है' ऐसा निश्चय किया।
- २१—२२. वहाँ संघ को एकत्र कर 'मुझे अट्ठकथा का (अनुवाद) करने हेतु सभी पुस्तकें दें' ऐसा कहा। उसकी प्रतिभा की परीक्षा करने के लिए संघ ने उसे दो गाथाएँ दीं (और कहा)—'तुम अपनी प्रतिभा को दर्शाओ, उसे देखकर सभी पुस्तकें दी जाएँगी।'।
२३. इन (दो गाथाओं) पर उसने तीन पिटकों के साथ अट्ठकथा की सहायता लेते हुए उनका समन्वय किया तथा विसुद्धिमग्ग नामक ग्रन्थ की रचना की।
२४. तब सम्बुद्ध के सिद्धान्तों में कुशल संघ को एकत्र कर महाबोधि (वृक्ष) के समीप उसने (विसुद्धिमग्ग का) पाठ प्रारम्भ कर दिया।

२५. “देवता तस्स नेपुञ्जं, पकासेतुं महाजने ।
छादेसुं पोत्थकं सो पि, द्वत्तिक्खत्तुं पि तं अका ॥”
२६. “वाचेतुं ततिये वारे, पोत्थके समुदाहटे ।
पोत्थकद्द्वयमज्जम्पि, सण्ठपेसुं तहिं मरू ॥”
२७. “वाचयिसु तदा भिक्खू, पोत्थकत्तयमेकतो ।
गन्थतो अत्थतो वा पि, पुब्बापरवसेन वा ॥”
२८. “थेरेवादेहि पाळीहि, पदेहि व्यज्जनेहि च ।
अज्जथत्तमहु नेव, पोत्थकेसु पि तीसु पीति ॥”

सन्निष्ठापितेसु पनायस्मता बुद्धघोसेन तीसु पोत्थकेसु आकासे महावरिवं विरवि, अकाल—विज्जुल्लता निच्छरिसु, देवता साधुकारं अदंसु। तेन खो पन समयेन महाविहारे अनेकभिक्खुसहस्सानि सन्निपतित्वा तं महब्भुतं दिस्वा तुट्ठपहट्ठा साधुकारं दत्त्वा पुनप्पुनं वुच्चमाना—‘अयं निस्संसयं मेतेय्यो बोधिसत्तो आगतो’ ति उग्घोसेसुं। ततो महानामराजा तं सुत्वा महतिया राजपरिसाय परिवुतो नगरा निक्खमित्त्वा महाविहारं गन्त्वा भिक्खुसङ्घं वन्दित्वा तं आयस्मन्तं बुद्धघोसत्थेरं वन्दित्वा निमत्तेसि—“भन्ते, याव धम्मपरियोसाना मम राजगेहे भिक्खं गणहथा” ति। सो तुण्हीभावेन अधिवासेसि।

अथ खो भिक्खुसङ्घो पिटकत्तयपाळिपोत्थके सीहलट्ठकथापोत्थकेहि सद्धिं अदासि। अथ खो आयस्मा बुद्धघोसो सब्बे पोत्थके गहेत्वा महाविहारस्स दक्खिणभागे पधानघरं नाम एकस्मिं पासादे वसन्तो पिटकत्तयस्स अट्ठकथं कुरयमानो सब्बं सीहलट्ठकथं मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया परिवत्तेसि। समन्तपासादिकाय वुत्ता तिविधट्ठकथा। कतमा? महाअट्ठकथा च महापच्चरिअट्ठकथा च महाकुरुन्दअट्ठकथा चा ति इमा तिस्सो अट्ठकथायो सीहलट्ठकथा नाम। महाअट्ठकथा नाम पठममहासङ्गीतिमारूळ्हा महाकस्सपपमुखेहि थेरेहि कता, महामहिन्देन आनेत्वा सीहलभासाय कता, महाअट्ठकथा नाम जाता। महापच्चरियं नाम सीहलभासाय उलुम्पो किर अत्थि, तस्मिं निसीदित्वा कतत्ता पच्चरियं नाम जाता अट्ठकथा। कुरुन्दट्ठकथा नाम कुरुन्दवेळुविहारो अत्थि, तस्मिं निसीदित्वा कतत्ता कुरुन्दि नाम जाता अट्ठकथा।

अथ खो सो आयस्मा बुद्धघोसो कुरुन्दट्ठकथं सीहलभासं परिवत्तेत्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया समन्तपासादिका नाम विनयपिटकट्ठकथा अकासि। वुत्तं हि तत्थ—

२५. देवताओं ने उसकी निपुणता को बड़ी संख्या में लोगों में प्रदर्शित करने हेतु उस पुस्तक को (दो बार) अन्तर्धान कर दिया। उसने (बुद्धघोस) भी उस ग्रन्थ का तीन बार प्रणयन किया।
२६. जब तीसरी बार उसने पुस्तक की रचना की, तब देवताओं ने अन्य दो पुस्तकों को भी उपस्थित कर दिया।
- २७-२८. तब भिक्षुओं ने तीनों पुस्तकों का एक साथ पाठ किया। न तो संयोजन में, न अर्थ में, न पूर्व तथा अपर में, न धेरवाद की परम्परा में, न पाठ में और न व्यञ्जन में ही तीनों पुस्तकों में थोड़ा भी अन्तर था।

आयुष्मान् बुद्धघोस द्वारा तीनों प्रतियाँ तैयार किए जाने पर आकाश में महान ध्वनि सुनी गई, असमय बिजली चमकने लगी तथा देवताओं ने साधुकार किया। उस समय महाविहार में (उपस्थित) अनेक हजार भिक्षुओं ने एकत्र हो उन महान् चमत्कारों को देखकर संतुष्ट तथा प्रसन्न हो साधुकार दे पुनः पुनः कहते हुए कि—‘यह निश्चित रूप से मेतेय्य (मैत्रेय)* बुद्ध आ गए हैं’—ऐसा उद्घोष किया। तब इसे सुनकर, महान् राजपरिषद से घिरा हुआ नगर से निकल कर, महाविहार जाकर, भिक्षुसंघ की वन्दना कर, राजा महानाम ने उस आयुष्मान् बुद्धघोस धेर की वन्दना कर निमंत्रण दिया—‘भन्ते! धम्म का उपदेश समाप्त होने तक मेरे राजमहल में भिक्षा ग्रहण करें।’ उसने मौन भाव से स्वीकार कर लिया।

इसके बाद भिक्षुसंघ ने तीनों पिटक सम्बन्धी ग्रंथों को सिंहली अट्ठकथाओं के साथ दे दिया। तब सभी पुस्तकों को लेकर, महाविहार के दक्षिण भाग में पधानघर नामक एक प्रासाद में रहते हुए, तीन पिटकों की अट्ठकथा तैयार करने की इच्छा से आयुष्मान् बुद्धघोस ने सभी सिंहली अट्ठकथाओं को मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में परिवर्तित (अनुवाद) किया। समन्तपासादिका में तीन प्रकार की अट्ठकथा बताई गई है। कौन सी? महा अट्ठकथा, महापच्चरि अट्ठकथा तथा महाकुरुन्द अट्ठकथा—ये तीन अट्ठकथाएँ सिंहली अट्ठकथाएँ हैं। प्रथम महासंगीति में निश्चित की गई, धेरों के प्रमुख महाकस्सप द्वारा रचित तथा महामहिन्द द्वारा (सिंहल देश में) लाए जाकर सिंहली भाषा में अनूदित होने के कारण इसका नाम महा अट्ठकथा पड़ा है। सिंहली भाषा में कहा गया है कि बेड़े (पच्चरि) पर बैठ कर रचे जाने के कारण वह (दूसरी) अट्ठकथा (महा) पच्चरि कहलाती है। कुरुन्दवेलुविहार में बैठकर रचे जाने के कारण वह (तीसरी) अट्ठकथा (महा) कुरुन्द अट्ठकथा कहलाती है।

इसके बाद आयुष्मान् बुद्धघोस ने सिंहली भाषा के कुरुन्द अट्ठकथा को मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में अनुवादित कर विनयपिटक की अट्ठकथा समन्तपासादिका की रचना की। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

* बोधिनी में देखें।

२९. “विनये पाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्ढिया ।

मागधाय समारद्धा, विनयट्ठकथा व सा ॥”

३०. “समन्तपासादिका नाम, सब्बसो परिनिड्ढिता ।

सत्तवीससहस्सेहि, गन्थेहि परिमाणता ॥”

तदनन्तरं सुत्तन्तपिटके महाअट्ठकथा सीहलभासं परिवत्तेत्वा सुमङ्गलविलासिनी नाम दीघनिकायअट्ठकथं च ठपेसि। तथा पपञ्चसूदनी नाम मज्झिमनिकायट्ठ—कथं च ठपेसि। तथा सारत्थप्पकासनी नाम संयुत्तनिकायट्ठकथं च ठपेसि। तथा मनोरथपूरणी नाम अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथं च ठपेसि। वुत्तम्हि तत्थ—

३१. ‘सुत्तन्तपाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्ढिया ।

मागधाय समारद्धा, सुत्तन्तट्ठकथा व सा ॥”

३२. ‘चतुनिकायट्ठकथा, सब्बसो परिनिड्ढिता ।

सा असीतिसहस्सेहि, गन्थेहि परिमाणतो ॥”

३३. “खुदकनिकायट्ठकथा, सब्बसो परिनिड्ढिता ।

सत्ततिससहस्सेहि, गन्थेहि परिमाणतो ॥”

तदनन्तरं अभिधम्मपिटके महापच्चरियट्ठकथा सीहलभासं परिवत्तेत्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया अट्ठसालिनी नाम धम्मसङ्गणिअट्ठकथं च ठपेसि। तथा सम्मोहविनोदनी नाम विभङ्गप्पकरणट्ठकथं च ठपेसि।

वुत्तम्हि तत्थ—

३४. “अभिधम्मपाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्ढिया ।

मागधाय समारद्धा, अभिधम्मट्ठकथा व सा ॥”

३५. “अट्ठसालिनि—नामादि, सब्बसो परिनिड्ढिता ।

तिससहस्समतैहि, गन्थेहि परिमाणतो ॥”

पुब्बे थेरिकाचरियादीहि पाळिनयं गहेत्वा गतं थेरवादं नाम सब्बेसम्पि मागधिकाय निरुत्तिया अट्ठकथं अकासि. येव। सा पिटकट्ठकथा सब्बदेसन्तरवासीनं हितावहा अहोसि। पिटकट्ठकथापरियोसाने अनेकप्पकारं महापठविकम्पो अहोसि। अयं पिटकट्ठकथा करीयमाना एकसम्बच्छरेनेव निड्ढिता।

२९. विनय में कुशलता प्रदान करते हेतु तथा (बौद्ध) शासन की वृद्धि के लिए उसने विनय की अट्ठकथा को मागधी में (तैयार करना) प्रारम्भ किया।

३०. उसने सत्ताईस हजार अक्षरों के विस्तार वाले समन्तपासादिका को पूर्ण रूप से समाप्त किया।

तत्पश्चात् उसने सुत्तपिटक में महा अट्ठकथा को सिंहली भाषा से अनुवादित कर दीघनिकाय की अट्ठकथा सुमंगलविलासिनी का निर्माण किया। तब पपञ्चसूदनी नामक मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा की रचना की। तत्पश्चात् सारत्थप्पकासनी नामक संयुत्तनिकाय की अट्ठकथा की रचना की। तब मनोरथपूरणी नामक अंगुत्तरनिकाय की अट्ठकथा की रचना की। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

३१. सुत्तन्त में कुशलता प्रदान करने के लिए तथा (बौद्ध) शासन की वृद्धि के लिए उसने सुत्त की अट्ठकथा को मगध की बोली में (तैयार करना) प्रारम्भ किया।

३२. और उसने अस्सी हजार अक्षरों के विस्तार वाले चार निकायों की अट्ठकथाएँ पूर्ण रूप से समाप्त कीं।

३३. उसने सैंतीस हजार अक्षरों के विस्तार वाले खुद्दकनिकाय की अट्ठकथा को भी पूर्ण रूप से समाप्त किया।

तत्पश्चात् अभिधम्मपिटक में महापच्चरि अट्ठकथा को सिंहली भाषा से अनुवादित कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में धम्मसंगणि की अट्ठकथा अट्ठसालिनी की (उसने) रचना की। तब विभंगप्पकरण की सम्मोहविनोदनी नामक अट्ठकथा की रचना की। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

३४. अभिधम्म में कुशलता प्रदान करने के लिए तथा (बौद्ध) शासन की वृद्धि के लिए उसने अभिधम्म की अट्ठकथा को मागधी में (तैयार करना) प्रारम्भ किया।

३५. (और) उसने तीस हजार अक्षरों के विस्तार वाले अट्ठसालिनी आदि (अट्ठकथाओं) को पूर्ण रूप से समाप्त किया।

पूर्व में थेरवाद के अनुयायियों तथा आचार्यों आदि के द्वारा अपनाए गए पाठ की विधि को लेकर तैयार किए गए सम्पूर्ण थेरवाद पर उसने मगध वालों की बोली (मागधी) में अट्ठकथा की रचना की। पिटकों की वे अट्ठकथाएँ सभी देशों के वासियों के लिए हितकारक थीं। पिटकों के अट्ठकथाओं की रचना समाप्त हो जाने पर महान् पृथ्वी में कम्पन हुआ। पिटकों की अट्ठकथाओं का कार्य एक वर्ष में समाप्त हुआ।

अथ खो आयस्मा बुद्धघोसो कत्तब्बकिच्चं निट्ठापेत्वा महाबोधिं वन्दितुकामो भिक्खुसङ्घं वन्दित्वा आपुच्छित्वा पुन जम्बुदीपमेव अगमासि। तेनाहु पोराणा—

३६. “सम्बुद्धपरिनिब्बाना, नववस्ससतेसु च ।
छपञ्जासतिक्कन्तेसु, महानामो नराधिपो ।
धम्मेन दसविधेन, लङ्कारज्जं अकारयी ॥”
३७. “बुद्धघोसो ति घोसो हि, बुद्धे विय महीतले ।
लङ्कादीपमिह आगम्म, लङ्कादीपहितावहं ॥”
३८. “सङ्घो गाथद्वयं दासि, सीहलङ्कथा ति च ।
विसुद्धिमग्गं नामका, सङ्घस्स अनुमत्तिया ॥”
३९. “अथ उग्घोसयी सङ्घो, तुट्ठहट्ठो विसेसतो ।
‘निस्संसयं यं मेत्तेय्यो’ इति वत्त्वा पुनप्पुनं ॥”
४०. “सद्धिं अट्ठकथायादा, पोत्थके पिटकत्तये ।
गन्थाकरे वसन्तो सो, विहारे दूरसङ्करे ॥”
४१. “परिवत्तेसि सब्बा पि, सीहलङ्कथा तदा ।
सब्बेसं मूलभासाय, मागधानं निरुत्तिया ॥”
४२. “सत्तानं सब्बभासानं, सा अहोसि हितावहा ।
थेरियाचरिया सब्बे, पाळिं विय तमग्गहुं ॥”
४३. “अथ कत्तब्बकिच्चेसु, गतेसु परिनिट्ठितं ।
वन्दितुं सो महाबोधिं, जम्बुदीपमुपागमि ॥”
४४. “भुत्वा द्वावीसवस्सानि, महानामो महामहिं ।
कत्वा पुञ्जानि चित्रानि, यथाकम्ममुपागमि ॥”
४५. “पिटकङ्कथं कत्वा, कत्वा लोकहितं बहुं ।
सो यावतायुकं ठत्वा, थेरो पि तुसितं गतो ॥”
४६. “लङ्कावासी तदा भिक्खू, कतकिच्चा अनासवा ।
ते यावतायुकं ठत्वा, थेरा सब्बे पि निब्बुता ॥”
४७. “एवं अनिच्चतं जम्मि, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं पदंति ॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

तेपिटकङ्कथापरिवत्तनवण्णना

निट्ठिता

इसके बाद आयुष्मान् बुद्धघोस कर्तव्यों को पूरा कर, महाबोधि (वृक्ष) की वन्दना करने की कामना से, भिक्षुसंघ की वन्दना कर एवं अनुमति लेकर पुनः जम्बूद्वीप को चला (लौट) गया। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

३६. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के नौ सौ छप्पन वर्ष पश्चात् राजा महानाम ने लंका पर दस प्रकार के धर्मों से युक्त हो शासन किया।
३७. पृथ्वी पर बुद्ध के घोष के समान गाम्भीर्य रखने वाला बुद्धघोस लंका द्वीप में आकर लंका द्वीप के लिए कल्याणकारक हुआ।
३८. संघ ने उसे दो गाथाएँ तथा सिंहली अट्ठकथा दिया एवं उसने संघ की अनुमति से विसुद्धिमग्ग नामक ग्रन्थ (की रचना कर दी)।
३९. संघ ने अत्यन्त संतुष्ट एवं प्रसन्न हो यह कहते हुए पुनः पुनः उद्घोषणा की—‘यह निश्चित रूप से मेतेय्य है।’
४०. संघ ने उसे तीन पिटकों की पुस्तकों के साथ अट्ठकथाएँ दे दीं। वह एकान्त में (बने) गन्थाकर विहार में निवास करने लगा।
४१. उसने सभी सिंहली अट्ठकथाओं का सभी की मूल भाषा—मागधी में अनुवाद किया।
४२. सभी भाषा बोलने वाले प्राणियों के लिए वे (अट्ठकथाएँ) हितकारक थीं। सभी थेरों एवं आचार्यों ने उसे (तिपिटक के) पाठ के समान प्रमुख माना।
४३. अपने कर्तव्यों को समाप्त करके वह महाबोधि (वृक्ष) की वन्दना करने के लिए जम्बूद्वीप लौट गया।
४४. महाराजा महानाम बाइस वर्षों तक पृथ्वी को भोग कर, अनेक पुण्यों को करके कर्मानुसार दिवंगत हो गया।
४५. पिटकों की अट्ठकथा का प्रणयन करके, अनेक लोकहित करके, वह थेर (बुद्धघोस) भी स्वयं के लिए निश्चित आयु तक जीवित रहकर तुलित लोक को चला गया।
४६. लंका में वास करने वाले, अपने कर्तव्यों का सम्पादन कर चुके तथा आस्रवरहित सभी थेर भिक्षु भी स्वयं के लिए निश्चित आयु तक जीवित परिनिवृत्त हो गए।
४७. इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय तथा दुष्कर जान कर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृतपद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत हो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
‘तिपिटक की अट्ठकथा के परिवर्तन का वर्णन’

समाप्त

अट्टमो परिच्छेदो पिटकत्तयटीकावण्णना

ततो तेपिटकट्टकथा परिवत्तनतो तेअसीतिअधिकेसु छसु वस्ससतेसु अतिक्कन्तेसु तदा महासम्मत्तपरम्परानुयातो सुरियवंससम्भूतो परक्कमबाहु महाराजा नाम अहोसि। सो अत्तनो पितु अच्चयेन तीसु रज्जेसु पटिराजानं अभिमद्दं कत्वा सकललङ्कातले एकराजाभिसेकं पत्वा राजाधिराजा सदेसदेसन्तरपत्थटकित्तिया च विराजमानो हुत्वा पुलत्थीमहानगरे धम्मेन रज्जं कारेन्तो वट्टगामिनि—अभय—महारज्जो समयतो पट्टाय संवच्छरागणनाय चतुपज्जाससताधिकं एकसहस्सं भिन्ननिकायं हुत्वा परिहायमाने सासने अपायभागी सासनावचरकुलपुत्ते दिस्वा करुणाय सज्चोदितहृदयो 'कथं हि नाम सासनवुद्धिं करिस्सामी' ति चिन्तेन्तो उदुम्बरगिरिवासी महाक्कस्सपत्थेरं धुरं कत्वा अनेकसतानं पापभिकखूनं निम्मथनं कत्वा सेतवत्थानि दत्वा उप्पब्बाजेत्वा सासनं निम्मलं कत्वा सचेतियानि जेतवन—पुब्बाराम—द्रक्खिणाराम—उत्तराराम—वेलुवन—कपिलवत्थु—इसिपतन—कुसिनाराम—लङ्कातिलकमहाविहारानि च कारापेत्वा एकादसभूमिकं गम्भसहस्सं कूटागारपटिमण्डितं चित्तकम्मलताकम्मेहि विवित्तभूतं उपोसथागारं महापासादं कारापेत्वा बोधिथूपपरिवेनकुटिमण्डपावलीहि विभूसितं नानाविध तरुवरकुसुमगन्ध—सम्मोदमत्तकोकिलादीहि द्विजगणेहि निसेवितं पदुमुण्णलपुण्डरीक—सज्जन्नसीत—लोदकजलासयसमाकिण्णं जेतवनं नाम महाविहारं कारापेसि।

तत्थ अनेकभिकखुसहस्सानं सङ्घत्थेरो आयस्मा महाक्कस्सपत्थेरो भिक्खुसङ्घं सन्निपातापेसि। अथ खो आयस्मा महाक्कस्सपत्थेरो भिक्खू आमन्तेसि—“यं च, आवुसो, पिटकत्तयट्टकथाय लीनत्थप्पकासनत्थं अत्थवण्णनं पोराणेहि कतं तं सब्बं देसन्तरावासीनं भिक्खूनं अत्थं न साधेति। कत्थचि अनेकेसु गण्ठपदेसु सीहलभासाय निरुत्तिया लिखितं च, कत्थचि मूलभासाय मागधिकाय भासन्तरेन सम्मिस्सं आकुलं च कत्वा लिखितं च; मयं भासन्तरं अपनेत्वा परिपुण्णं अनाकुलं अत्थवण्णनं करेय्यामा” ति। भिक्खू आहंसु—“तेन हि भन्ते थेरो राजानं गहेत्वा आणाचक्कं करोतू” ति।

आठवाँ परिच्छेद तीन पिठकों की टीका का वर्णन

तब त्रिपिटक की अट्ठकथा के अनुवाद के छः सौ तिरासी वर्ष पश्चात् महासम्मत की परम्परा में सूर्यवंश में उत्पन्न महाराजा परक्कमबाहु था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् तीन राज्यों के विरोधी राजाओं को पराजित कर, सम्पूर्ण लंका के एकमात्र राजा के रूप में अभिषिक्त होकर, राजाधिराज के रूप में देश-विदेश में यशस्वी हो (गद्दी पर) विराजमान होकर उसने धम्मपूर्वक पुलत्थी महानगर में राज्य किया। महाराजा वट्टगामिनी अभय के समय से एक हजार एक सौ चौवन वर्ष पश्चात् (बौद्ध) शासन को विभिन्न भागों में बाँटा, हासोन्मुख तथा शासन से सम्बन्धित कुलपुत्रों को पतन का भागी देखकर उसके हृदय में करुणा उत्पन्न हुई और—‘किस प्रकार शासन की वृद्धि करूँ?’—ऐसा सोचते हुए उदुम्बर गिरि के वासी महाकस्सप थेर के मार्गदर्शन से अनेक सौ दुराचारी भिक्षुओं का मर्दन करके, श्वेत वस्त्र दे, बहिष्कृत करके शासन को मलरहित करके, उसने चैत्यों के साथ-साथ जेतवन, पुब्बाराम, दक्खिणाराम, उत्तराराम, वेलुवन, कपिलवत्थु, इसिपतन, कुसिनाराम तथा लंकातिलक नामक महाविहार बनवाए। उसने ग्यारह मंजिलों वाले, एक हजार गर्भ वाले, कूटागार^१ से सुसज्जित तथा चित्रों एवं लताओं की सजावट से समृद्ध उपोसथागार^२ वाले महाप्रासाद का निर्माण कराया। तब उसने बोधि वृक्ष से विभूषित स्तूप, परिवेण, कुटि तथा मण्डप वाले, विभिन्न प्रकार के उत्तम पौधों के फूलों की सुगन्ध वाले, कोयल आदि पक्षियों के द्वारा विचरण किए जाने वाले एवं पटुम, उप्पल तथा पुण्डरीक (किस्म के कमल के फूलों) से आच्छादित शीतल जल के जलाशय वाले, जेतवन नामक महाविहार का निर्माण करवाया।

तब कई हजार भिक्षुओं के संघ के प्रमुख आयुष्मान् महाकस्सप थेर ने भिक्षुसंघ को एकत्र किया। इसके बाद आयुष्मान् महाकस्सप थेर ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—‘आवुसों! छिपे हुए अर्थ को प्रकाशित करने के लिए, अर्थ की व्याख्या करने के लिए पुराने लोगों द्वारा रचित तीन पिठकों की अट्ठकथा से सभी देशों में रहने भिक्षुओं का उद्देश्य सिद्ध नहीं होता है। कहीं-कहीं मगध वालों की मूल भाषा में किये गये भाषान्तरण में वे मिश्रित एवं उलझा करके लिखे गए हैं। हमें अनुवाद की कमियों को हटाकर पूर्ण एवं संदेहरहित अत्यवण्णना (अर्थों की व्याख्या) को तैयार करना चाहिए।’ भिक्षुओं ने कहा—‘भन्ते! तब थेरों को राजा की आज्ञा लेकर कार्य करना चाहिए।’

1. शिखर या बुर्ज वाला भवन।

2. उपोसथ—कर्म के लिए प्रयुक्त भवन या कक्ष (उपोसथ—कर्म के लिए बोधिनी देखें)।

तदा राजा सपरिसो नगरा निक्खमित्वा विहारं गन्त्वा महाकस्सपत्थेरपमुखं भिक्खुसङ्घं वन्दित्वा एकमन्तं निसीदि।

अथ नं थेरो आह—“महाराज, तेपिटकट्ठकथाय अत्थवण्णना कत्तब्बा भवेय्या’ ति। “साधु, भन्ते, अहं कायसामग्गि दस्सामि, भिक्खुसङ्घो विस्सत्थं करोतू” ति। ततो राजा भिक्खुसङ्घं वन्दित्वा नगरमेव पाविसि।

अथ खो थेरा भिक्खू भत्तकिच्चावसाने परक्कमबाहुनरिन्देन कतपासादे सन्निपतित्वा विनयपिटकट्ठकथाय समन्तपासादिकाय अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया सारत्थदीपनी नाम अत्थवण्णनं ठपेसुं। वुत्तं हि तत्थ—

१. “विनये पाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्डिया ।

वण्णना च समारद्धा, विनयट्ठकथाय सा ॥”

२. “सारत्थदीपनी नाम, सब्बसो परिनिद्धिता।

तिससहस्समतोहि, गन्थेहि परिमाणतो’ ति ॥”

तदनन्तरं सुत्तन्तपिटके दीघनिकायट्ठकथाय सुमङ्गलविलासिनिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया पठमसारत्थमञ्जूसा नाम अत्थवण्णनं ठपेसुं। तथा मज्झिमनिकायट्ठकथाय पपञ्चसूदनीया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया दुतियसारत्थमञ्जूसा नाम अत्थवण्णनं ठपेसुं। तथा संयुत्तनिकायट्ठकथाय सारत्थपकासिनिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया ततियसारत्थमञ्जूसा नाम अत्थवण्णनं ठपेसुं। तथा अङ्गुत्तरनिकायट्ठकथाय मनोरथपूरणिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया चतुत्थसारत्थमञ्जूसा नाम अत्थवण्णनं ठपेसुं। वुत्तं हि तत्थ—

३. “सुत्तन्तपाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्डिया ।

वण्णना च समारद्धा, सुत्तन्तट्ठकथाय सा ॥”

४. “सारत्थमञ्जूसा नाम, सब्बसो परिनिद्धिता ।

छन्नवुत्तिसहस्सेहि गन्थेहि परिमाणतो ॥”

तदनन्तरं अभिधम्मपिटके धम्मसङ्गणिया अट्ठकथाय अट्ठसालिनिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया पठमपरमत्थपकासिनी नाम मूलटीकं च अनुटीकं च ठपेसुं।

तब राजा परिषद सहित नगर से निकल कर विहार जाकर महाकस्सप के प्रमुखत्व वाले भिक्षुसंघ की वन्दना करके एक तरफ बैठ गया।

इसके बाद थेर (महाकस्सप) ने उससे कहा—‘महाराज! क्या तिपिटक की अट्ठकथा की अत्यवण्णना का कार्य हो?’ ‘अच्छा है, भन्ते, मैं अपने शरीर को सेवा हेतु सौंपता हूँ, भिक्षुसंघ विश्वस्त रहे।’ तब राजा भिक्षुसंघ की वन्दना करके नगर में प्रविष्ट हो गया।

तत्पश्चात् थेर भिक्षुओं ने भोजन करके, राजा परक्कमबाहु द्वारा निर्मित प्रासाद में एकत्र होकर विनयपिटक की अट्ठकथा समन्तपासादिका की अत्यवण्णना से आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में सारत्थदीपनी नामक अत्यवण्णना की रचना की। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

१. विनय में कुशलता प्रदान करने के लिए तथा शासन की वृद्धि के लिए उन्होंने विनयपिटक की अट्ठकथा की वण्णना आरम्भ की।
२. तीस हजार अक्षरों के विस्तार वाले सारत्थदीपनी नामक (पुस्तक) को पूर्ण रूप से समाप्त किया।

तत्पश्चात् सुत्तपिटक में दीघनिकाय की अट्ठकथा सुमंगलविलासिनी की अत्यवण्णना को आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में पठमसारत्थमञ्जूसा नामक अत्यवण्णना तैयार किया। तब मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा पपञ्चसूदनी की अत्यवण्णना को आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में दुतियसारत्थमञ्जूसा नामक अत्यवण्णना तैयार किया। इसके बाद संयुत्तनिकाय की अट्ठकथा सारत्थपकासनी की अत्यवण्णना को आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में ततियसारत्थमञ्जूसा नामक अत्यवण्णना तैयार किया। तब अंगुत्तरनिकाय की अट्ठकथा मनोरथपूरणी की अत्यवण्णना को आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में चतुत्थसारत्थमञ्जूसा नामक अत्यवण्णना तैयार किया। इस सम्बन्ध में कहा गया है—

३. सुत्तन्त में कुशलता प्रदान करने के लिए, शासन की वृद्धि के लिए उन्होंने सुत्तन्त की अट्ठकथा की वण्णना आरम्भ की।
४. चौरानबे हजार अक्षरों के विस्तार वाले सारत्थमञ्जूसा नामक (पुस्तक) को पूर्ण रूप से समाप्त किया।

तत्पश्चात् अभिधम्मपिटक में धम्मसंगणि की अट्ठकथा अट्ठसालिनी की अत्यवण्णना आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में पठमपरमत्थपकासिनी नामक मूलटीका एवं अनुटीका तैयार किया।

तथा विभङ्गप्पकरणट्टकथाय सम्मोहविनोदनिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया दुतियपरमत्थपकासिनी नाम मूलटीकं च अनुटीकं च ठपेसुं ।

तथा पञ्चप्पकरणट्टकथाय परमत्थदीपनिया अत्थवण्णनं आरभित्वा मूलभासाय मागधिकाय निरुत्तिया ततियपरमत्थपकासिनी नाम मूलटीकं च अनुटीकं च ठपेसुं ।
तेनाहु पोराणा—

५. “अभिधम्मपाटवत्थाय, सासनस्स च वुड्डिया ।
वण्णना च समारद्धा, अभिधम्मट्टकथाय सा ॥”
६. “परमत्थपकासिनी, सब्बसो परिनिड्डिता ।
सत्तवीससहस्सेहि, गन्थेहि परिमाणतो ॥”

एवं महाकस्सपत्थेरो रज्जा परक्कमबाहुना अज्झिड्डो अनेकसहस्सेहि थेरेहि सद्धिं उस्साहं जनेत्वा धम्मविनयसङ्गायितसदिसमेव पिटकट्टकथाय अत्थवण्णनं कत्वा सन्निट्ठापेसि । अत्थवण्णनाकतपरियोसाने पठविकम्पादयो अनेकानि अच्छरियानि पातुरहेसुं, देवता साधुकारं अदंसु । अयं पिटकट्टकथाय अत्थवण्णना एकसंवच्छरेनेव निड्डिता । तेनाहु पोराणा—

७. “सम्बुद्धपरिनिब्बाना, वस्ससहस्सातिक्कमे ।
सत्तासीति पञ्चसते, राजा आहु परक्कमो ॥”
८. “उलारपुञ्जतेजेन, कत्वा सत्तुविमद्दं ।
पत्तराजाभिसेकेन, सासनज्जोतनत्थिना ॥”
९. “निस्साय सीहल्लिन्देन, यं परक्कमबाहुना ।
कत्वा निकायसामग्गि, सासनं सुविसोधितं ॥”
१०. “कस्सपो सो महाथेरो, सद्धस्स परिणायको ।
दीपस्मि तम्बपण्णिम्हि, सासनोदयकारणा ॥”
११. “अज्झेसितो नरिन्देन, सो परक्कमबाहुना ।
सद्धम्मड्डितिकामेन, कत्वा सासनपग्गहं ॥”
१२. “पिटकट्टकथायाहं लीनत्थस्स पकासनं ।
न तं सब्बत्थ भिक्खूनं, अत्थं साधेति सब्बसो ॥”

इसके बाद विभंगपकरण की अट्ठकथा सम्मोहविनोदनी की अत्यवण्णना आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में दुतियपरमत्थपकासिनी नामक मूलटीका तथा अनुटीका तैयार किया।

इसके बाद पञ्चपकरण (अर्थात् अभिधम्मपिटक के शेष पाँच ग्रन्थ—धातुकथा, पुग्गलपञ्जत्ति, कथावत्थु, यमक तथा पट्ठान) की अट्ठकथा परमत्थदीपनी की अत्यवण्णना आरम्भ कर मूल भाषा—मगध वालों की बोली (मागधी) में ततियपरमत्थपकासिनी नामक मूलटीका तथा अनुटीका तैयार किया। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

5. अभिधम्म में कुशलता प्रदान करने हेतु, शासन की वृद्धि के लिए उन्होंने अभिधम्म की अट्ठकथा की वण्णना आरम्भ की।
6. सत्ताईस हजार अक्षरों के विस्तार वाले परमत्थपकासिनी नामक (पुस्तक) को पूर्ण रूप से समाप्त किया।

इस प्रकार राजा परक्कमबाहु के निवेदन पर महाकस्सप थेर ने कई हजार भिक्षुओं के साथ, उत्साह उत्पन्न करके, धम्म तथा विनय के संगायन के समान ही पिटक—अट्ठकथा की अत्यवण्णना का कार्य पूर्ण किया। अत्यवण्णना का कार्य समाप्त होने पर पृथ्वी—कम्पन आदि अनेक प्रकार के आश्चर्य प्रकट हुए तथा देवताओं ने साधुकार किया। पिटक—अट्ठकथा की यह अत्यवण्णना एक वर्ष में तैयार हुई। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

७. सम्बुद्ध के परिनिर्वाण के एक हजार पाँच सौ सत्तासी वर्ष पश्चात् परक्कम नामक राजा हुआ।
८. उदारता तथा पुण्य के तेज से शत्रुओं का मर्दन कर, अभिषिक्त राजा ने शासन को अनेक प्रकार से प्रकाशित किया।
९. इस उद्देश्य के लिए सिंहल के राजा परक्कमबाहु ने निकायों में समानता लाकर शासन को शुद्ध किया।
१०. संघ का मार्गदर्शक वह कस्सप महाथेर तम्बपणिगद्वीप में शासन की समृद्धि का कारण हुआ।
११. राजा परक्कमबाहु के निवेदन पर उसने सद्धम्म की स्थापना की कामना से शासन को सुदृढ़ किया।
१२. पिटकों के गूढ़ अर्थों की अट्ठकथाओं द्वारा की गई व्याख्या सभी स्थानों के भिक्षुओं का उद्देश्य नहीं सिद्ध करती थी।

१३. “दुविज्जेय्यसभावाय, सीहलाय निरुत्तिया ।
गण्ठपदेसु नेकेसु, लिखितं किञ्चि कथञ्चि ॥”
१४. “मागधिकाय भासाय, आरभित्वा पि केनचि ।
भासन्तरेन सम्मिस्सं, लिखितं किञ्चिदेव च ॥”
१५. “असारगन्थभावो पि, तत्थेव बहु दिस्सति ।
आकुलं च कथं यत्थ, दुविज्जेय्या पि अत्थतो ॥”
१६. “ततो अपरिपुण्णेन, तादिसेनेत्थ सब्बसो ।
कथमत्थं विजानन्ति, नानादेसनिवासिनो ॥”
१७. “भासन्तरं ततो हित्वा, सारमादायसब्बसो ।
अनाकुलं करिस्सामि, परिपुण्णविनिच्छयं ॥”
१८. “पिटकत्तयवण्णना च, लीनत्थस्स पकासना ।
सारत्थदीपनी नाम, सारत्थमञ्जूसा पि च ॥”
१९. “परमत्थप्पकासनि, महात्थेरेहि भासिता ।
सत्तानं सब्बभासानं, सा अहोसि हितावहा ॥”
२०. “परक्कमभुजो नाम, लङ्किन्दो पुज्जपज्जवा ।
धम्मेन दसविधेन, लङ्कारज्जमकारयि ॥”
२१. “कत्वा पुज्जानि नेकानि, पसन्नो रतनत्तये ।
आयुनो परियोसाने, यथाकम्ममुपागमी ॥”
२२. “पिटकस्स टीकं कत्वा, थेरा पि कस्सपादयो ।
ते यावतायुकं ठत्वा, यथाकम्ममुपागमुं ॥”
२३. “एवं अनिच्चतं जम्मि, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं पदंति ॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे
पिटकत्तयटीकावण्णना
निष्ठिता।

१३. कहीं—कहीं सिंहली भाषा में अनेक उलझे हुए पद लिखे गए हैं, जो समझे जाने में स्वभावानुसार अत्यन्त कठिन है।
१४. कहीं—कहीं मगध वालों की भाषा में प्रारम्भ कर अनुवाद में (सिंहली और मागधी का) मिश्रण हो गया है।
१५. ग्रन्थ का भाव भी अनेक स्थानों पर सारहीन दिखाई पड़ता है; कथ्य भ्रम उत्पन्न करने वाला है तथा अर्थ भी कठिनाई से समझ में आने वाला है।
१६. इस प्रकार की अपरिपूर्ण (अटूठकथाओं) से यहाँ विभिन्न देशों में रहने वाले व्यक्ति कैसे पूर्ण अर्थ समझ सकते हैं?
१७. इसलिये अनुवाद को छोड़कर, सम्पूर्ण सारतत्व को लेकर मैं सन्देहरहित, परिपूर्ण एवं स्पष्ट वर्णन करूँगा।
- १८—१९. तीन पिटकों में छिपे हुए अर्थों के प्रकाशन के लिए महाथेर द्वारा सारत्थदीपनी, सारत्थमञ्जूसा तथा परमत्थप्पकासिनी नामक (टीकाओं) की रचना की गई। वह सभी भाषाओं के प्राणियों के लिए कल्याणकारक थी।
२०. पुण्यवान् एवं प्रज्ञावान् लंका के राजा परक्कमभुज (परक्कमबाहु) ने दस प्रकार के धम्मों* से युक्त हो लंका पर राज्य किया।
२१. त्रिरत्न (बुद्ध, धम्म एवं संघ) में श्रद्धावान् वह अनेक पुण्यों को करके आयु के समाप्त हो जाने पर कर्मानुसार गति को प्राप्त हुआ।
२२. कस्सप आदि थेर भी पिटक की टीका रच कर यथानिश्चित आयु तक जीवित रहकर कर्मानुसार गति को प्राप्त हुए।
२३. इसलिये इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय तथा दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत हो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
'तीन पिटकों की टीका का वर्णन' समाप्त।

* बोधिनी में देखें।

नवमो परिच्छेदो सम्बन्धकरणकतथेरवण्णना

१. "पिटकत्तयपाळि च, सम्मासम्बुद्धदेसिता ।
तेरासीति च सतं च, सहस्सं भाणवारतो ॥"
२. "पिटकत्तयपाळि च, द्वेलक्खनहुतानि च ।
पञ्चसहस्सं सत्तसतं, पञ्जासं गन्थसंखतो ॥"
३. "पिटकत्तयपाळि च, अक्खरानं वसेन च ।
चतुनवुतिलक्खानि, चतुसट्ठिसहस्स च ॥"
४. "पिटकट्ठकथा सब्बा, बुद्धघोसेन भासिता ।
तेसट्ठि च सतं चेव, सहस्सं भाणवारतो ॥"
५. "पिटकट्ठकथा सब्बा, द्वेलक्ख-नहुतानव ।
सत्तसतं च पञ्जासं, गन्थसंख्यावसेन च ॥"
६. "पिटकट्ठकथा सब्बा, अक्खरानं वसेन च ।
तेनवुतिलक्खानेव, चतुसहस्समक्खरा ॥"
७. "पिटकत्तयटीका च, टीकाचरियेहि भासिता ।
छसतं चेव द्वात्तिसं, भाणवारवसेन च ॥"
८. "पिटकत्तयटीका च, संख्यागन्थवसेन च ।
अट्ठपञ्जाससहस्सेहि, सतसहस्सानि गन्थतो ॥"
९. "पिटकत्तयटीका च, अक्खरानं वसेन च ।
पञ्जास-सत-सहस्सं, छपञ्जाससहस्स च ॥"
१०. "थेरेन बुद्धघोसेन, रचितं यं मनोरमं ।
विसुद्धिमग्गं नामं तं, पिटकत्थप्पकासनं ॥"
११. "पातिमोक्खट्ठकथा च, बुद्धघोसेन धीमता ।
थेरेन रचिता एसा, कंखावितरणि सुभा ॥"
१२. "थेरेन धम्मसिरिना, थिरसीलेन या कथा ।
आभिधम्मिकभिकखूनं, खुदसिक्खा सुसिक्खिता ॥"
१३. "थेरेन बुद्धदत्तेन, रचितं यं मनोरमं ।
अभिधम्मावतारो ति, लद्धनामेन विस्सुतं ॥"

नौवाँ परिच्छेद थेरों द्वारा रचित सभी पुस्तकों का वर्णन

१. सम्यक् सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित तीन पिटक के ग्रन्थों में एक हजार, एक सौ तिरासी भाणवार^१ हैं।
२. तीन पिटकों के ग्रन्थों में दो लाख, दो नहुत^२, पाँच हजार, सात सौ पचास की संख्या में पाठ हैं।
३. तीन पिटकों के ग्रन्थों में चौरानबे लाख, चौंसठ हजार अक्षर हैं।
४. पिटकों की बुद्धघोस द्वारा भाषित समस्त अट्ठकथाओं में एक हजार, एक सौ तिरसठ भाणवार हैं।
५. पिटकों की समस्त अट्ठकथाओं में पाठ की संख्या दो लाख, नौ नहुत, पाँच हजार, सात सौ पचास है।
६. पिटकों की समस्त अट्ठकथाओं में तिरानबे लाख, चार हजार अक्षर हैं।
७. आचार्यों द्वारा तीन पिटकों की भाषित टीकाओं में छः सौ बत्तीस भाणवार हैं।
८. तीन पिटकों की टीकाओं में पाठ की संख्या एक सौ अट्ठावन हजार है।
९. तीन पिटकों की टीकाओं में अक्षरों की संख्या पाँच सौ छप्पन हजार है।
१०. बुद्धघोस थेर द्वारा पिटकों के अर्थ—प्रकाशन हेतु मनोरम विसुद्धिमग्ग नामक ग्रन्थ रचा गया।
११. बुद्धिमान बुद्धघोस द्वारा पातिमोक्ख की अट्ठकथा स्वरूप उत्तम कंखावितरणि (नामक ग्रन्थ) रचा गया।
१२. परम शीलवान् धम्मसिरि थेर द्वारा अभिधम्मिक भिक्षुओं को सुशिक्षित करने हेतु खुद्दसिक्खा (नामक ग्रन्थ) की रचना की गई।
१३. बुद्धदत्त थेर द्वारा रचित ग्रन्थ अभिधम्मावतार के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

१. पाठ या गायन के उद्देश्य से शास्त्र का विभाजित खण्ड भाणवार कहलाता है। एक भाणवार में आठ हजार अक्षर होते हैं।

२. दस हजार।

१४. "अनुरुद्धेन थेरेन, कञ्चिपुरवरे वरे ।
पकरणं कतं तेन, परमत्थविनिच्छयं ॥"
१५. "अनुरुद्धाभिधानेन, थेरेन रचितं इदं ।
परमत्थप्पकासेतुं, अभिधम्मत्थसङ्गहं ॥"
१६. "कतो यो सच्चसंखेपो, निपुनत्थविनिच्छयो ।
आनन्दत्थेरपादेन, विचित्तनयमण्डितो ॥"
१७. "खेमव्हेन थेरेन, धीमता खेमनामकं ।
पकरणं कतं तेन, परमत्थप्पदीपकं ॥"
१८. "कच्चायनो कतो योगो, संधनन्दिपवुत्तिका ।
टीका विमलबोधि च, ब्रह्मपुत्तो च कारका ॥"
१९. "सद्धम्मट्टितिकामेन, बुद्धप्पियेन धीमता ।
थेरेन रचिता एसा, रूपसिद्धिभिधानका ॥"
२०. "सद्धम्मट्टितिकामेन, मोगल्लानेन धीमता ।
थेरेन रचिता एसा, अभिधानप्पदीपिका ॥"
२१. "बुद्धरक्खितनामेन, थेरेन रचितं इदं ।
जिनालंकारसुत्तं च, सत्थुगुणं अलंकतं ॥"
२२. "मेधंकराभिधानेन, थेरेन थिर-चेतसा ।
जिनचरितमिदं तेन, रचितं यं मनोरमं ॥"
२३. "परमत्थमञ्जूसा नाम, धम्मपालेन धीमता ।
विसुद्धिमग्गस्स टीका, थेरेन रचिता सुभा ॥"
२४. "सागरमतिनामेन, थेरेन रचितं इदं ।
विनयसंगहं नाम, विनयत्थप्पकासनं ॥"
२५. "महाबोधी ति नामेन, थेरेन रचिता सुभा ।
निस्सयड्ढकथा नाम, सच्चसंखेपवण्णना ॥"
२६. "महाबोधी ति नामेन, थेरेन रचिता सुभा ।
परमत्थविनिच्छय-वण्णना मुखमत्तका ॥"
२७. "धम्मपालेन थेरेन, परमत्थप्पदीपनी ।
विमानपेतवत्थूनं, वण्णना रचिता सुभा ॥"

१४. काञ्चीपुर के उत्तम नगर में अनुरुद्ध थेर द्वारा परमत्थविनिच्छय नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
१५. परम अर्थ के प्रकाशन हेतु अनुरुद्ध नामक थेर द्वारा अभिधम्मत्थसंगह की रचना की गई।
१६. अर्थों का कुशलता के साथ विनिश्चय करने वाले तथा विचित्र प्रकार से विभूषित सच्चसंखेप की रचना आनन्द थेर के एक शिष्य द्वारा की गई।
१७. बुद्धिमान खेम थेर द्वारा परम अर्थ के प्रकाशन हेतु खेम नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
१८. कच्चायन योगी द्वारा संघनन्दि नामक ग्रन्थ की रचना की गई। इसकी टीका विमलबोधि एवं ब्रह्मपुत्त द्वारा रची गई।
१९. सद्धम्म की स्थापना की इच्छा से बुद्धिमान बुद्धप्पिय द्वारा रूपसिद्धि नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२०. सद्धम्म की स्थापना की इच्छा से बुद्धिमान मोग्गल्लान द्वारा अभि—धानप्पदीपिका नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२१. शास्ता (बुद्ध) के समान गुणों से अलंकृत बुद्धरक्खित नामक थेर द्वारा जिनालंकार नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२२. स्थिर चित्त वाले मेधंकर नामक थेर द्वारा मनोरम जिनचरित की रचना की गई।
२३. बुद्धिमान धम्मपाल द्वारा विसुद्धिमग्ग की परमत्थमञ्जूसा नामक उत्तम टीका तैयार की गई।
२४. सागरमति नामक थेर द्वारा विनय के अर्थ—प्रकाशन हेतु विनयसंगह नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२५. महाबोधि नामक थेर द्वारा सच्चसंखेप की उत्तम व्याख्या स्वरूप निस्सयट्ठकथा नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२६. महाबोधि नामक थेर द्वारा परमत्थविनिच्छय की उत्तम व्याख्या स्वरूप मुखमत्तका नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
२७. धम्मपाल थेर द्वारा विमानवत्थु तथा पेतवत्थु की उत्तम व्याख्या स्वरूप परमत्थदीपनी नामक ग्रन्थ की रचना की गई।

२८. “कत्वा सुबोधालंकारं, वृत्तोदयमनाकुलं ।
खुद्दसिक्खाय टीका पि, तथा सम्बुद्धवण्णना ॥”
२९. “संघरक्खितनामेन, थेरेन रचितं इदं ।
सद्धम्मड्डितिकामेन, सासनोदयकामिना ॥”
३०. “बुद्धसीहेन थेरेन, यो विनयविनिच्छयो ।
तेनेव रचितो साधु, सासनस्स च वुड्डिया ॥”
३१. “बुद्धनागाभिधानेन, थेरेन थिर—चेतसा ।
कंखावितरणिया च, टीका सुरचिता सुभा ॥”
३२. “धम्मपालेन थेरेन, परमत्थप्पदीपनी ।
थेरीगाथा—अट्टकथा, रचिता सा मनोरमा ॥”
३३. “सारिपुत्तस्स थेरस्स, अभिधम्मत्थसङ्गहं ।
टीका सिस्सेन थेरेन, धीमता रचिता सुभा ॥”
३४. “थेरेन बुद्धघोसेन, धीमता रचिता इमा ।
धम्मपदट्टकथा च, सोदत्तभिनिदानका ॥”
३५. “कच्चायनेन थेरेन, रचितं यं मनोरमं ।
नेत्तिप्पकरणं नाम, सम्बुद्धस्सानुमत्तिया ॥”
३६. “सारत्थसालिनी नाम, सच्चसंखेपवण्णना ।
सारिपुत्तस्स सिस्सेन, थेरेन रचिता सुभा ॥”
३७. “तेनेव थेर पादेन, सासनुज्जोतनत्थिना ।
अनेक खुद्दका गन्था, रचिता सा मनोरमा ॥”
३८. “तिपिटकानुलोमानि, सब्बप्पकरणानि च ।
कतानि येहि थेरेहि, जिनसासनवुड्डिया ॥”
३९. “सब्बथेरा महानागा, कत्वा लोकहितं बहुं ।
ते यावतायुक्कं उत्वा, यथाकम्ममुपागमुं ॥”
४०. “एवं अनिच्चतं जम्मिं, जत्वा दुरभिसंभवं ।
तुवटं वायमे धीरो, यं निच्चं अमतं पदं ॥”

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

सब्बप्पकरणकतथेरवण्णना

निड्डिता।

- २८-२९. सद्धम्म की स्थापना तथा (बौद्ध) शासन के उदय की कामना से संघरक्खित नामक थेर द्वारा सुबोधालंकार, संदेहरहित (स्पष्ट) वुत्तोदय, खुदकसिक्खा की टीका एवं सम्बुद्धवर्णना नामक ग्रन्थों की रचना की गई।
३०. (बौद्ध) शासन की वृद्धि के लिए बुद्धसीह थेर द्वारा उत्तम विनयविनिच्छय नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
३१. स्थिर चित्त वाले बुद्धनाग नामक थेर द्वारा कंखावितरण की सुन्दर एवं सुरचित टीका तैयार की गई।
३२. धम्मपाल थेर द्वारा थेरीगाथा की सुन्दर अट्ठकथा परमत्थदीपनी की रचना की गई।
३३. सारिपुत्त थेर के बुद्धिमान शिष्य, एक थेर, द्वारा अभिधम्मत्थसंगह की सुन्दर टीका तैयार की गई।
३४. बुद्धघोस थेर द्वारा उत्तम सन्दर्भों के साथ धम्मपद की अट्ठकथा की रचना की गई।
३५. सम्बुद्ध की अनुमति से कच्चायन थेर द्वारा सुन्दर नेत्तिप्पकरण नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
३६. सारिपुत्त के शिष्य, एक थेर द्वारा सच्चसंखेप की सुन्दर व्याख्या स्वरूप सारत्थसालिनी नामक ग्रन्थ की रचना की गई।
३७. थेर के उसी शिष्य द्वारा (बौद्ध) शासन को प्रकाशित करने के उद्देश्य से अनेक छोटे-छोटे सुन्दर ग्रन्थों की रचना की गई।
३८. जिन (बुद्ध) शासन की वृद्धि के लिए थेरों द्वारा तिपिटक का अनुसरण करते हुए सभी ग्रन्थों की रचना की गई।
३९. महान शक्ति वाले सभी थेर, अनेक लोक हित करके, यथानिश्चित आयु तक जीवित रह कर कर्मानुसार गति को प्राप्त हुए।
४०. इसलिए इस संसार को अनित्य, तिरस्करणीय तथा दुष्कर जानकर तुम बुद्धिमान बनो एवं नित्य तथा अमृत पद की प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहो।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में
 'थेरों द्वारा रचित सभी पुस्तकों का वर्णन'
 समाप्त।

दसमो परिच्छेदो पिटकत्तयलेखनानिसंसवण्णना

इतो परं पिटकत्तयलेखनानिसंसवण्णना कथेतब्बा। अपि च परिनिब्बानमज्जे निपन्नो भगवा आनन्दत्थेरं आमन्तेत्वा—“यो वो, आनन्द, मया धम्मो च विनयो च देसितो चेव पज्जतो च, सो वो ममच्चयेन सत्था। अभिसम्बोधितो याव परिनिब्बाना पच्चत्तालीस वस्सानि भासितानि चतुरासीति धम्मकखन्धसहस्सानि तिङ्गन्ति येव, अहं एक्को व परिनिब्बायामि। अहं पन इदानि एक्को व ओवदामि अनुसासामि, मयि परिनिब्बुते इमानि चतुरासीति धम्मकखन्धसहस्सानि चतुरासीतिसहस्सबुद्धसदिसानि तुम्हे ओवदिस्सन्ति अनुसासिस्सन्ती” ति अत्तनो धम्मकायसंखाते सकगरुभूते चतुरासीतिसहस्स—धम्मकखन्धवरे अत्तना संभूते चतुरासीतिसहस्सबुद्धवरे कत्वा ठपेसि। चुत्तं हेतं भगवता—

१. “अक्खरं एकमेकं च, बुद्धरूपसमांसिया ।
तस्मा हि पण्डितो पोसो, लिक्खेय्य पिटकत्तयं ॥”
२. “चतुरासीति सहस्सानि, सम्बुद्धा परिमाणका ।
ठितानाम भविस्सन्ति, तिङ्गन्ते पिटकत्तये ॥”
३. “अक्खरं एकमेकं च, सत्थुपरियत्तिसासने ।
अक्खरं बुद्धरूपं च, सममेव फलं सिया ॥”
४. “तस्मा हि पण्डितो पोसो, तिविधं सम्पत्तिमिच्छितो ।
लिक्खेय्य वा लिखापेय्य, पोत्थके धम्मचेतिये ॥”
५. “दसपुज्जकिरियवत्थुं, तिविधं सुचरितं पि च ।
पूरेति लेखिको धम्मं, पिटकत्तयसज्जितं ॥”
६. “परियत्तिं पटिपत्तिं, पटिवेधं च सासने ।
तिविधं पि च सद्धम्मं, परिपूरेति साधुकं ॥”
७. “अक्खरं एकमेकं च, लोकनाथस्स सासने ।
अक्खरं बुद्धरूपं च, सममेव फलं सिया ॥”

दसवाँ परिच्छेद तीन पिटकों के लेखन के माहात्म्य का वर्णन

अब तीन पिटकों के लेखन के माहात्म्य का वर्णन किया जाएगा। परिनिर्वाण शय्या पर पड़े भगवान् (बुद्ध) ने आनन्द थेर को सम्बोधित किया था—‘जो कुछ, आनन्द, धम्म तथा विनय मेरे द्वारा उपदेशित एवं प्रज्ञप्त हैं, वही मेरे जाने के बाद तुम लोगों के शास्ता होंगे। सम्बोधि प्राप्ति से परिनिर्वाण तक पैतालिस वर्षों की अवधि में मेरे द्वारा चौरासी हजार धम्म—स्कन्धों को प्रतिपादन किया गया है, मैं अकेले ही परिनिवृत्त होऊँगा। अभी मैं अकेले ही उपदेश एवं अनुशासन करता हूँ, किन्तु मेरे परिनिर्वाण के पश्चात् ये चौरासी हजार धम्म—स्कन्ध चौरासी हजार बुद्धों के समान तुम्हें उपदेश देंगे और तुम्हें अनुशासित करेंगे’ (इस प्रकार कह कर) अपने धम्मरूपी शरीर में स्वयं ही शास्ता के समान स्थित, चौरासी हजार उत्तम धम्म—स्कन्धों को चौरासी हजार उत्तम बुद्धों के रूप में स्वयं से उत्पन्न कर स्थापित किया। इस सम्बन्ध में भगवान् द्वारा कहा गया है—

१. (पिटकों के) प्रत्येक अक्षर को बुद्ध का रूप समझना चाहिए, इसलिए ज्ञानी व्यक्ति को (ही) तीनों पिटकों को लिखना चाहिए।
२. तीन पिटकों के विद्यमान रहने पर ही चौरासी हजार की संख्या वाले बुद्ध स्थित रहेंगे।
३. शास्ता के धम्म ग्रन्थों (तिपिटक) के प्रत्येक अक्षर को बुद्ध का रूप समझना चाहिए एवं (बुद्ध के) समान पुण्यदायक जानना चाहिए।
४. इसलिये तीन प्रकार की सम्पदा^१ की इच्छा रखने वाले बुद्धिमान व्यक्ति द्वारा धम्म—चैत्य^२ में बैठकर (बुद्धवचनों को) पुस्तक में लिखना या लिखवाना चाहिए।
५. लेखक तीन पिटक रूपी धम्म को लिखकर दस प्रकार के पुण्य कर्मों* तथा तीन प्रकार के सदाचरण^३ को पूर्ण करता है।
६. वह शासन में परियत्ति, पटिपत्ति एवं पटिवेध— इन तीन सद्धम्मों को सम्यक् प्रकार से पूर्ण करता है।
७. लोकनाथ (बुद्ध) की शिक्षा के प्रत्येक अक्षर को बुद्ध का रूप समझना चाहिए एवं (बुद्ध के) समान पुण्यदायक जानना चाहिए।

१. मनुष्य—लोक, देव—लोक एवं निर्वाण।
२. ऐसा चैत्य जहाँ श्रद्धेय ग्रन्थ प्रतिष्ठापित किए जाते हैं।
३. कायिक, वाचसिक एवं मानसिक सदाचरण।
- * बोधिनी में देखें।

८. “तस्मा हि पण्डितो पोसो, तिविधं सम्पत्तिमिच्छितो ।
लिखेय्य वा लिक्खापेय्य, अक्खरं पिटकत्तये ॥”
९. “तिपिटकानि सब्बानि, अक्खरानं पमाणतो ।
द्वेसत्तत्थाधिकं चेव, चतस्सो सतकोटियो ॥”
१०. “ये पिटकानि लेखन्ति, करोन्ति पटिमा विय ।
द्वेसत्तत्थाधिकं चेव, चतस्सो सत-कोटियो ॥”

कोसलबिम्बवण्णनायं यं बिम्बानिसंसं भगवता वित्तारेन देसितं तमिधाहरित्वा
पिटकत्तयलेखनानिसंसं कथेतब्बं।

११. “सत्थुस्स बिम्बं करसादिसा ये, तेपिटकस्सक्खरलेखयन्ता ।
सब्बेहि लोकेहि मनापकाया, ते तेजवन्ता सुरिया व होन्ति ॥”
१२. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, न पापुणन्ते व च इत्थिभावं ।
अथोभतो व्यञ्जनपण्डकादिकं, सम्पुण्णभावं समुपेन्ति सब्बसो ॥”
१३. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, उपद्देवनापि न मीयरे व ते ।
विसेन सत्थेन च मन्तकादिना, अमित्तराजूहि अहिंसनीयका ॥”
१४. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, सुसेट्ठरूपे वर-ब्राह्मणे कुले ।
भवन्ति सेट्ठमि च खत्तिये कुले, हीने कुले नीचकुले न जायरे ॥”
१५. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, लोकन्तरे पेतभवे न जायरे ।
न मूगपक्खा न च अन्धबधिरा, चतुहपायेहि च विप्पमुत्तका ॥”
१६. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, दुक्खेन वा सो न च होति गम्भे ।
दुक्खं न होतेव विजातकाले, दुक्खं न होतेव विजात मातुया ॥”
१७. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, सुखेन निच्चं अभिवड्ढतेव ।
धानेन भोगेन यसादिना पि, सब्बेन तेसं अभिवड्ढते व ॥”
१८. “लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, गम्भमि जाता न मलेन लिता ।
सेम्हादिना नेव भवन्ति सुद्धा, सुद्धमि वत्थे मणिजातिका व ॥”

८. इसलिये तीन प्रकार की सम्पदा की इच्छा रखने वाले पण्डित व्यक्ति को (ही) तीन पिटकों के अक्षर को लिखना चाहिए या लिखवाना चाहिए।
९. सम्पूर्ण तिपिटक में अक्षरों की संख्या चार सौ करोड़ तथा बहत्तर है।
१०. जो पिटक ग्रन्थ लिखते हैं, वे (बुद्ध की) चार सौ करोड़ तथा बहत्तर प्रतिमा बनाने के समान कार्य करते हैं।

‘कोसलबिम्बवण्णना’ (ग्रन्थ) में भगवान् द्वारा प्रतिमा के माहात्म्य का विस्तारपूर्वक जो वर्णन किया गया था, उसी के आधार पर तिपिटक के लेखन के माहात्म्य को कहा जाना चाहिए।

११. शास्ता की प्रतिमा बनाने के समान जो तिपिटक के अक्षर को लिखते हैं, वे सभी लोकों में आकर्षक शरीर के साथ उत्पन्न होते हैं तथा सूर्य के समान तेजवान् होते हैं।
१२. पिटक के अक्षर को लिखवाने वाले, स्त्री या दोनों (स्त्री और पुरुष) के लक्षणों वाले हिजड़े के रूप में उत्पन्न नहीं होते हैं, बल्कि सभी गुणों से पूर्ण उत्पन्न होते हैं।
१३. पिटक के अक्षर को लिखवाने वाले दुर्घटना में या विष द्वारा या शस्त्र द्वारा या मन्त्र आदि के द्वारा या शत्रु राजा, क्योंकि वे अहिंसा के मार्गदर्शक होते हैं, द्वारा नहीं मारे जाते हैं।
१४. पिटक के अक्षर को लिखवाने वाले सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्य के साथ या तो उत्तम ब्राह्मण कुल में या श्रेष्ठ क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होते हैं, हीन या निम्न कुल में उत्पन्न नहीं होते।
१५. पिटक के अक्षर को लिखवाने वाले इस जन्म के बाद संसार में प्रेत के रूप में उत्पन्न नहीं होते हैं एवं न ही गूंगे, विकलांग, अन्धे या बहरे ही (उत्पन्न होते हैं)। वे (इन) चार विपदाओं से मुक्त होते हैं।
१६. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले न तो गर्भ में कष्ट पाते हैं न ही जन्म के समय। उन्हें जन्म देने वाली माताएं भी कष्ट नहीं पाती हैं।
१७. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले के सुख में नित्य वृद्धि होती रहती है। सम्पत्ति, भोग, यश आदि सभी में उसकी वृद्धि होती है।
१८. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले गर्भ में उत्पन्न होने के समय भी गन्दगियों, श्लेष्मा आदि से लिप्त नहीं होते। वे शुद्ध वस्त्र में (लिपटे) मणि के समान शुद्ध रहते हैं।

१९. "लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, सुखेन गब्भे अभिवद्धिते व ।
ते मातुगब्भा अभिनिक्खमन्ता, धम्मासना ओतरका व होन्ति ॥"
२०. "लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, सहस्स नेत्तो व सुधाभिपूजिता ।
नरिन्द सेट्ठेहि तथेव पूजिता, भवन्ति राजावरचक्कवत्तिनो ॥"
२१. "नरा ये लिखापेन्ति धम्मक्खरं ते, मनुस्सत्तभावं जहितान सन्तो ।
सचे एन्ति देवत्तभावं मनुस्सा, विमाने लभन्ति वरे चारुरूपे ॥"
२२. "पिटकत्तयमक्खरलेखितव, तुरियेहि वरेहि वरप्पमदा ।
परितो वरमो दयरे सततं, अतिसेट्ठसुखं अनुभोन्ति चिरं ॥"
२३. "लिखापयन्ता पिटकस्समक्खरं, तम्हा चुता ते वरदेव लोके ।
ओसानभूते पन अत्तभावे, सेट्ठत्तभावं अभिपत्थयन्ता ॥"
२४. "सम्बुद्धभावं तिभवेकसारं, पच्चेकबोधिं पि च सावकत्तं ।
सम्पापुणित्वान महानुभावं, पप्पोन्ति निब्बानसुखं वरगं ॥"
२५. "ददन्ति ये पोत्थक-बन्धनं वा, निवासनं भाजन लेखनिं वा ।
आधारकं पिप्फलकं मसिं वा, भवन्ति ते उत्तमपज्जवन्तो ॥"
२६. "सयं च लेखन्ति परे च लेखा-
पयन्ति ये ये अनुमोदमाना ।
ते ते पि मेतेय्यजिनस्स सिस्सा, पज्जा भविस्सन्ति अनागतस्मि ॥"
२७. "यं इच्छितं पत्थितं व मनुज्जं, ये ये पि लेखन्ति परे भतिं वा ।
ददन्ति तं तं सुखमेव सब्बं, ते ते लभिस्सन्ति अनागतस्मि ॥"

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे

पिटकत्तयलेखनानिसंसवण्णना

निष्ठिता ।

१९. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले गर्भ में सुखपूर्वक बढ़ते हैं। वे माता के गर्भ से भी धम्म—आसन से उतरने के समान निकलते हैं।
२०. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले उसी प्रकार पूजित होते हैं, जिस प्रकार सहस्रनेत्र (इन्द्र) (देवताओं द्वारा बरसाए गए) अमृत द्वारा। वे श्रेष्ठ राजाओं द्वारा पूजित उत्तम चक्रवर्ती राजा के समान सम्मानित होते हैं।
२१. जो मनुष्य धम्म—अक्षर को लिखवाते हैं, वे मनुष्य जीवन को त्यागने के पश्चात् देवता के रूप में उत्पन्न होते हैं तथा श्रेष्ठ एवं सुन्दर देवलोक को प्राप्त करते हैं।
२२. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले (परलोक में) उत्तम वाद्यों को बजाने वाली सुन्दर स्त्रियों से घिरे हुए, अतिश्रेष्ठ सुख का अनुभव हमेशा एवं प्रत्येक स्थान पर प्राप्त करते हैं।
२३. पिटक के अक्षर लिखवाने वाले श्रेष्ठ 'स्व' भाव को प्राप्त करने की कामना से 'स्व' भाव में उतरने के लिए, उस उत्तम देव लोक से च्युत हो जाते हैं।
२४. और वे जीवन के तीन सार—सम्बुद्धत्व, प्रत्येकबोधि एवं श्रावकत्व को प्राप्त कर महान प्रताप वाले, श्रेष्ठतम निर्वाण के सुख को प्राप्त करते हैं।
२५. जो (भिक्षुओं को) पुस्तक^१ बाँधने वाला, वस्त्र, पात्र, कलम, चौकी सिलने के लिए धागा या कालिख^२ देते हैं, वे उत्तम प्रज्ञा से सम्पन्न होते हैं।
२६. जो स्वयं लिखते हैं या दूसरों से लिखवाते हैं या लिखे हुए का अनुमोदन करते हैं, वे भविष्य काल में मैत्रेय^३, जिन के प्रज्ञावान् शिष्य बनेंगे।
२७. जो (स्वयं) लिखते हैं अथवा दूसरों को (लिखने हेतु) वेतन देते हैं, वे भी भविष्य काल में अपनी इच्छित, प्रार्थित तथा मनपसन्द चीजें सुखपूर्वक प्राप्त करेंगे।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्गह में

'तीन पिटकों के लेखन के माहात्म्य का वर्णन'

समाप्त।

-
१. ताड़ पत्र पर लिखित पाण्डुलिपियाँ पेट्थक कहलाती थीं।
 २. लेखन हेतु प्रयोग में लाने के लिए।
 ३. गौतम बुद्ध के बाद भविष्य में होने वाले बुद्ध (विस्तार के लिए बोधिनी देखिए)।

एकादसमो परिच्छेदो धम्मसवनानिसंसवण्णना

इतो परं सद्धम्मसवनानिसंसवण्णना कथेतब्बा। वुत्तं चेतं भगवता—

१. “यो मे पस्सति सद्धम्मं, सो मं पस्सति वक्कलि ।

अपस्समानो सद्धम्मं, मं पस्से पि न पस्सति ॥”

भगवता परियत्तिसासनस्स अत्तना समसमद्धाने ठपितो। अयं पन सद्धम्मो सब्बबुद्धेहि अतीतानागतपच्चुप्पन्नेहि सक्कतो गरुकतो मानितो पूजितो। यो हि सद्धम्मो सक्कतो गरुकतो मानितो पूजितो सो तथागतं सक्करोति गरुकरोति मानेति पूजेति नाम। वुत्तं चेतं भगवता—

२. “ये चातीता सम्बुद्धा, ये च बुद्धा अनागता ।

ये चेतरहि सम्बुद्धा, बहूनं सोकनासना ॥”

३. “सब्बे सद्धम्मगरूणे, विहरंसु विहरन्ति च ।

अथो पि विहरिस्सन्ति, एसा बुद्धान धम्मता ॥”

४. “तस्मा हि अत्तकामेन, महत्तं अभिकंखता ।

सद्धम्मो गरुकातब्बो, सरं बुद्धान सासनं ॥”

५. “सम्बुद्धानं द्वे काया, रूपकायो सिरिधरो ।

यो तेहि देसितो धम्मो, ‘धम्मकायो’ ति वुच्चति ॥”

६. “तिट्ठं तत्थमभिज्जाय, अक्खरानि पदानि पि ।

नाममत्थमभिज्जाय, बोधिबीजं उपागमी ॥”

७. “गुणे बहुम्हि सन्तम्हि, सद्धम्मेषु हितत्थिको।

धीरो चित्तं पसादेत्वा, धम्मो सक्कच्चगारवो ॥”

८. “आहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितंति ॥”

ग्यारहवाँ परिच्छेद धम्म—श्रवण के माहात्म्य का वर्णन

अब सद्धम्म—श्रवण के माहात्म्य का वर्णन किया जाएगा। भगवान् द्वारा कहा गया है—

१. वक्कलि। जो मेरे द्वारा उपदेशित सद्धम्म को देखता है, वह मुझे देखता है। सद्धम्म को न देखने वाला मुझे देखते हुए भी मुझे नहीं देखता है।

भगवान् द्वारा अपने परियत्ति शासन को स्वयं के समकक्ष स्थान पर स्थापित किया गया है। यह सद्धम्म अतीत, भविष्य एवं वर्तमान के सभी बुद्धों द्वारा सत्कृत, गौरवान्वित, मानित एवं पूजित है। जो सद्धम्म का सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करता है, वह तथागत का सत्कार, गौरव, सम्मान एवं पूजा करता है। भगवान् द्वारा कहा गया है—

- २-३. जो अतीत में सम्बुद्ध थे, जो भविष्य में सम्बुद्ध होंगे एवं जो वर्तमान में सम्बुद्ध हैं, उन सभी ने अनेक व्यक्तियों के शोक का नाश करने के लिए सद्धम्म का गौरव करते हुए विहार किया, विहार करते हैं एवं विहार करेंगे। यही बुद्धों की धम्मता (नियम) है।
४. इसलिये स्वयं (के कल्याण) की कामना से, महानता प्राप्त करने की इच्छा से बुद्धों के शासन (शिक्षा) का स्मरण करते हुए सद्धम्म का सम्मान करना चाहिए।
५. सम्बुद्ध के दो शरीर हैं। (एक तो) उनका तेजस्वी भौतिक शरीर (रूपकाय) है तथा उनके द्वारा उपदेशित धम्म ही (उनका) धम्मरूपी शरीर (धम्मकाय) कहा जाता है।
६. उन्होंने अभिज्ञाओं को प्राप्त कर एवं अक्षर, पद, संज्ञा तथा अर्थ को सम्यक् प्रकार से जानकर बोधि—बीज को प्राप्त किया।
७. सद्धम्म में विद्यमान अनेक गुणों में कल्याण के इच्छुक धैर्यवान् व्यक्ति को चित्त प्रसन्न कर, धम्म में सत्कार तथा आदर की भावना रखनी चाहिए।
८. अपने-अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

एकस्मिं किर समये भगवा सावत्थियं उपनिस्साय विहासि। तेन खो पन समयेन आयस्मा नन्दको उपट्ठानसालायं भिक्खू धम्मिया कथाय सन्दस्सेसि समादपेसि समुत्तेजेसि सम्पहंसेसि पोरियाय वाचाय विसिट्ठाय अनेळगलाय अत्थस्स विज्जापनियाय। ते च भिक्खू अट्ठिकत्वा मनसिकत्वा साधुचेतसा समन्नाहरित्वा ओहितसोता धम्मं सुनन्ति।

तदा पन सत्था महाजनस्स पच्छाभत्तं धम्मदेसनावसाने थोकं सरीरं अस्सादेत्वा उपट्ठाकेहि सज्जितउदकेन सुनहातो सुनिवत्थो सुपारुतो हुत्वा आयस्मतो नन्दस्स धम्मदेसनाय सवणत्थं उपट्ठानसालद्वारं गन्त्वा आविज्झनरज्जुं गहेत्वा तियाभरतिं ठितको व धम्मकथं सुत्वा देसनापरियोसाने साधुकारं अदासि—“सुकथितो, नन्द, धम्मपरियायो”ति। सत्थारा साधुकारे दिन्नमत्ते च भुम्मट्ठनागसुपण्णयक्खा च भुम्मट्ठका देवता च याव ब्रह्मलोका एकसाधुकारो एव जातो। थेरो तं सुत्वा—“सत्थु साधुकारो एस सद्दो” ति सज्जानित्वा तंखणे येव च सहसा धम्मासनतो ओतरित्वा आगन्त्वा दसबलस्स पादेसु सिरसा निपतित्वा भगवन्तं वन्दित्वा—‘काय वेलाय, भन्ते, भगवा आगतत्थ तुम्हे’ ति?

‘ताय, नन्द! सुत्तन्ते आरद्धमते ताय वेलाय इधागतो’ ति।

थेरो उब्बेगप्पत्तो हुत्वा—“दुक्करित्थ भन्ते बुद्ध! सुखुमाला तुम्हे! स्वाहं तथागतं पि जानेय्यं एत्तकं पि मे नप्पटिभाती” ति आह।

“अहं च, नन्द, कप्पसतसहस्साधिकानं चतुन्नं असंखेय्यानं उपरि एत्तकं कालं पारमियो पूरेन्तो इमस्सेव सद्धम्मस्स पटिविज्जनत्थाय विधुर—महागोविन्द—खुद्दालक—अरक—जोतिपाल—बोधिपरिब्बाजक—महोसधपण्डितादिकालं च पारमियो पूरेन्तो इमस्सेव परेसं धम्मं देसेन्ता पज्जापारमी पूरित्तभावानं तेसं परिमाणं नत्थि। तदा हि परेसं धम्मं देसेतुं च परेहि देसितं धम्मं च सोतुं मय्हं तित्ति नाम न होती” ति। तं पकासेन्तो आह—

एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती में निवास कर रहे थे। उस समय आयुष्मान् नन्दक ने उपट्टानसाला* में भिक्षुओं को विनम्र वचनों से विशिष्ट, स्पष्ट, अर्थों की शिक्षा प्रदान करने वाली धार्मिक कथा से संदर्शित, समाज्ञापित, समुत्तेजित एवं संप्रहर्षित किया। वे भिक्षु ध्यान देकर, मननपूर्वक, सुन्दर चित्त से एकत्र हो कान लगा धम्म को सुन रहे थे।

उस समय शास्ता ने महान् जनसमूह को धम्मदेशना करने के पश्चात् भोजन करके, शरीर को थोड़ा सा आराम देकर, उपस्थाक (सेवक) द्वारा तैयार जल से सम्यक् प्रकार से स्नान कर, सम्यक् प्रकार से वस्त्राच्छादित होकर आयुष्मान् नन्द की धम्मदेशना को सुनने के लिए उपट्टानसाला* के द्वार पर जाकर, वहाँ लटकती हुई दरवाजे की ढीली रस्सी पकड़ कर, रात्रि के तृतीय पहर तक खड़े हो धम्म कथा सुनकर देशना के समाप्त हो जाने पर साधुकार किया—‘नन्द! (तुम्हारे द्वारा) धम्म का अभिप्राय सुन्दर प्रकार से कहा गया।’ शास्ता द्वारा साधुकार किए जाने के साथ ही पृथ्वी के नाग, सुपण्ण, यक्ष एवं भूमि देवताओं ने ब्रह्मलोक तक पहुँचने वाली आवाज में एक साथ साधुकार किया। धेर उसे सुनकर—‘यह शास्ता द्वारा किए गए साधुकार के शब्द हैं’— ऐसा जानकर उसी क्षण सहसा धम्म—आसन से उतर कर, आ कर दसबल (बुद्ध) के पैरों में सिर गिरा कर, भगवान् की वन्दना कर (ऐसा कहा)— ‘भन्ते! भगवा! आपका आगमन कब हुआ?’

‘नन्द! तुम्हारे द्वारा सुत्त (का उपदेश) आरम्भ किए जाने के समय ही मैं यहाँ आ गया था।’

धेर ने उद्विग्न होकर कहा—‘भन्ते बुद्ध! आपने (यहाँ आकर) दुष्कर कार्य किया है। आप दुर्बल हैं। इसलिए मैं तथागत को भी जानूँ (अर्थात् मैं तथागत को भी उपदेश करूँ), ऐसा विचार भी मेरे मन में नहीं आया।’

‘नन्द! मैंने सौ हजार कण्ठों एवं चार असंख्येयों* से भी ज्यादा समय तक पारमिताओं को पूर्ण करते हुए, इस सद्धम्म में विशेषज्ञता प्राप्त करने हेतु विधुर, महागोविन्द, कुट्टालोक, अरूक, जोतिपाल, बोधि परिब्बाजक, महोसध पण्डित आदि के समय में पारमिताओं का ज्ञान प्राप्त करते हुए प्रज्ञा पारमिता को पूर्ण किया; (मेरे) उन (सद्गुणों) की कोई सीमा नहीं थी। उस समय दूसरों को धम्मोपदेश करते हुए एवं दूसरों द्वारा दिए गए धम्मोपदेश को सुनकर (भी) मुझे तृप्ति नहीं होती थी।’ इसे प्रकाशित हुए उन्होंने कहा—

* बोधिनी में देखें।

1. कप्प एवं असंखेय्य—ये एक निश्चित कालावधि अथवा युग को इंगित करते हैं। ये तीन प्रकार के दर्शाए गए हैं—महाकप्प, असंखेय्यकप्प एवं अन्तराकप्प। एक महाकप्प में चार असंखेय्यकप्प होते हैं। इस प्रसंग में कप्प का अभिप्राय महाकप्प से ही है।

९. “अहं हि अपरिमितकाले, संसरन्तो भवाभवे ।
धम्मं कथेतुं सोतुं च, मय्हं तित्ति न विज्जति ॥”
१०. “किं पन एतरहि सम्बुद्धो, सब्बज्जु करुणालयो ।
लोकस्स धम्मं देसेतुं, मय्हं तित्ति न विज्जति ॥”
११. “बुद्धोहं बोधयिस्सामि, इति यं पत्थनं कतं ।
तेन जातोमिह सम्बुद्धो, हन्द बोधेमि पाणिनं ॥”
१२. “तिण्णोहं तारयिस्सामि, इति यं पत्थनं कतं ।
तेन तिण्णोमिह दुक्खम्हा, हन्द तिण्णोमिह पाणिनं ॥”
१३. “मुत्तोहं मोचयिस्सामि, इति यं पत्थनं कतं ।
तेन मुत्तोमिह दुक्खम्हा, हन्द मोचेमि पाणिनं ॥”
१४. “अयं धम्मो महन्तेहि, सम्बुद्धेहि पकासितो ।
धम्मे चित्तं पसादेत्वा, सोतब्बं धम्ममुत्तमं ॥”

“इति दुल्लभो हि अयं धम्मो। इमस्मि जीवलोके सचे त्वं, नन्द, कप्पं वा देसेतुं सक्कुण्य्यासि कप्पमतं पाहं ठितको व सुणेय्यं” ति भगवा अवोच। तं सुत्वा आयस्मा नन्दको—“अच्छरियं, भन्ते! अब्भुतं, भन्ते! सब्बजेय्यधम्मेसु विदितत्ता, अनुपन्नस्स मग्गस्स उप्पादेता, असज्जातस्स मग्गस्स सज्जानेता, अनक्खातस्स मग्गस्स अक्खाता, मग्गज्जु, मग्गविदु, एवं तथागतो इमं सद्धम्मं अत्तना कथेतुं वा परेहि वा देसितं सोतुं वा तित्तिं वा किलमथं वा नेव अज्झगमी” ति। इति जत्वा सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति नन्दकदेसना पठमा।

इध सद्धम्मस्स सवनाय नानासनतो अगम्मधम्मसभामण्डले सन्निसिन्ना सन्निपतिता ते ते तेहि च सब्बेहि सम्बहुमानेहि सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो। एत्थ एकच्चो धम्मकथिको “एस धम्मकथिको ति जानिस्सन्ती” ति इच्छाचारे ठत्वा लाभगरुको हुत्वा देसेसि, तं न महप्फलं। एकच्चो अत्तनो पगुणधम्मं अपच्चासिंसमानो परेसं धम्मं देसेसि, तं महप्फलं। इदं देसनामयपुज्जकिरियवत्थुं च लभति। एकच्चो तत्थ सुणन्तो—“इति मं सद्धो विजानिस्सती” ति—इच्छाचारे ठत्वा लाभगरुको हुत्वा सुणाति, तं न महप्फलं। एकच्चो पन—“एतं धम्मसवनं मय्हं महप्फलं च भविस्सती” ति, हितकामो परमेन मुदुचित्तेन धम्मसवनसमन्नागतो धम्मं सुणाति, इदं पि सवनामयं पुज्जकिरियवत्थुं लभति। एत्थ धम्मसवने सक्कच्चसवनस्स च साधुकारदानस्स च आनिसंसं दस्सनत्थं इदं वत्थु—

९. असीमित काल तक विभिन्न जन्मों में संसरण करते हुए धम्म को कहने या सुनने से (भी) मुझे तृप्ति नहीं होती थी।
१०. आज सम्बुद्ध, सर्वज्ञ एवं करुणा का घर होने के पश्चात् भी संसार को धम्मोपदेश करते हुए क्यों मुझे तृप्ति नहीं होती है?
११. मैं बुद्ध होकर (दूसरों को) बोधि प्राप्ति कराऊँगा—ऐसा संकल्प कर मैं सम्बुद्ध के रूप में उत्पन्न हुआ हूँ। अब मैं प्राणियों को बोधि प्राप्त कराता हूँ।
१२. (भव सागर से) पार होकर मैं (दूसरों को) पार कराऊँगा—ऐसा संकल्प कर मैं दुःख से पार हुआ हूँ। अब मैं प्राणियों को पार कराता हूँ।
१३. मुक्त होकर मैं दूसरों को मुक्त कराऊँगा—ऐसा संकल्प कर मैं दुःख से मुक्त हो गया हूँ। अब मैं प्राणियों को मुक्त कराता हूँ।
१४. यह धम्म महान् सम्बुद्धों द्वारा प्रकाशित है। धम्म में चित्त को प्रसन्न कर श्रेष्ठ धम्म को सुनना चाहिए।

‘यह धम्म दुर्लभ है। नन्द! यदि इस जीवलोक में एक कप्प भर तुम उपदेश करने में समर्थ होवो, तब मैं भी एक कप्प तक ठहर कर उसे सुनूँ’—ऐसा भगवान् ने कहा। यह सुनकर आयुष्मान् नन्द ने ऐसा कहा—‘आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत है, भन्ते! समस्त अज्ञेय बातों के ज्ञानी, अनुत्पन्न मार्ग के उत्पन्नकर्ता, अज्ञात मार्ग के ज्ञाता, अव्याख्यायित मार्ग के व्याख्याता, मार्ग—ज्ञानी, मार्ग—कुशल, तथागत इस धम्म को स्वयं उपदेशित करते हुए या दूसरों द्वारा उपदेशित किए गए को सुनते हुए तृप्ति या थकान को नहीं प्राप्त होते हैं।’ ऐसा जानकर सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। यह नन्दक को प्रथम उपदेश था।

यहाँ सद्धम्म—श्रवण के लिए विभिन्न आसनों (पदों) से आए, धम्म—सभामण्डल में एकत्र होकर बैठे सभी सम्माननीय व्यक्तियों को सत्कारपूर्वक धम्म को सुनना चाहिए। यहाँ कुछ धम्मकथिक व्यक्ति ‘यह धम्मकथिक है—ऐसा लोग जानेंगे’ इस प्रकार से लाभ एवं सम्मान की इच्छा रखते हुए विचरण करते हैं, इसका फल महान् नहीं होता है। कुछ लोग स्वयं द्वारा सुज्ञात धम्म को ‘मैं (ज्ञान के विषय में) बालक हूँ’ ऐसा मानते हुए दूसरों को उपदेश देते हैं, इसका फल महान् होता है। वे देशना के फलस्वरूप पुण्य कर्मों के (दस) आधारों* को प्राप्त करते हैं। कुछ लोग वहाँ (धम्म को) सुनकर ‘लोग मुझे श्रद्धावान् जानेंगे’ इस प्रकार से लाभ एवं सम्मान की इच्छा रखते हुए, सुनते हैं; इसका फल महान् नहीं होता है। कुछ लोग—‘यह धम्म—श्रवण मेरे लिए महान् फलदायक होगा’ ऐसा सोचते हुए कल्याण की इच्छा रखते हुए, परम मृदु चित्त से धम्म—श्रवण की तरफ उन्मुख हो धम्म को सुनते हैं, वे श्रवण के फलस्वरूप पुण्य कर्म के (दस) आधारों को प्राप्त करते हैं। यहाँ धम्म—श्रवण के विषय में उसे सत्कारपूर्वक सुनने तथा साधुकार किए जाने के माहात्म्य एवं प्रकाशन के लिए यह कथा (कही गई) है—

१. धम्म का उपदेशक।

* बोधिनी में देखें।

सावत्थियं किर एकस्सा कुटुम्बियधीताय सामिको सत्थु धम्मदेसनं सुत्वा—“न सक्का मया अयं धम्मो गिहीभूतेन पूरेतुं, पब्बजिस्सामी” ति—विहारं गन्त्वा अज्जतरस्स पिण्डपातिकस्स सन्तिके पब्बजि। अथस्स भरियं अस्सामिका अयं ति जत्वा पसेनदिकोसलो अन्तेपुरं आहरापेसि। एकदिवसं एको पुरिसो केनचिदेव करणीयेन एकं नीलुप्पलकलापं आदाय अन्तेपुरं पविट्ठो राजानं अदासि। अथ राजा नीलुप्पलकलापं गहेत्वा तासं इत्थीनं एकेकं नीलुप्पलं अदासि। पुप्फेसु भाजियमानेसु सा इत्थी द्वे हत्थे पसारत्वा पहट्ठाकारं दस्सेत्वा, उपसिङ्घित्वा परोदि। राजा तस्सा उभयकारणं दिस्वा तं पक्कोसापेत्वा पुच्छि। सा अत्तनो तुट्ठकारणं च रोदितकारणं च कथेन्ती आह—

१५. “महं सामिकथेरस्स, मुखगन्धो पवायति ।

उप्पलं व सरन्तानं, परोदामि रथेसभ ॥”

१६. “तस्स अस्सासपस्सासो, ससुगन्धो पवायति ।

पगेव सुकते राजा, सरित्वा तं परोदयिं ॥”

याव तत्तियं कथिते पि राजा असद्धन्तो पुन दिवसे सकलराजनिवेसने सब्बमालविलेपनादिसुगन्धे बहिकारेत्वा बुद्धपमुखस्स भिक्खुसंघस्स आसनं पज्जापेत्वा बुद्धपमुखस्स भिक्खुसंघस्स निमन्तेत्वा आसने निसीदापेत्वा महादानं दत्वा भत्तकिच्चपरियोसाने तं इत्थिं एवमाह—“कतरो थेरो” ति। “एस, देव, थेरो” ति। ततो राजा सत्थारं वन्दित्वा—“भन्ते, तुम्हेहि सद्धिं भिक्खुसंघो गच्छति। तुम्हाकं असुकथेरो अनुमोदनं करोतू” ति आह। अथ सत्था तं भिक्खुं ठपेत्वा विहारं गतो। अथ थेरो अनुमोदनवत्थुं आरद्धमते सकलराजनिवेसनं गन्ध—कप्पूरक—चन्दन—कललगन्धं। अपूरं विय जातं। स राजा—“सच्चमेव सा भासती” ति पसीदित्वा पुनदिवसे सत्थारं कारणं पुच्छि। अथ भगवा—“अयं, महाराज, अतीते धम्मकथं सुणन्तो पञ्चवण्णाय पीतिया फुटसरीरो उद्धग्गलोमो ताय पीतिया परिपूरितसरीरो मुखतो निक्खमित्वा—“साधु साधू” ति साधुकारं पवत्तेन्तो धम्मं अस्सोसि। तं मूलतो तेन महाराज, अयं आनिसंसो लद्धो” ति आचिक्खि। यत्थाह—

श्रावस्ती में किसी गृहस्थ की बेटी का पति शास्ता के धम्म-देशना को सुनकर—‘गृहस्थ के रूप में मेरे लिए यह धम्म पूर्ण करना संभव नहीं है, प्रव्रजित होऊँगा’—ऐसा विचार कर विहार जाकर भिक्षाटन पर जीवन व्यतीत करने वाले किसी (भिक्षु) के पास प्रव्रजित हो गया। ‘यह स्त्री बिना पति की है’—ऐसा जानकर कोशल राज पसेनदि (प्रसेनजित) ने उसे अपने अन्तःपुर में मँगवा लिया। एक दिन किसी कार्य से नील—कमल के एक गुच्छे को लेकर, अन्तःपुर में प्रविष्ट हो एक व्यक्ति ने उसे राजा को दिया। राजा ने नील—कमल के गुच्छे को ले स्त्रियों में एक—एक नील—कमल बाँट दिया। पुष्पों के वितरण किए जाने पर उस स्त्री ने दोनों हाथों को पसार कर प्रसन्नता का भाव दर्शाया, किन्तु (फूल को) सूँघकर रो पड़ी। राजा ने उसके दोनों भावों को देख उसे बुलवाकर (कारण) पूछा। उसने (स्त्री) स्वयं के प्रसन्न होने एवं रोने का कारण बताते हुए कहा—

१५. हे रथचालकों के स्वामी! इसमें मेरा पति, जो थेर हो गया है, के मुख की गन्ध बहती है। मैं कमल के समान उसको स्मरण करते हुए रोने लगती हूँ।

१६. उसका आश्वास—प्रश्वास (सांस अन्दर खींचना एवं बाहर छोड़ना) सुगन्धित होकर बहता है। हे राजा! पूर्व में किए गए उसके पुण्य कर्मों को स्मरण करके मैं रोई।

तीसरी बार भी यह बात कहे जाने पर राजा ने विश्वास न करते हुए अगले दिन सम्पूर्ण राजनिवास के माला, विलेपन आदि सुगन्धित पदार्थों को हटवा कर बुद्ध के प्रमुखत्व वाले भिक्षुसंघ के लिए आसन लगवा कर, बुद्ध के प्रमुखत्व वाले भिक्षुसंघ को निमन्त्रित कर, आसन पर बिठा कर, महादान देकर भोजन आदि के समाप्त हो जाने पर उस स्त्री को कहा (पूछा)—

‘(वह) कौन सा थेर है?’

‘देव! यह थेर है।’

तब राजा ने शास्ता की वन्दना कर कहा—‘भन्ते! आपके साथ भिक्षुसंघ (वापस लौट) जाए। आपका अमुक थेर (रूककर) अनुमोदन* करे।’ शास्ता उस भिक्षु को छोड़कर विहार लौट गए। इसके बाद थेर के अनुमोदन प्रारम्भ करने के साथ ही, सम्पूर्ण राजनिवास कर्पूर, चन्दन एवं तिल के तेल के अवशिष्ट पदार्थों की सुगन्ध से भर गया। राजा ने—‘वह (स्त्री) सत्य ही कहती है’ ऐसा सोच प्रसन्न होकर अगले दिन शास्ता से (इसका) कारण पूछा। भगवान् ने कहा—‘महाराज! यह अतीत में धम्म को सुनते हुए पाँच प्रकार की प्रसन्नता से पूर्ण शरीर वाला हो, रोमांचित रोयें वाला हो, प्रीति से परिपूरित शरीर एवं मुख से ‘साधु, साधु’ (शब्द) निकालकर साधुकार करते हुए धम्म को सुनता था। हे महाराज! उसी (पुण्य) के कारण इसने इस माहात्म्य को प्राप्त किया है। कहा गया है कि—

1 शव के संलेपन में प्रयुक्त होने वाला सुगन्धित पदार्थ।

* बोधिनी में देखें।

१७. “सद्धम्मदेसनाकाले, साधु साधू ति भासतो ।

मुखतो वायति गन्धो, उप्पलं व यथोदके ॥”

१८. “मधुरभासितं सम्बुद्धभासितं, मधुरधम्ममिमं सुपसंसियो ।

मधुर भारतिया मतिमा नरो, मधुररावमुखो ससुगन्धो ॥”

अयं सक्कच्चसवनस्स च आनिसंसो पस्समानेन सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति साधुकारदानं दुतियं।

१९. “सद्धम्मसवनत्थाय, सन्निसिन्ना इधागता ।

सम्पसादकतं चित्तं, कत्वा धम्मं सुणन्तु तं ॥”

एकस्मिं समये सत्था सावत्थियं उपनिस्साय जेतवने विहरन्तो तथागतो संघवरेन सद्धिं ब्रह्मेहि देवेहि च पूजियमानो बुद्धो तदा सुत्तमिदं अभासि—“द्वेमानि, भिक्खवे, दानानि। कतमानि द्वे? आमिसदानं च धम्मदानं च—इमानि खो, भिक्खवे, द्वे दानानि। एतदगं, भिक्खवे, इमेसं द्वित्रं दानानं यदिदं धम्मदानं” ति। एस धम्मो नाम सतिपट्ठान—सम्मप्यधानानि, इद्धिपाद—इन्द्रिय—बल—बोज्झंग— अट्ठंगिकमग्ग—अरियसच्च—विपस्सना—अग्गफलनिब्बानदीपको एसो वुच्चति धम्मो। इध पन यो कोचि पुञ्जकामो उल्लपतु सभावसहितेन, यं किञ्चि नवंगानं सासनानं सुत्तगेय्यादिकानं एतेसं अज्जतरं आमिसनिरपेक्खो हुत्वा सद्धम्मेव गरुत्वा सुत्तं वा वेदल्लं वा देसेसी ति। इदं धम्मदानं उत्तमदानं ति वुच्चति।

सचे पि हि इमं चक्कवाळगब्भं याव ब्रह्मलोका निरन्तरं पल्लंकं कत्वा निसिन्नां बुद्ध—पच्चेकबुद्ध—खीणासवानं कदलिगब्भसदिसानि चीवरपहोनकानि सुखुममहग्घानि चीवरानि ददेय्य, तस्मिं समागमे दानस्स अनुमोदनत्थं चतुप्पदिकाय गाथाय कतअनुमोदना व सेट्ठा। तं किस्स हेतु? तं हि दानं तस्सा गाथाय सोळसिं कलं न अग्घती ति, एवं धम्मं देसेन्तो आनिसंसं आह। अथ वा पुन पि महानिसंसो। येन च पुग्गलेन तं धम्मसवनं कारितं तस्सेव महानिसंसमाह।

१७. सद्धम्म के उपदेश के समय 'साधु,' 'साधु' कहने पर पानी में पड़े कमल के समान मुख से सुगन्ध फैलती है।

१८. सम्बुद्धों का भाषण मधुर भाषित है। इस मधुर धम्म की सुन्दर प्रकार से प्रशंसा करने वाला व्यक्ति मधुर वाणी वाला, मतिवान्, मधुरता से सेने वाला तथा सुगन्धित मुख वाला होता है।

सत्कारपूर्ण श्रवण के माहात्म्य को देखते हुए सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए—यह साधुकार का द्वितीय (विवरण) है।

१९. सद्धम्म—श्रवण के लिए यहाँ आए एवं एकत्र होकर बैठे सभी लोग प्रसन्न चित्त करके धम्म को सुनें।

एक समय शास्ता, तथागत बुद्ध ने उत्तम संघ सहित श्रावस्ती के जेतवन में विहार करते हुए, ब्रह्माओं एवं देवों द्वारा पूजित होते हुए, इस सुत्त को कहा—'भिक्षुओं! दान दो प्रकार के होते हैं। कौन से दो? भिक्षुओं! वस्तुओं का दान तथा धम्म—दान—ये दो प्रकार के दान होते हैं। भिक्षुओं! इन दो दानों में धम्म—दान श्रेष्ठ है।' इस धम्म का अभिप्राय स्मृति प्रस्थान, 'सम्यक् प्रधान,' ऋद्धिपाद, 'इन्द्रिय, बल, बोध्यंग,' अष्टांगिक मार्ग, 'आर्य सत्य,' विषयना' एवं अन्तिम फल—निर्वाणरूपी दीपक है; यह धम्म कहलाता है। इस संसार में जो कोई पुण्य की इच्छा रखने वाला व्यक्ति सुत्त, गेय्य आदि (बौद्ध) शासन के नौ अंगों को प्रशंसामूलक वास्तविक रूप में वर्णित करता है; सांसारिक वस्तुओं के प्रति निरपेक्ष हो जो सद्धम्म का सम्मान करते हुए सुत्त या वेदल्ल का उपदेश देता है। यह धम्मदान उत्तम दान कहलाता है।

यदि इस चक्रवाल* गर्भ से ब्रह्मलोक तक निरन्तर पालथी मार कर बैठे हुए (देवों) को, क्षीणास्रवों, प्रत्येक—बुद्धों एवं बुद्धों को कोई केले के गर्भ के समान (मुलायम), सूक्ष्म एवं अति मूल्यवान चीवर भी पर्याप्त संख्या में (दान) दे, किन्तु उस परिषद में दान का अनुमोदन करने के उद्देश्य से चार पदों की गाथा का किया गया अनुमोदन (पहले प्रकार के दान की तुलना में) श्रेष्ठ है। वह किस कारण से? (क्योंकि) वह (पहले प्रकार का दान) उस गाथा के सूक्ष्मतम् अंश के समान (महत्त्व का) भी नहीं है। इस प्रकार धम्म की देशना करते हुए उसका माहात्म्य कहा गया। पुनः महामाहात्म्य भी कहा गया। जिस व्यक्ति द्वारा दूसरों को धम्म—श्रवण करवाया जाता है, वह महान पुण्यों को प्राप्त करता है, ऐसा कहा गया है।

* बोधनी में देखें।

पुन तथारूपायेव परिसाय सालिमंसोदनस्स अनेकसूपव्यञ्जनस्स पणीतस्स पिण्डपातस्स पत्ते पूरेत्वा दिन्नदानतो पि; सप्पिनवनीततेलमधुफाणितसक्करादिनं पूरेत्वा दिन्नभेसज्जदानतो पि, महाविहारसदिसानं विहारानं लोकपासादसदिसानं च पासादानं अनेकसतसहस्सानि कारेत्वा दिन्नसेनासनदानतो पि, अनाथपिण्डिको गृहपति पि जेतवनविहारकरणत्थं अट्टारसहि कोटीहि भूमियं सन्थरित्वा किणाति, अट्टारसहि कोटीहि पासादं करोति, अट्टारसहि कोटीहि विहारमहं करोति, एवं चतुपञ्चासकोटीहि कतपरिच्चागतो; तथा पुब्बारामे विसाखाय च महाउपासिकाय कारिते पासादे नवहि कोटीहि भूमिं किणाति, नवहि कोटीहि पासादं करोति, नवहि कोटीहि विहारमहं करोति, एवं सत्तवीसतिकोटीपरिच्चागतो, तस्मिं समागमे अन्तमसो चतुप्पदिकाय गाथाय अनुमोदनवसेनापि तत्थ पवत्तितं धम्मदानमेव सेट्ठं। किं कारणा?

एवरूपानि हि पुज्जानि ये खत्तियब्राह्मणमहासाला करोन्ति धम्मं सुत्वा व करोन्ति नो असुत्वा। सचे पि इमे सत्ता धम्मं न सुणैय्युं उल्लुं कमत्तं यागुं पि कटच्छुमत्तं भत्तं पि न ददेय्युं। इमिना कारणेन सब्बदानेहि धम्मदानमेव सेट्ठं। अपि च ठपेत्वा बुद्धपच्चेकबुद्धे च ये च अज्जे सकलकप्पं देवे वस्सन्ते उदकबिन्दूनि गनेतुं समत्थाय पज्जाय समन्नागता सारिपुत्तादयो हि अत्तनो धम्माय सोतापत्तिफलादीनि अधिगन्तुं न सक्खिंसु, अस्सजिथेरादीहि कथितधम्मं सुत्वा सोतापत्ति फलं सच्छिकरिसु, सत्थु धम्मदेसनाय सावकपारमिजाणं सच्छिकरिसु। सारिपुत्तत्थेरो पि भगवतो धम्मदेसनं सुत्वा सह अरहत्तमगेन सोळस जाणानि पटिबुज्झि—सोतापज्जो, वेपुल्लपज्जो, वुद्धिपज्जो, महापज्जो, पुत्थुपज्जो, गंभीरपज्जो, समन्तपज्जो, भूरिपज्जो, बहुलपज्जो, सीघपज्जो, लहुपज्जो, हासुपज्जो, जवनपज्जो, तिकखपज्जो, निब्बेधिकपज्जो, सावकपारमिजाणप्पत्तो जातो। इमिना कारणेन सब्बेसं दानानं धम्मदानमेव सेट्ठं उत्तमं वरं, अगगं अक्खायती ति।

इदमेव धम्मदानसज्जाय सत्थारं उपसंक्रमित्वा दससहस्सचक्कवाळदेवताहि पुरक्खतो सक्को देवानमिन्दो भगवन्तं वन्दित्वा पुच्छति—“भन्ते, कतरदानं दानेसु उत्तमं, कतरो रसो रसेसु उत्तमो, कतरा रती रतीसु उत्तमा, तण्हक्खयो कस्मिं जेड्डको” ति? अथ सत्था तस्स चत्तारो पण्हे विस्सज्जेन्तो इमं गाथमाह—

पुनः इसी प्रकार परिषद के लिए अन्न एवं मांस के, अनेक प्रकार के कढ़ी एवं व्यञ्जनों से तैयार उत्तम भोजन के पात्र भरकर दिए गए दान से भी; घी, मक्खन, तेल, मधु, गुड़ एवं शक्कर आदि से परिपूर्ण औषधि के दान से भी; महाविहारों के समान विहार एवं लौह प्रासाद के समान प्रासाद का कई सौ हजार की संख्या में निर्माण करा (उसके लिए) दिए गए शयनासन के दान से भी; अनाथपिण्डिक गृहपति द्वारा जेतवन विहार निर्माण हेतु अट्ठारह करोड़ (सिक्कों) को भूमि पर बिछा कर (उस भूमि को) खरीदने, अट्ठारह करोड़ का प्रासाद बनवाने, अट्ठारह करोड़ का विहार बनवाने—इस प्रकार चौवन करोड़ के दान से भी; महाउपासिका विसाखा द्वारा पूब्बाराम निर्माण हेतु नौ करोड़ की भूमि खरीदने, नौ करोड़ के प्रासाद बनवाने तथा नौ करोड़ के विहार बनवाने—इस प्रकार सत्ताईस करोड़ के दान से भी उस परिषद में चार पदों की गाथा के अनुमोदन मात्र के व्यवहार से किया गया धम्म—दान ही श्रेष्ठ है। किस कारण से?

क्षत्रिय एवं ब्राह्मण महाशाल जो पुण्य कर्म करते हैं, वे धम्म को सुनकर ही करते हैं, न सुनकर नहीं। यदि इन प्राणियों ने धम्म को न सुना होता, तो वे एक कल्लुल यवागु अथवा एक चम्मच भात भी (दान में) न देते। इन्हीं कारणों से सभी दानों से धम्म—दान श्रेष्ठ है। बुद्धों एवं प्रत्येक बुद्धों के अतिरिक्त जो कोई अन्य, सम्पूर्ण कप्प भर देव के वर्षा करने पर भी पानी की बूँदों को गिनने में समर्थ, प्रज्ञा से युक्त सारिपुत्त आदि व्यक्ति थे, वे अपनी योग्यता से सोतापत्ति फल आदि का अधिगम करने में समर्थ नहीं थे; (उन्होंने) अस्सजि थेर आदि द्वारा कहे गए धम्म को सुनकर सोतापत्ति फल का साक्षात्कार किया, शास्ता द्वारा उपदेशित धम्म को सुनकर श्रावक पारमिता ज्ञान का साक्षात्कार किया। सारिपुत्त थेर ने भगवान की धम्म—देशना सुनकर अर्हत् मार्ग के साथ-साथ सोलह प्रकार का ज्ञान प्राप्त किया, ये हैं—सोत—प्रज्ञा, वेपुल्ल—प्रज्ञा, बुद्धि—प्रज्ञा, महा—प्रज्ञा, पुथु—प्रज्ञा, गंभीर—प्रज्ञा, समन्त—प्रज्ञा, भूरि—प्रज्ञा, बहुल—प्रज्ञा, सीध—प्रज्ञा, लहु—प्रज्ञा, हासु—प्रज्ञा, जवन—प्रज्ञा, तिकख—प्रज्ञा, निब्बेधिक—प्रज्ञा, सावक पारमिता—ज्ञान। इन्हीं कारणों से सभी दानों में धम्म—दान ही श्रेष्ठ, उत्तम, उत्कृष्ट एवं अग्र कहा जाता है।

इसी धम्म—दान के ज्ञान के लिए शास्ता के पास पहुँच दस हजार चक्कवाल देवताओं के प्रमुख, देवों के राजा सक्क ने भगवान् की वन्दना करके पूछा—‘भन्ते! दानों में कौन सा दान उत्तम है, रसों में कौन सा रस उत्तम है, आनन्दों में कौन सा आनन्द उत्तम है, किस कारण से तृष्णा का क्षय सर्वोत्तम है?’ शास्ता ने उन चार प्रश्नों के उत्तर देते हुए इस गाथा को कहा—

२०. “सब्बदानं धम्मदानं जिनाति । सब्बं रसं धम्मरसो जिनाति ॥

सब्बं रतिं धम्मरती जिनाति । तण्हक्खयो सब्बदुक्खं जिनाति ॥”

एवं सत्थरि इमिस्सा गाथाय चतुन्नं पज्झानं अत्थं कथेन्ते येव चतुरासितीया देवतासहस्सानं धम्माभिसमयो अहोसि। सक्को सत्थु धम्मकथं सुत्वा सत्थारं वन्दित्वा आह—“भन्ते, एवं जेड्डेके नाम धम्मदाने पि किं अत्थं अम्हाकं पत्तिं न दापेथ, साधु इतो पट्टाय नो भिक्खु संघस्स कथेत्वा पत्तिं दापेथ भन्ते” ति वत्वा तथागतं वन्दित्वा तिक्खत्तुं पदक्खिणं कत्वा सद्धिं परिसाय देवलोकमेव अगमासि। अथ सत्था तस्सा रतिया अच्चयेन भिक्खुसंघं सन्निपातेत्वा एवं आह— “भिक्खवे, अज्जादिं कत्वा महाधम्मसवनं वा पकतिधम्मसवनं वा निसिन्नकथं वा अन्तमसो अनुमोदनं वा कथेत्वा सब्बसत्तानं पत्तिं ददेय्यथा” ति। (वुत्ते) “साधु, भन्ते” ति भिक्खुसंघो सम्पटिच्छि। ततो पट्टाय यावज्जतना पि सब्बसत्तानं पत्तिं देन्ति येव। एवं बुद्धगुणं विदित्वा बुद्धे भगवति चित्तप्पसादनं कत्वा सक्कच्चयं सद्धम्मो कथेतब्बो च सोतब्बो चा ति धम्मदानं ततियं।

२१. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं” ति ॥”

२२. “यं जराव्याधिमरणं, गीतं इत्थीहि भासितं ।

तं निसामेन्ति सप्पज्जा, पप्पोन्ति फलमुत्तमं” ति ॥”

कथं? अतीते बुद्धन्तरे किर अज्जतरो पुरिसो सत्तहि पुत्तेहि सद्धिं अरज्जं पविसित्वा यं कत्तब्बं कम्मं तं दिवसभागेन खेपेत्वा सायण्हसमयं अटवित्तो आगम्म अज्जतराय इत्थिया अत्तनो द्वारमुखे उदुक्खलं धज्जेन पूरेत्वा मूसलेन कोट्टेत्वा सुप्पेन पप्पोठेन्तिया—

२३. “धज्जमिदं मुसलेन पभिन्नं, नित्थुसकं इध तण्डुलमतं ।

रूपमिदं हि जराय पभिन्नं, पस्सथ अट्टिकसंखलिमतं ॥”

२४. “जराय परिमदितं एतं, मिलातच्छवीमंसनिस्सितं ।

मरणेन पभिज्जति एतं, मच्चुराजस्स घसमामिसं ॥”

“किमीनं आलयं एतं, नानाकुणपपूरितं ।

असुचिस्स भाजनं एतं, कदलिक्खन्धसममिदं ॥”

२०. सभी दानों में धम्म का दान श्रेष्ठतम है। सभी रसों में धम्म का रस श्रेष्ठतम है। सभी आनन्दों में धम्म का आनन्द श्रेष्ठतम है एवं तृष्णा का क्षय सभी दुःखों को जीत लेता है।

इस प्रकार शास्ता द्वारा इस गाथा में चार प्रश्नों के उत्तर कहे जाने के साथ ही चौरासी हजार देवताओं को धम्म का साक्षात्कार हुआ। सक्क ने शास्ता की धम्म—कथा को सुनकर शास्ता की वन्दना करके कहा—‘भन्ते! क्यों नहीं इस प्रकार के श्रेष्ठ धम्म—दान को आप हम लोगों को प्राप्ति हेतु देते? भन्ते! अच्छा हो कि आगे से आप भिक्षुसंघ को कहकर हमारी प्राप्ति के लिये (धम्म—दान) हमें दिलवाएँ। ऐसा कहकर तथागत की वन्दना कर तीन बार प्रदक्षिणा^१ कर (सक्क) परिषद के साथ देवलोक चला गया। इसके बाद शास्ता ने उस रात के बीतने पर भिक्षुसंघ को एकत्र कर ऐसा कहा—‘भिक्षुओ! आज से आरम्भ करमहाधम्म—श्रवण (का उपदेश करके) या सामान्य धम्म—श्रवण (का उपदेश करके) या बैठकर उपदेश करके या कम से कम अनुमोदन करके सभी प्राणियों की प्राप्ति के लिए (धम्म—दान) दो।’ ऐसा (बुद्ध द्वारा) कहे जाने पर ‘अच्छा, भन्ते!’ इस प्रकार भिक्षुसंघ ने जबाब दिया। तब से प्रारम्भ कर आज तक (भिक्षु) सभी प्राणियों की प्राप्ति के लिए धम्म—दान देते हैं। इस प्रकार बुद्ध के गुणों को जानते हुए बुद्ध, भगवान के प्रति चित्त प्रसन्न कर शुभ धम्म को कहना एवं सुनना चाहिए; यह तृतीय धम्म—दान है।

२१—२२. अपने—अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए। जो प्रज्ञावान् व्यक्ति स्त्रियों द्वारा भाषित जरा, व्याधि एवं मृत्यु विषयक गीत को सुनते हैं, वे उत्तम फल (निर्वाण) को प्राप्त करते हैं।

कैसे? अतीत में बुद्धन्तर^२ में किसी पुरुष ने अपने सात पुत्रों के साथ जंगल में प्रविष्ट होकर, करणीय कार्यों को दिन में समाप्त कर, सायंकाल जंगल से लौटकर किसी स्त्री को अपने द्वार के सामने ऊखल को धान से भरकर मूसल से कूटकर सूप में फटकते हुए एवं गाते हुए देखा—

२३. यह धान मूसल द्वारा कूटा जाकर के भूसी से रहित हो चावल मात्र रह जाता है। (उसी प्रकार) देखो कि यह रूप भी जरा से टूटकर अस्थिकंकाल मात्र रह जाता है।

२४. जरावस्था से परिमर्दित यह (शरीर) म्लान हुई चमड़ी एवं मांस पर आश्रित है। यह शरीर मृत्यु के पश्चात् बिखरकर मृत्युराज द्वारा खाया जाने वाला भोजन है। यह कीड़ों का घर है एवं विभिन्न गन्दगियों से भरा हुआ है। यह अशुद्धियों का भोजन (पात्र) है तथा केले के स्कन्ध के समान सारहीन है।

1. प्रदक्षिणा—बुद्ध के चारों ओर बायें से दाहिने तरफ गोल चक्कर लगाकर श्रद्धा प्रदर्शित करना।

2. दो बुद्धों के उत्पन्न होने के बीच का काल।

२५. “धज्जमिदं मुसलेन पभिन्नं,
 कायमिदं मरणेन पभिन्नं ।
 पस्सथ पस्सथ रूपपभिन्नं,
 जातिजरामरणेन पभिन्नं’ ति ॥”

सो इमं गीतं सुत्वा पच्चवेकखन्तो “अनिच्चं दुक्खं अनत्तं” ति तिण्णं आरोपेत्वा तत्थेव सहपुत्तेहि पच्चेकबोधिं पत्तो। अथ सायमासकाले भोजनत्थं “भुज्जथ इदं” ति मानुस्सकेहि निमन्तिता “न मयं विकाले भुज्जाम, पच्चेकबुद्धानाम मयं” ति। “सामि पच्चेकबुद्धानाम तुम्हादिसा न होन्ती” ति।

“अथ कीदिसा होन्ती” ति?

“ओरोहितकेसमस्सुका कासायवत्थपटिच्छन्ना कुले वा गणे वा अलग्गा वातच्छिन्नवलाहका राहुमुखमुत्तचन्दमण्डलपटिभागा हिमवन्ते नन्दमूलकपम्भारे वसन्ति, एवरूपा अय्या पच्चेकबुद्धा” ति।

तस्मिं खणे सब्बे पि हत्थं उक्खिपित्वा सीसं परामसिंसु। तावदेव गिहीलिंगं अन्तरधायी, समणलिंगं पातुरहोसि। सब्बे अट्ठपरिक्खारधरा कायपटिबद्धा च अहेसुं। ते आकासे उत्त्वा महाजनस्स ओवादं दत्त्वा अनिलपथेन उत्तरहिमवन्ते नन्दमूलकपम्भारमेव अगमिंसु।

एवं गीतपरियापन्नं अनिच्चदुक्खमनत्तं धम्मं सुत्वा पण्डितपुरिसा तं निस्साय अत्तनो मोक्खसुखावहा होन्ति। इति विदित्वा तस्मा तेनाहु पोरणा—

२६. “जातिगोत्ताकुलं रूपं, अपस्सित्वा व पण्डिता ।
 धम्ममेव थिरं कत्वा, सोतब्बं धम्ममुत्तमं ॥”
 “गाविवण्णं अपस्सित्वा, खीरं पस्सेय्य पण्डितो ।
 गाविजातम्हि यं खीरं, रसानं उत्तमं रसं ॥”
 “एवं अयम्पि सद्धम्मो, येन केनचि देसितो ।
 तेन सक्कच्च सोतब्बो, धम्मो सम्बुद्धदेसितो ॥”
 “धम्मं सम्बुद्धतो सुत्वा, परेसं देसयन्ति ये ।
 चे पकासेन्ति अज्जेसं, सब्बं तं बुद्धदेसितं’ ति ॥”

२५. यह धान मूसल से टूटती है, यह शरीर मृत्यु से टूटता है। देखो, देखो टूटे हुए रूप (शरीर) को, जन्म, जरा एवं मृत्यु से टूटे हुए को।

उसने इस गीत को सुनकर मनन करते हुए 'अनित्य, दुःख, अनात्म' इन तीनों को जानकर वहीं पर अपने पुत्रों के साथ प्रत्येक बोधि को प्राप्त कर लिया। इसके बाद सायंकाल में लोगों द्वारा भोजन के लिए आमंत्रित किए जाने पर कि 'यह खाएँ,' उन्होंने उत्तर दिया कि 'हम असमय भोजन नहीं करते हैं, हम प्रत्येक बुद्ध हैं।'

'स्वामी! प्रत्येक बुद्ध तुम्हारे जैसे नहीं होते हैं।'

'तब कैसे होते हैं?'

'अपने बाल तथा दाढ़ी को छिलवा कर, काषायवस्त्र से ढँके, कुल अथवा गण के प्रति तृष्णारहित हो वे वायु से पृथक बादल के समान एवं राहु से मुक्त चन्द्रमा के समान हिमालय में नन्द पर्वत के ढाल पर निवास करते हैं। ऐसे श्रेष्ठ प्रत्येक बुद्ध होते हैं।' उसी क्षण उन सभी ने (पुरुष एवं उसके सात पुत्रों ने) हाथों को उठाकर अपने सिर को स्पर्श किया। तत्काल ही उनमें गृहस्थ के लक्षण अन्तर्धान हो गए एवं श्रमण के लक्षण प्रकट हो गए। वे सभी आठ परिक्रारों* से युक्त शरीर वाले हो गए। वे आकाश में खड़े होकर महान जनसमूह को उपदेश देकर वायु मार्ग से हिमालय के उत्तर में स्थित नन्द पर्वत के ढाल पर चले गए।

इस प्रकार ज्ञानी पुरुष गीत में समाहित अनित्य, दुःख एवं अनात्म धम्म को सुनकर (मात्र) उसी के आधार पर अपने मोक्ष एवं सुख को प्राप्त करने वाले होते हैं। यह जानकर इसीलिए पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

२६. ज्ञानियों द्वारा जाति, गोत्र, कुल एवं रूप को न देखकर धम्म में ही स्वयं को स्थिर करके उत्तम धम्म को सुनना चाहिए।

गाय के वण्ण को न देखकर ज्ञानी व्यक्ति को उसके दूध को देखना चाहिए (क्योंकि) गाय में उत्पन्न दूध का स्वाद समस्त स्वादों में सर्वोत्तम है।

इसी प्रकार यह सद्धम्म जिसके द्वारा भी उपदेशित हो, सम्बुद्ध उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

सम्बुद्ध के धम्म को सुनकर जो दूसरों को उपदेश देते हैं या दूसरों को (ज्ञान से) प्रकाशित करते हैं, वह सब (स्वयं) बुद्ध द्वारा उपदेशित (के समान) ही है।

* बोधिनी में देखें।

एतमत्थं पन जत्वा सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति धज्जकोट्ठितं चतुत्थं ।

२७. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं ॥”

२८. “यं जराव्याधिमरणं, गीतं इत्थीहि गायितं ।

तं निसामेन्ति सप्पज्जा, पप्पोन्ति फलमुत्तमं’ ति ॥”

कथं? तस्स अत्थस्स विभावनत्थं इदं वत्थुं । सीहलदीपे किर एको गामो महाजनसन्निवेशो अहोसि । तस्स गामस्स अविदूरे पदुमुप्पलसञ्छन्नो एको महासरो अत्थि । तदा एका चेटिका तस्मिं येव रक्खमाना विचरति । सा तस्मिं येव सरे पदुमं सम्फुलितं दिस्वा ओतरन्ती पदुमं भज्जित्वा भज्जित्वा एवरूपं च गीतं गायति—

२९. “पस्समिदं पदुमं सुमनुज्जं, पज्जरकेसरवारितकिण्णं ।

याव मिला न पमदति एतं, सोभति ताव पवाति सुगन्धं’ ति ॥”

तस्सा गीतसदं सुत्वा एकपस्से सूपेय्यपण्णहारिका एका तलम्बकसाखमालं ओचिनियमाना गीतं अनुगायन्ती आह—

३०. “एत्थ च पस्स इदम्पि सरीरं, योब्बनमत्तधरं सुमनुज्जं ।

याव जरा न पमदति एतं, सोभति ताव करोति च लीलं’ ति ॥”

तं सुत्वा पदुमिनी “युत्तमेसा वदति हन्दाहं इमेसानं पदुमानं यथा सभावं कथेत्वा पुन पि इमस्स सरीरस्स कथेस्सामी” ति जत्वा, इदमाह—

३१. “भासति सस्सिरिकं रमणीयं, कोमलपत्तविभूसितरूपं ।

याव मिला न पमदति एतं, सोभति ताव पवाति सुगन्धं’ ति ॥”

पणिका आह—

३२. “मज्जति मज्जति रूपमदेन, सा कुसलं न गवेसति लोके ।

याव जरा न पमदति एतं, सोभति ताव करोति च लीलं’ ति ॥”

पदुमिनी आह—

३३. “उड्डितसुरियो विकसितरेणु, पीतिकरं भमरोहि च गीतं ।

याव मिला न पमदति एतं, सोभति ताव पवाति सुगन्धं’ ति ॥”

इस बात को जानकर सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। धज्जकोट्ठित का (यह विवरण) चतुर्थ है।

२७. अपने-अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।
२८. जो प्रज्ञावान् व्यक्ति स्त्रियों द्वारा भाषित जरा, व्याधि एवं मृत्यु विषयक गीत को सुनते हैं, वे उत्तम फल निर्वाण को प्राप्त करते हैं।

कैसे? इस बात की व्याख्या के लिए यह कथा है। सिंहल द्वीप में एक गाँव बहुत लोगों का निवास स्थान था। उस गाँव के पास कमल से भरा हुआ एक विशाल सरोवर था। तब एक सेविका उसकी रक्षा करते हुए विचरण कर रही थी। वह उसी सरोवर में कमल-पुष्पों को अच्छी तरह से खिला देखकर (सरोवर में) उतर कर कमल को तोड़-तोड़ कर इस प्रकार गाना गा रही थी—

२९. सुन्दर आकार वाले, रोयेंदार अति सुन्दर इस कमल को देखो। जब तक इसका फीकापन इसे पराजित नहीं करता, तब तक यह शोभित होता है एवं इससे सुगन्ध बहती है।

उसके गीत के शब्दों को सुनकर एक कढ़ी पत्ता इकट्ठा करने वाली ने तलम्बक वृक्ष की शाखाओं से फूलों को इकट्ठा करते हुए (पहले वाले) गीत के पश्चात् गीत गाया।

३०. यौवन धारण करने वाले इस अति सुन्दर शरीर को यहाँ देखो। जब तक जरावस्था इसे पराजित नहीं करती, तब तक यह शोभित होता है एवं आमोद-प्रमोद करता है।

उसे सुनकर कमल ने 'यह उचित कहती है, अब मैं इन कमल-पुष्पों के वास्तविक स्वभाव को वर्णित कर पुनः इसके शरीर के विषय में भी कहूँगा' ऐसा सोच कर कहा—

३१. यह मनोहर, रमणीय, कोमल पत्तों से विभूषित रूप है। जब तक इसका फीकापन इसे पराजित नहीं करता, तब तक यह शोभित होता है एवं इससे सुगन्ध बहती है।

पत्ती ने कहा—

३२. वह नशे में है, वह रूप-मद के नशे में है। वह संसार में कल्याण को नहीं खोजती है। जब तक जरावस्था इसे पराजित नहीं करती, तब तक यह (रूप) शोभित होता है एवं आमोद-प्रमोद करता है।

कमल ने कहा—

३३. सूर्य उग गया है, पराग खिल गए हैं एवं भौर प्रसन्नतापूर्वक गीत गा रहे हैं। जब तक इसका फीकापन इसे पराजित नहीं करता, तब तक यह शोभित होता है एवं इससे सुगन्ध बहती है।

पण्णिका तस्सा पदुमिनिया पटिवचनं देन्ती एवमाह—

३४. “पाकटफुल्लितकोकनदं, सुरियालोकेन तज्जीयते ।

एवं मनुस्सत्तगता सत्ता, जराभिवेगेन तज्जीयते ॥”

तदा सट्ठिमत्ता भिक्खू तमेव गामं निस्साय एकस्मिं पतिरूपे पदेसे समधिवासं वसिंसु। सब्बे आरद्धविपस्सना सततं समितं रत्तिं दिवेषु युत्तपयुत्ता “अज्ज अज्जेव अरहत्तं पापुणिस्सामि सच्छिकरिस्सामी” ति, गच्छन्ता पि निसिन्ना पि सब्बइरियापथे कम्मट्ठानमेव मनसिकत्वा विहरन्ति। अथ ते भिक्खू तस्मिं दिवसे पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय गामं पिण्डाय मगं गच्छन्ता तासं गीतसदं सुत्वा सब्बे पि भिक्खू आमन्तेत्वा अवोच—“सच्चमेतं, आवुसो, यं इमाय कथितं सब्बसत्तानं हि रूपं मुहुतं रमणीयं फुल्लितपदुमसदिसं” ति। तत्थ ठितको व ते पभोदेन्तो आह—

३५. “एवं पणीतं अत्तनो मूले, कालवण्णं भविस्सति ।

तथेवापि इदं रूपं, पठमं ताव सोभति ।

तम्मि होति जरं पत्त्वा, मिलत्तं पदुमं यथा’ति ॥”

वत्त्वा एवमाह—“आवुसो, सब्बे संखारा खयवया असस्सतभावा, अलमेव सब्बसंखारेसु निब्बिन्दितुं, अलं विरज्जितुं, अलं विमुच्चितुं” ति। ते सब्बे सम्वेगं पटिलभित्वा भावितकम्मट्ठानं पट्टपेत्वा विपस्सनं वड्ढेत्वा तत्थेव सह पटिसम्भिदाहि अरहत्तं पापुणिंसु। थेरो ते भिक्खू अत्तना सद्धिं अरहत्तं पत्तं जत्वा एवमाह—

३६. “सङ्घुतधम्ममनिच्चमनत्तं, जातिजराचुतिरोगनिकेतं ।

खन्धमिदं बहुदुक्खसभावं, तं पहाय सिवं उपगच्छतू’ ति ॥”

वत्त्वा तेहि सद्धिं अगमासि। एवं तथागतसद्धम्मं नाम येन केनचि कथितं अन्तमसो चेटिकाय गीतपरियापन्नं कत्वा धम्मं सुत्वा सप्पुरिसा मोक्खसुखावहा होन्ति। तेन सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति पण्णिकागीतं पञ्चमं।

३७. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं’ ति ॥”

पत्ती ने उस कमल का जबाब देते हुए ऐसा कहा—

३४. प्रकट एवं प्रफुल्लित लाल कमल सूर्य के प्रकाश से भयभीत होता है, उसी प्रकार मनुष्य के रूप में उत्पन्न प्राणी जरा की गति से भयभीत होता है।

उस समय मात्र साठ भिक्षु उसी गाँव के समीप एक उचित स्थान पर सम्यक् प्रकार से धैर्यपूर्वक निवास कर रहे थे। वे सभी विपश्यना में लिप्त, सदैव शान्त रहने वाले, रात—दिन सम्यक् कार्य करने वाले 'आज के आज ही अर्हत्व को प्राप्त करूँगा, उसका साक्षात्कार करूँगा' (ऐसा संकल्प कर) चलते हुए भी, बैठे हुए भी, सभी शारीरिक कार्य संपादित करते हुए कर्म—स्थानों का ही मनन करते हुए विहार करते थे। उन भिक्षुओं के उस दिन पूर्वाह्न काल में वस्त्र पहन कर, पात्र तथा चीवर लेकर गाँव में भिक्षाटन हेतु मार्ग पर जाते समय उनके (कमल एवं पत्ती के) गीत के शब्द सुनकर (एक) थेर ने सभी भिक्षुओं को सम्बोधित कर ऐसा कहा—'आवुसों! इनके द्वारा जो कहा गया, वह सत्य है, सभी प्राणियों का रूप कमल के समान क्षण भर के लिए ही रमणीय एवं प्रफुल्लित है।' वहीं खड़े हो (थेर ने) उनको प्रकाशित करते हुए कहा—

३५. जिस प्रकार तना हुआ (कमल) अपने जड़ में मुरझाहट को प्राप्त हो जायेगा। उसी प्रकार यह रूप पहले तो शोभित होता है, किन्तु जरावस्था को प्राप्त कर वह वैसा ही हो जाता है जैसा म्लान हुआ कमल।

यह कह कर ऐसा कहा—'आवुसों! सभी संस्कार क्षयवान एवं अशाश्वत स्वभाव के हैं। सभी संस्कारों में निर्वेद भाव रखना ही उचित है, वैराग्य रखना ही उचित है, विमुक्त होना ही उचित है। उन सभी भिक्षुओं ने संवेग प्राप्त कर, अभ्यस्त कर्म—स्थान को निश्चित कर, विपश्यना की वृद्धि करके उसी समय प्रतिसंविदाओं के साथ अर्हत्व को प्राप्त कर लिया। थेर ने उन भिक्षुओं को अपने साथ अर्हत्व प्राप्त जानकर ऐसा कहा—

३६. संस्कृत वस्तुएँ अनित्य, अनात्म; जाति, जरा, च्युति एवं रोग का घर हैं। ये (पञ्च) स्कन्ध बहुत दुःखोत्पादक स्वभाव के हैं, उन्हें छोड़ कल्याण की तरफ आओ।

ऐसा कह (थेर) उनके साथ चले गए। इस प्रकार तथागत के सद्धम्म के रूप में जिस किसी द्वारा भी जो कुछ कहा गया, को सुनकर तथा कम से कम सेविका द्वारा (गाए गए) गीत में समाहित धम्म को सुनकर सत्पुरुष (लोग) मोक्ष एवं सुख को प्राप्त करने वाले होते हैं। इसलिए सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। यह पत्तियों के गीत का विवरण पञ्चम है।

३७. अपने—अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

का कथा मनुस्सभूता अत्थानत्थं वा कुसलाकुसलं वा धम्माधम्मं वा जानन्ता ये पि सत्ता तिरच्छानभूता मण्डूक-उलूक-वग्गुलि-मिग-मच्छ-अजगर- सिलुत्त-सप्पादयो तिरच्छानगता किञ्चित्तम्पि अजानन्ता केवलं परेहि धम्मसज्झायित-धम्मसवननिग्घोसमतं येव सुत्वा तेन निग्घोसेन तुट्ठा सरे पि सह निमित्तग्गहणेन कालं कत्वा अन्तरस्मिं येव भवे अत्तनो परमत्थसुखावहा अहेसुं, तत्थ आदितो व मण्डूकवत्थु कथेतब्बं। मण्डूकवत्थुमिह अयं आनुपुब्बिकथा-

एकस्मिं किर समये भगवा चम्पकानगरे विहरति गग्गराय पोक्खरणिा तीरे। अथ खो भगवा सायणहसमयं चम्पकानगरवासीनं धम्मं देसेसि। तदा एको मण्डूको तत्थ गन्त्वा भगवतो सरे निमित्तं अग्गहेसि। तं वच्छपालको दण्डं ओलुब्भ तिट्ठन्तो तस्स सीसे सन्निरुम्भित्वा अट्ठासि। सो तावदेव कालं कत्वा तावतिंसभवने द्वादसयोजनिके कनकविमाने निब्बत्ति सुत्तप्पबुद्धो विय अच्छरासंघपरिवुतो। तं अत्तभावं दिस्वान अपरे-“अहं नाम इध निब्बत्तो किन्नु खो कम्मं अकासिं” ति-आवज्जेन्तो न अज्जं किञ्चि अद्दस, अज्जत्र भगवतो सरे निमित्तग्गाहं। सो तावदेव सहविमानेन आगन्त्वा भगवतो पादे वन्दि। भगवा जानन्तो व पुच्छित्वा तायं वेलायं इमं गाथं अभासि-

३८. “को मे वन्दति पादानि, इद्धिया यससा जलं ।

अभिवक्त्तेन वण्णेन, सब्बा ओभासयं दिसाति ॥”

सो देवपुत्तो भगवन्तं गाथा अज्झभासि-

३९. “मण्डूकोहं पुरे आसिं, उदके वारिगोचरो ।

तव धम्मं सुणन्तस्स, अवधी वच्छपालको ॥”

भगवा तस्स धम्मं देसेसि। देसनापरियोसाने चतुरासीतिया पाणसहस्सानं धम्माभिसमयो अहोसि। देवपुत्तो पि सोतापत्तिफले पतिट्ठाय भगवन्तं पदक्खिणं कत्वा देवलोकमेव पक्कामि। एतमत्थं पन जत्वा अत्थकामिना पण्डितेन सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति मण्डूकस्स वत्थु छट्ठमं।

४०. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं ॥”

वग्गुलीनं वत्थुमिह अयं आनुपुब्बिकथा-

एकस्मिं किर समये भगवा देवलोके अभिधम्मं देसियामानो यदा मनुस्सलोके उत्तरित्वा एकं निमित्तबुद्धं सम्मासम्बुद्धसदिसं देवनिकायानं धम्मदेसनाय अभिनिम्मित्वा सगलोकतो ओतरित्वा ओतरणकाले अनोत्तदहे पानियं परिभुजित्वा सीरपटिजगनं अकासि।

अर्थ—अनर्थ, कुशल—अकुशल तथा धम्म—अधम्म को जानने वाले मनुष्य—रूप में उत्पन्न के विषय में क्या कहना? मेढक, उल्लू, चमगादड़, मृग, मछली, अजगर, छछून्दर एवं सर्प आदि कुछ भी न जानने वाले, पशु रूप में जन्म लेने वाले प्राणी भी मात्र दूसरों के द्वारा किए गए धम्म—पाठ, धम्म—श्रवण कराने हेतु किए गए निर्घोष मात्र को सुनकर उनके निर्घोष से संतुष्ट हो, स्मृति में (उस धम्म—निर्घोष के) शब्दों को निमित्त के रूप में ग्रहण कर मृत्यु के पश्चात् अगले जन्म में स्वयं के लिए परम सुख प्राप्त करने वाले होते हैं, यहाँ प्रथमतः मेढक की कथा कही जानी चाहिए। मेढक के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—

एक समय भगवान् चम्पक नगर में गगरा पुष्करणी के किनारे विहार कर रहे थे। भगवान् ने सायंकाल में चम्पक नगर के वासियों को धम्म का उपदेश दिया। तब एक मेढक ने वहाँ जाकर भगवान् की आवाज को निमित्त के रूप में ग्रहण किया। वहीं डंडे का सहारा लेकर खड़े एक ग्वाले ने उसका (मेढक का) सिर दबा दिया। वह वहीं मर कर तावतिंस भवन में बारह योजन वाले कनक विमान में नींद से जगे हुए के समान, अप्सरा समूह से घिरा हुआ उत्पन्न हुआ। उसने अपनी स्थिति पर क्रमशः— 'मैं यहाँ उत्पन्न हुआ हूँ, मैंने कौन सा कर्म किया है?' विचार करते हुए भगवान् के शब्दों को निमित्त के रूप में ग्रहण करने के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं देखा। उसी समय विमान* सहित आकर उसने भगवान् के पैरों में वन्दना की। भगवान् ने जानने के बावजूद भी पूछते हुए उस अवसर पर इस गाथा को कहा—

३८. ऋद्धि एवं यश से प्रकाशमान्, अतिसुन्दर सौन्दर्य से सभी दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ कौन मेरे पैरों की वन्दना कर रहा है?

उस देवपुत्र ने भगवान् को गाथा में उत्तर दिया—

३९. पहले मैं पानी में रहने वाला मेढक था। आपके धम्म को सुन रहा था, तभी ग्वाले ने मुझे मार डाला।

भगवान् ने उसे धम्म का उपदेश दिया। उपदेश की समाप्ति पर चौरासी हजार प्राणियों को धम्म का साक्षात्कार हुआ। देवपुत्र भी सोतापत्ति फल में प्रतिष्ठित होकर, भगवान् की प्रदक्षिणा कर देवलोक लौट गया। इस बात को जानकर कल्याण के इच्छुक ज्ञानी व्यक्ति द्वारा सत्कारपूर्वक धम्म को सुनना चाहिए। यह मेढक का विवरण छठवाँ है।

४०. अपने—अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए आए हैं।

इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

चमगादड़ के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—एक समय भगवान् ने देवलोक में अभिधम्म का उपदेश देने के समय, मनुष्यलोक से पार जाकर देवों की सभाओं को धम्म का उपदेश करने के लिए सम्यक् सम्बुद्ध के सदृश एक निर्मित बुद्ध का निर्माण कर, स्वर्गलोक से उतरकर अवतरण के समय अनोतत झील में पानी पी कर शरीर का पोषण किया।

* बोधिनी में देखें।

तस्मिं काले आयस्मतो सारिपुत्तस्स भगवतो उपट्ठानं करोन्तस्स यं यं धम्मक्खन्धं देवलोके देसितं तं तमेव सिक्खापेसि। सो पि सारिपुत्तो बुद्धपमुखतो सकलं अभिधम्मपिटकं उद्दिट्ठं उग्गण्हित्वा अज्जतरस्मिं गुहद्वारे पटिसज्झायं अकासि। तस्मिं वसन्ता पञ्चसतप्पमाणा वग्गुलियो सरे सदमत्तमेव गहेत्वा धम्मारम्मणे ठत्वा नापि धम्मत्थं जानन्ता एवं चिन्तेत्वा—“अयं सद्दो नेव अम्हाकं पीलेति नापि अम्हे बुज्झति। तस्मा ये सद्दा वा वत्थुकामा पाणं हत्त्वा अज्जत्रसविप्पयोगं सब्बे ते फरुसा अतिकण्हा नेव मनोरमा। अयं पि बुद्धो मनोहरो सवनीयो पेमनीयो” ति चिन्तेत्वा धम्मारम्मणमेव कत्वा न भक्खं गवेसन्ता तत्थेव कालं अकंसु। सचे ते वग्गुलियो धम्मसवनतेजेन देवलोके एकेकस्स पञ्चसतसहस्सपरिवारद्वादसयोजनिके कनकविमाने देवच्छराहि नानानच्चगीतवादितसंघुट्ठे निब्बत्तिसु। निब्बत्तक्खणे देविन्दो देवगणेहि सद्धिं सम्मानकरणत्थाय दिब्बधूपगन्धमालादीहि पूजेत्वा एवमाह—

४१. “अहो सुखं देवलोके, तादिसा नो सहायका ।

अपि च चिर पतिट्ठा, उप्पज्जन्ता च मानुसे ॥”

४२. “सावका ते च बुद्धस्स, विरजस्स भविस्सरे ।

सारिपुत्तस्स धम्मं च, सुत्वा गच्छन्ति निब्बुत्तिं” ति ॥”

एवं वत्त्वा पुन निपति। सब्बे वग्गुलिदेवपुत्ता चिरं देवलोके सुखं अनुभवित्वा ततो चवित्वा ब्राह्मणगहपतिकुले उप्पज्जित्वा अज्जमज्जसहायका हुत्वा ते बुद्धिमन्तो व सारिपुत्तत्थेरस्स धम्मं सुत्वा पब्बजित्वा अभिधम्मपिटकं उग्गण्हित्वा साट्ठकथं वाचुग्गतं कत्वा न चिरस्सेव सब्बे ते विपस्सनं वट्ठेत्वा संसारदुक्खतो मुत्ता खीणासवपत्ता। अज्जत्र सारिपुत्तेन ये ये बुद्धसावका पठमं अभिधम्मपिटकं साट्ठकथं वाचुग्गतं कत्वा सब्बे ते अज्जमज्जसहायका वग्गुलिदेवपुत्ता विय इमस्मिं लोके पाकटा अहेसुं। एवं सरभज्जनमत्तमेव सुत्वा धम्मप्पसादाय बहुलताय देवलोके च याव निब्बानगमना सुखं अनुभविंसु। तेनाहु पोराणा—

४३. “का कथा सकलत्थं च, उग्गण्हित्वा सज्झायति ।

तस्स नामप्पकरणं, वत्ता सद्धाय पूजिय ॥”

४४. “तेनेव कतकम्मेन, भवन्तरमनागते ।

साविज्जत्थ कतस्सेव, वाचुग्गतं च तन्तिया ॥”

उस समय भगवान् का सेवक आयुष्मान् सारिपुत्त था; (भगवान् ने) जिस-जिस धम्म-स्कन्ध को देवलोक में उपदेशित किया था, वह सब उसे (सारिपुत्त को) सिखाया। सारिपुत्त ने भी बुद्ध के सम्मुख सिखाए गए सम्पूर्ण अभिधम्मपिटक को ग्रहण कर किसी गुफा के द्वार पर (उसका) पाठ किया। उसमें (गुफा में) निवास करने वाले पाँच सौ चमगादड़ों ने आवाज की ध्वनि मात्र को ग्रहण कर, धम्म-आलम्बन में स्थित होकर, धम्म के अर्थ को भी न जानते हुए—‘यह शब्द न ही हमें पीड़ा देता है, न हमें समझ में आता है। इसलिए जो शब्द वस्तुओं की कामना से, प्राणियों को मारकर विप्रयोग से युक्त होते हैं, वे सभी कठोर एवं अशुभ है तथा मनोरम नहीं है। यह बुद्ध मनोहर, सुनने योग्य एवं प्रेम के योग्य हैं।’ ऐसा सोचकर धम्म को मनन का विषय बनाकर भोजन की खोज न करते हुए (वे) वहीं मृत्यु को प्राप्त हो गए। वे चमगादड़ धम्म-श्रवण के प्रताप से देवलोक में, जिसमें प्रत्येक (चमगादड़) का पाँच सौ हजार (देवों) के परिवार तथा देव-अप्सराओं के विभिन्न प्रकार के नृत्य, गीत एवं वादन से गुंजायमान बारह योजन का कनक विमान था, में उत्पन्न हुए। जन्म के समय सम्मान करने के उद्देश्य से दिव्य धूप, गन्ध एवं मालाओं आदि से उनकी पूजा करके, देवसमूह के साथ आए, देवराज इन्द्र ने ऐसा कहा—

४१. अहा! देवलोक में आप लोगों के समान साथियों का होना सुखद है एवं मनुष्यों के बीच उत्पन्न होने के कारण आप लोग चिर प्रतिष्ठित हैं।

४२. आप रजरहित बुद्ध के शिष्य हैं तथा सारिपुत्त के द्वारा उपदेशित धम्म को सुनकर निवृत्त हो जाएँ।

ऐसा कहकर वह पुनः (आदर में) झुका। सभी चमगादड़ देवपुत्रों ने लम्बे समय तक देवलोक में सुख का अनुभव कर, वहाँ से च्युत हो ब्राह्मण गृहस्थ के कुल में उत्पन्न होकर, एक दूसरे के साथी होकर, बुद्धिमान सारिपुत्त थेर द्वारा उपदेशित धम्म को सुनकर, प्रव्रजित हो अभिधम्म पिटक को अट्ठकथा सहित कंठस्थ कर, विपश्यना को विकसित कर, शीघ्र ही आस्रवों के क्षय को प्राप्त कर संसार के दुःखों से मुक्ति प्राप्त की। सारिपुत्त के अतिरिक्त अन्यत्र जिन-जिन भी बुद्धश्रावकों ने पहले अभिधम्मपिटक को अट्ठकथा सहित कंठस्थ किया था; वे भी, एक दूसरे के साथी चमगादड़ देव-पुत्रों के समान, इस संसार में प्रकट हुए। इस प्रकार धम्म में अत्यन्त प्रसाद का भाव रखकर (बुद्धवचनों के) पाठ को सुनने मात्र से उन्होंने निर्वाण प्राप्त करने तक देवलोक में सुख का अनुभव किया। इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

४३-४४. सम्पूर्ण (बुद्धवचनों) को ग्रहण कर पाठ करने वाले का क्या कहना? श्रद्धापूर्वक सम्मान के साथ उसके नाम-प्रकरण को कहने मात्र के कर्म से ही व्यक्ति भविष्य के जन्म में ज्ञान का अर्थ करने वाला तथा ग्रन्थ को कंठस्थ करने वाला होता है।

तेन वुत्तं भगवता—

४५. “तिड्ढं तत्थमभिज्जाय, अक्खरानि पदानि च ।
नाममत्थमभिज्जाय, बोधिबीजमुपागमि ॥”
४६. “अभिधम्मं पवत्तानं, भिक्खूनं सरभज्जने ।
वग्गुलियो पि नन्दित्वा, मोदयन्ति तिदिवं गता ॥”
४७. “अभिधम्मं पि वाचित्वा, पूजेत्वा अभिवन्दति ।
लोकपत्तो सिवं सुखं, पच्छा निब्बानमेसति ॥”
४८. “ये चाभिसरणोपेता, सक्क्यसीहस्स सासने ।
पतिट्ठिता इदिसा पि, सुत्वा धम्मं महेसिनो ॥”
४९. “धम्मारम्मणं कत्वा, सद्धा चित्तेन मोदिता ।
धम्मस्सवनानिसंसे, अनुभोन्ति असंसियाति ॥”

एतमत्थं पन जत्वा अत्थकामिना पण्डितेन सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति वग्गुलिवत्थुं सत्तमं ।

मिगपोतकस्स वत्थुमिह अयं आनुपुब्बिकथा—

सीहलदीपे किर उदलोलकविहारं नाम रमणीयं एकं विहारं अहोसि । तदा विहारोपवने बहु मिगसूकरादयो वसन्ति । अथ एकस्मिं गामे नेसादपुत्तो तस्मिं बहू मिगसूकरे दिस्वा एकदिवसं एकस्मिं पस्से कोट्टकं कत्वा वनपरियन्ते पण्णं बन्धित्वा धनुकलापं पग्गद्ध मिगागमनं ओलोकेन्तो कोट्टे अट्ठासि । अथेको मिगो तत्थ तत्थ गोचरं गण्हित्वा पानियं पातुं तित्थं गच्छन्तो तस्मिं अस्समपदेसे धम्मसवनत्थाय घुट्टसदं सुत्वा पसारितगीवो उत्तुंगकण्णो अनोक्खित्तअक्खि अनुक्खित्तपादो धम्मकथिकस्स सरे निमित्तं गण्हित्वा अट्ठासि । तस्मिं खणे नेसादो तं एकप्पहारेनेव विज्झित्वा जीवितक्खयं पापेसि ।

अथ सो कालं कत्वा तत्थेव विहारवासिमहाअभयत्थेरस्स कनिट्ठिकाय कुच्छिमिह पटिसन्धिं गण्हित्वा दसमासच्चयेन मातुकुच्छितो निक्खमित्वा कमेन अभिवट्ठेन्तो सत्तवस्सिको अहोसि । ततो तं मातापितरो अभयत्थेरस्स सन्तिकं नेसुं । सो तं न चिरेन कालेन पब्बाजेसि । सो पन कुमारो पुब्बे मिगभूतेन अत्तना धम्मसवनानुभावेन खुरगो येव अरहत्तं पापुणि । तस्स पन मातुलथेरो पटिलद्धपज्वाभिज्जो अप्पत्तअरहन्तमगो होति ।

इसलिये भगवान् द्वारा कहा गया है—

४५. अक्षरों एवं पदों को जानने वाले की बात छोड़ो, मैंने नाम एवं अर्थ के ज्ञान से बोधि—बीज को प्राप्त किया।
४६. भिक्षुओं द्वारा अभिधम्म के वर्णन का गायन सुनकर आनन्दित एवं मुदित होने के कारण चमगादड़ देवलोक गए।
४७. अभिधम्म का वाचन एवं सम्मान कर जो उसकी वन्दना करता है, वह कल्याणकारक एवं सुखद लोक को प्राप्त करने के पश्चात् निर्वाण का गवेषक होता है।
४८. जिन्होंने शाक्य सिंह के शासन में शरण लिया है, वे महर्षि के धम्म को सुनकर इसी प्रकार प्रतिष्ठित होते हैं।
४९. मुदित एवं श्रद्धायुक्त चित्त से धम्म को आलम्बन बनाकर वे, निश्चित ही, धम्म—श्रवण के माहात्म्य का अनुभव करते हैं।

इस बात को जानकर कल्याण के इच्छुक ज्ञानी व्यक्ति द्वारा सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। चमगादड़ का यह विवरण सातवाँ है।

तरूण मृग के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—सिंहल द्वीप में उद्दलोलक विहार नामक एक रमणीय विहार था। उस समय विहार के उपवन में बहुत से मृग, सूअर आदि निवास करते थे। एक गांव में एक शिकारी—पुत्र वहाँ बहुत सारे मृगों एवं सुअरों को देखकर एक दिन एक किनारे कोठरी बनाकर (वहाँ से) वन तक पत्तियों को बांध धनुष एवं तरकश ले मृग के आगमन की उम्मीद में कोठरी में खड़ा रहा। इसके बाद एक मृग यहाँ—वहाँ भोजन ग्रहण कर जल पीने के लिए घाट की तरफ जाते हुए, वहाँ एक आश्रम में धम्म—श्रवण कराने के लिए घोषित शब्द सुनकर, गर्दन तानकर, कान खड़े कर, आंखें खोलकर एवं पैर उचका कर धम्म कहने वाले के आवाज को निमित्त के रूप में ग्रहण कर खड़ा रहा। उसी क्षण शिकारी ने एक प्रहार से ही वेधन कर उसके प्राणों को हर लिया।

वह मर कर वहीं विहार में रहने वाले अभय थेर की छोटी बहन के गर्भ में जन्म ग्रहण कर दस मास बीतने पर माता के गर्भ से निकलकर क्रमशः बढ़ता हुआ सात वर्ष का हो गया। इसके बाद उसके माता—पिता उसे अभय थेर के पास ले गए। उसने (अभय थेर) उसे शीघ्र ही प्रव्रजित किया। उस कुमार ने पूर्व में मृग के रूप में स्वयं के द्वारा धम्म—श्रवण के प्रताप से मुण्डन—कक्ष में ही अर्हत्व प्राप्त कर लिया। उसके थेर मामा ने तब तक पाँच अभिज्ञाओं को प्राप्त कर लिया था, किन्तु अर्हत्व प्राप्ति से वंचित था।

अथेकस्मिं दिवसे सामणेरो पन एसो उपज्झायस्स सन्तिकं अगमासि। अथस्स उपज्झायो हत्यं वड्डेत्वा पाणिना चन्दमण्डलं परिमदन्तो अट्ठासि। सामणेरो तं दिस्वा—“भन्ते, एतं रक्खितुं वट्टती” ति आह। थेरो पन तं अगगफले अरहत्ते पतिट्ठितभावं अजानन्तो तस्स वचनं न सम्मा मनसाकासि। अथ सामणेरो इद्धिया चन्दसहस्सं आहरित्वा थेरस्स दस्सयित्वा—“भन्ते, चन्द सतं वा चन्दसहस्सं वा चन्दसतसहस्सं वा आहरणं न भारियं। यो पन एकमेव तण्हं पजहति सो येव उत्तमो तं येव भारियं” ति वत्त्वा एवमाह—

५०. “यो गत्त्वा पुरिसो दिस्वा, तीरट्ठो व महम्बुधिं ।

समुद्दोयं मया दिट्ठो, भासतेव अपञ्चवा ॥”

५१. “एवमेविध यो भिक्खु, किलेसे केचि अत्तनि ।

विखम्भेत्वा अभिज्ज्ञानं, बलं लद्धान अद्भुवं ॥”

५२. “अप्पहन्त्वा किलेसानं, लद्धत्थोस्मी ति मज्जति ।

तण्हा दासव्यतो सो हि, अमुत्तो येव वत्तति ॥”

५३. “अलक्खिं असिवं भीमं, अनपायं अनत्थदं ।

यो तण्हं पजहे भिक्खु, सो मुत्तो मारबन्धना ॥”

तं सुत्वा थेरो पसीदित्वा तदहे येव अरहत्तं पापुणि। अथ दुतियदिवसे थेरकनिट्टिका सामणेरेन सद्धिं थेरं निमन्तेसि। थेरो भगिनिं एवं आह—“उपासिके, तयज्ज बहु भिक्खू दिस्वा चित्तं पसादेतब्बं पटिविंसो पन उभिन्नं येव होतू” ति। तं पेसेत्वा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय तिससहस्समत्तेहि भिक्खूहि सद्धिं अगमासि। सा तं दिस्वा द्वे मातुलानं आसनानि पज्जापेसि। तानि तेसं आनुभावेन तिससहस्समत्तानि अहेसुं। तेसं येवानुभावेन तस्सा गेहम्पि वड्ढि। भिक्खू पत्तपत्तासने निसीदिंसु। ताय द्विन्नं येव पटियादितं सूपव्यज्जनादि सब्बं तिससहस्समत्तानं भिक्खूनं यावदत्थं पहोनकं अहोसि। भुत्तावसाने खो उपासिका भत्तानुमोदनत्थं सामणेरस्स पत्तं गण्हि। सो पि तेसं मज्झे मङ्गलं वड्डेन्तो मधुरभारतिं निच्छारेन्तो धम्मं देसेसि। देसनावसाने मातापितादिं कत्वा पञ्चकुलसत्तानि सोतापत्तिफले पतिट्ठहिंसु। बहूनो जनस्स सा देसना सात्थिका अहोसि।

इसके बाद, एक दिन सामणेरे (कुमार) अपने उपाध्याय के पास गया। उस समय उसका उपाध्याय हाथ बढ़ाकर हथेली में चन्द्रमा का मर्दन किए हुए खड़ा था। सामणेरे ने उसे देखकर—‘भन्ते! इसकी रक्षा करना उचित है’ ऐसा कहा। थेरे ने उसके अंतिम फल, अर्हत्व में प्रतिष्ठित होने के तथ्य को न जानते हुए उसके वचनों पर सम्यक् प्रकार से ध्यान नहीं दिया। तब सामणेरे ने ऋद्धि से एक हजार चन्द्रमा को उपस्थित कर थेरे को दिखा कर—‘भन्ते! सौ चन्द्रमा या हजार चन्द्रमा या सौ हजार चन्द्रमा को लाना कठिन नहीं है। किन्तु जो एक भी तृष्णा का त्याग कर देता है तो वही उत्तम है, वही कठिन है’ कहते हुए ऐसा कहा—

५०. कोई पुरुष घाट पर जाकर खड़ा हो, महान् जल समूह को देख विवेकहीन हो कहता है—‘मैंने समुद्र देख लिया है’।

५१-५२. उसी प्रकार कोई भिक्षु अपने कुछ क्लेशों को रोककर, अभिज्ञाओं की अनित्य शक्ति को प्राप्त कर, क्लेशों को बिना पूर्ण रूप से नष्ट किए मानता है कि मैंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया। (वास्तव में) तृष्णा का दास होने के कारण वह अमुक्त ही रहता है।

५३. जो भिक्षु दुर्भाग्यपूर्ण, अशुभ, भयानक, अनादि, अनर्थ से युक्त तृष्णाओं का त्याग कर देता है, वह मार’ के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

यह सुनकर थेरे ने प्रसन्न होकर उसी दिन अर्हत्व को प्राप्त कर लिया। अगले दिन थेरे की छोटी बहन ने थेरे को सामणेरे के साथ आमंत्रित किया। थेरे ने बहन को ऐसा कहा—‘उपासिका! तुम्हें आज बहुत सारे भिक्षुओं को देखकर चित्त को प्रसन्न करना चाहिए, किन्तु हिस्सा (भोजन) दो के लिए ही तैयार हो।’ उसे (बहन को) भेजकर पूर्वाह्न काल में वस्त्र पहनकर पात्र और चीवर ले (थेरे) तीस हजार भिक्षुओं के साथ (उपासिका के घर) गया। उन्हें देखकर उसने दोनों मामा—भान्जे के लिए आसन बिछाए। वे उनके प्रताप से तीस हजार हो गए। उनके प्रताप से ही उसका घर भी विस्तृत हो गया। भिक्षु अपने—अपने लिए बिछे आसन पर बैठ गए। उन दोनों के लिए तैयार सूप, व्यंजन आदि सभी कुछ तीस हजार भिक्षुओं के लिए इच्छानुसार (बढ़कर) पर्याप्त हो गए। भोजन की समाप्ति पर उपासिका ने भोजन के अनुमोदन के लिए सामणेरे का पात्र ले लिया। उसे (सामणेरे) ने भी उनके बीच कल्याण का वर्द्धन करते हुए मधुर वाणी बोलते हुए धम्म का उपदेश दिया। उपदेश के समाप्त होने पर माता—पिता से प्रारम्भ करते हुए पाँच सौ परिवार सोतापत्ति फल में प्रतिष्ठित हो गए। वह उपदेश बहुत लोगों के लिए सार्थक हुआ।

५४. “देसेन्तेव विपिनजमिगा, सद्धमत्ते निमित्तं ।
 लद्धा धम्मं मनुजविभवं, चापवग्गं लभन्ति ॥
 सद्धाबुद्धे विहितमतिमा, साधु सुत्वान धम्मं ।
 किन्नो सग्गे रमति मुनिना, वण्णनीये विमानेति ॥”
 मिगपोतकस्स वत्थुं अट्ठमं।

५५. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतु इधागता ।
 तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं ॥”

मच्छस्स वत्थुमिह अयमानुपुब्बिकथा—

एकस्मिं समये बहु वानिजजना लङ्कादीपं गन्तुकामा एकं समुद्रगामिनिनावं गणित्वा नानप्यकारानि भण्डानि सज्जेत्वा अज्जानि च तिलतण्डुलादीनि पाथेय्यानि नावं पूरेत्वा भद्रनक्खत्तेन पायिसु। तदा एको भिक्खु पारतीरं तेहि सद्धिं गन्तुकामो हुत्वा वानिजानं सन्तिके अत्तनो ओकासं याचित्वा तेहि दिन्नं एकोकासं पविसित्वा निसीदि।

अथ सा नावा समवातेन सुखं गच्छति। सो भिक्खु अत्तनो निसिन्नकाले येव पगुणसज्जायं करोन्तो—“कुसला धम्मा, अकुसला धम्मा, अव्याकता धम्मा, सुखाय वेदनाय सम्पयुत्ता धम्मा, दुक्खाय वेदनाय सम्पयुत्ता धम्मा, अदुक्खमसुखाय वेदनाय सम्पयुत्ता धम्मा” ति चित्तुप्पादकण्डे पवत्तेति। तत्थ नावाय एकपस्सेन गच्छन्तो एको महामच्छो तस्स भिक्खुनो सज्जायन्तस्स सरे निग्घोसमत्तमेव तं सुत्वा तेन घोसेन तुडो अज्जत्यगमनचित्तं अकत्वा तत्थकमेव चित्तं कत्वा उभो कण्णे पन निच्चालेत्वा नावाय पच्छतो अविजहित्वा व गच्छति। सो याव तित्थं नावं अनुगच्छन्तो सद्धसवनेन आकड्डितचित्तो अहोसि। अथ सो तित्थतीरद्वेहि विज्झितो मनुस्सेहि तत्थेव कालमकासि।

सीहलदीपे रोहिणि नाम एको जनपदो अहोसि। तत्थ एकस्मिं समिद्धकुले निब्बत्तित्वा महन्तेन इस्सरियेन परिवारेण वड्डति। ते पन जातका कुमारस्स जातकाले सुमनपमुदिता होन्ति, सुमनतस्स नामं करिसु। तस्मिं पन गेहे मातापितूहि उपट्ठमाना निबद्धं भिक्खू भुञ्जन्ति। कुमारो अभिण्हदस्सनेन तेसं आचारविहारेसु पसीदित्वा वयप्पत्तकाले येव एवरूपं सम्पत्तिं पहाय, पब्बजितुकामो हुत्वा मातापितूहि नानप्यकारेहि याचियमानो पि तेसं वचनं अनादियित्वा रोदन्तानं परिदेवन्तानं येव रट्टपालपुत्तादयो विय अत्तानं पब्बज्जाय अनुजानापेत्वा, पब्बजितकालतो पट्ठाय सामणेर भूमियं ठितो सकलं सुत्तन्तपिटकं सकलं अभिधम्मपिटकं पगुणं कत्वा, उपसम्पन्नकाले सकलं विनयपिटकं परियापुणित्वा तेपिटको जातो।

५४. उपदेश दिए जाने के समय जंगल में रहने वाले मृग ने धम्म के शब्द मात्र को ही निमित्त के रूप में ग्रहण कर, मनुष्य का जन्म ग्रहण कर अंतिम लक्ष्य (निर्वाण) को प्राप्त किया। बुद्ध के प्रति श्रद्धा में प्रतिष्ठित बुद्धिमान व्यक्ति धम्म को अच्छी तरह से सुनकर स्वर्ग में मुनियों द्वारा वर्णित विमान में रमण करता है।

तरुण मृग का यह विवरण आठवाँ है।

५५. अपने-अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

मछली के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—एक समय बहुत से व्यापारियों ने लंका द्वीप को जाने की इच्छा से समुद्र में जाने वाली एक नौका को लेकर, उसे विभिन्न प्रकार की वस्तुओं से तैयार कर, अन्य भी तिल, चावल आदि रास्ते के भोजन से नाव को भरकर भद्रा नक्षत्र में प्रस्थान किया। तब एक भिक्षु पार जाने के लिए, उनके साथ जाने की इच्छा वाला होकर व्यापारियों के पास अपने लिए स्थान का निवेदन कर, उनके द्वारा दिए गए एक स्थान पर प्रविष्ट हो बैठ गया।

इसके बाद वह नाव वायु के शान्त होने के कारण सुखपूर्वक जाती है। वह भिक्षु बैठने के साथ ही उत्तम पाठ करता हुआ—‘कुशल धम्म, अकुशल धम्म, अव्याकृत धम्म, सुख वेदना से सम्प्रयुक्त धम्म, दुःख वेदना से सम्प्रयुक्त धम्म, अदुःख—असुख वेदना से सम्प्रयुक्त धम्म’ इस प्रकार चितुप्पादकण्ड का प्रवर्तन कर रहा था। वहीं नाव के एक तरफ जाते हुए एक बड़ी मछली उस भिक्षु के पाठ के शब्दों के निषेध मात्र को ही सुन, उस घोष से प्रसन्न हो चित्त को अन्यत्र जाने से रोकते हुए वहीं चित्त को लगाकर, दोनों कानों को स्थिर कर नाव के पीछे उसे बिना त्यागे चलती गई। किनारे तक नाव के पीछे—पीछे जाते हुए शब्द—श्रवण के प्रति उसका चित्त आकर्षित हुआ। इसके बाद किनारे खड़े मनुष्यों द्वारा प्रहारित होकर वह मृत्यु को प्राप्त हो गई।

सिंहल द्वीप में रोहिणी नामक एक जनपद था। वहाँ एक समृद्ध कुल में उत्पन्न हो महान ऐश्वर्य से घिरी हुई वह बड़ी हुई। चूंकि कुमार के उत्पन्न होने के समय उसके रिश्तेदार प्रफुल्लित एवं प्रमुदित हुए, इसलिये (उन्होंने) उसका नाम सुमन—तिस्स रख दिया। उस घर में माता—पिता द्वारा सेवित हो, नियमित रूप से भिक्षु भोजन करते थे। कुमार ने उन्हें प्रायः देखते हुए उनके आचार—व्यवहार से प्रसन्न होकर वयः प्राप्ति के समय ही सम्पत्ति को त्याग, प्रव्रजित होने की इच्छा से, माता—पिता के अनेक प्रकार से मनाने पर भी उनकी बातों पर ध्यान न देते हुए उन्हें शोकमग्न, रोता—पीटता छोड़ रट्ठपालपुत्त के समान अपनी प्रव्रज्या के लिए आज्ञा लेकर, प्रव्रज्या काल से सामणेरा अवस्था तक सम्पूर्ण सुत्तपिटक, सम्पूर्ण अभिधम्मपिटक में पारंगतता प्राप्त कर, उपसंपदा काल में सम्पूर्ण विनयपिटक को पूर्ण कर तिपिटक का ज्ञान प्राप्त किया।

सो सद्धायं पब्बजितत्ता सद्धासुमनतिस्सत्थेरो नामं अहोसि, गगनतले ठितचन्दो विय सब्बत्थ पाकटो महापरिवारो अहोसि। सो महाचेतियं वन्दनत्थाय नागदीपं आगतो। तत्थ मूलगिरिस्स च अन्तरे दण्डकिरिञ्जो उय्यानं अभिरमणीयं विवेकाभिरमन्तत्थानं योगयुत्तानं अप्पमादविहारीनं भिक्खुसंघसन्निपतितानं। थेरो तं दिस्वा पसन्नचित्तो पसीदित्वा हत्थपादानि सीतलं कत्वा एकं महारुक्खं निस्साय निसीदति पल्लकं आभुजित्वा बुद्धारम्मणे। चित्तं अभिनीहारिकमत्ते एव च एकनिमित्तसरेन त्रिय मग्गफलं अरहत्तं पापुणि, लोकस्स अग्गदक्खिण्यो जातो। इदं पन अरहत्तं केन दिन्नं? ननु सक्कच्च सवनेन दिन्नं? तेनाहु पोराणा—

५६. “धम्मसज्झायितं सुत्वा, ये पि मच्छा जले चरा ।

तेन घोसेन मुदिता, चुता ते मोक्खमज्झगूति ॥”

तस्मा सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति सद्धासुमनत्थेरवत्थु नवमं।

५७. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितंति ॥”

अजगरवत्थुम्हि अयमानुपुब्बिकथा—

कस्सपसम्मासम्बुद्धकाले किर एको अजगरको हुत्वा अभिधम्मिकभिक्खूनं सन्तिकं उपगन्त्वा सयितो तेसु आयतनकथं सज्झायन्तेसु सरे निमित्तं गहेत्वा कालं कत्वा देवलोके निब्बत्तित्वा, याव अम्हाकं सत्थुस्स परिनिब्बाना ताव देवलोके येंव सम्पत्तिं अनुभवित्वा, भगवति परिनिब्बुते पन एकस्मिं ब्राह्मणकुले निब्बत्तित्वा वुड्ढिमन्वाय आजीवकपब्बज्जाय पब्बजित्वा बिन्दुसारराजस्स अग्गमहेसिया कुलूपको अहोसि।

श्रद्धापूर्वक प्रव्रजित होने के कारण उसका नाम सद्धासुमनतिस्स थेर पड़ा। वह आकाश में स्थित चन्द्रमा के समान सर्वत्र प्रसिद्ध एवं (भिक्षुओं के) महान् परिवार वाला हुआ। वह महाचैत्य की वन्दना के उद्देश्य से नागद्वीप आ गया। वहाँ मूलगिरी के बीच में स्थित दण्डकि राजा के सुन्दर उद्यान में एकांत में रमण करने के उद्देश्य से योग में लीन तथा आलस्य रहित हो विहार करने वाले भिक्षुओं का संघ एकत्र था। थेर यह देख प्रसन्न चित्त, आह्लादित हो हाथों, पैरों को शीतल करके एक विशाल वृक्ष के पास बुद्ध को आलम्बन बना पालथी मार कर बैठ गया। चित्त में संकल्प करते ही (पूर्व जन्म में सुने गए बुद्धवचन की) ध्वनि को ध्यान का एक निमित्त बनाने के साथ उसने (अष्टांगिक) मार्ग के फल अर्हत्व को प्राप्त कर लिया तथा लोक में दक्षिणा के लिए योग्य लोगों में अग्र हुआ। यह अर्हत्व किसके द्वारा दिया गया? अवश्य ही सत्कारपूर्वक (धम्म) श्रवण द्वारा दिया गया न? इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

५६. जो जल में विचरण करने वाली मछलियाँ थीं; वे भी धम्म—पाठ को सुनकर, उसके घोष से मुदित हो (इस जन्म से) च्युत हो (अगले जन्म में) मोक्ष को प्राप्त हो गईं।

इसलिये सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। सद्धासुमनथेर का यह विवरण नौवाँ है।

५७. अपने—अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

अजगर के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—कस्सप सम्यक् सम्बुद्ध के समय में एक अजगर अभिधम्मिक भिक्षुओं के पास पहुँचकर लेटा हुआ, उनके द्वारा किए जा रहे आयतन* कथा के पाठ की ध्वनि को निमित्त रूप में ग्रहण कर मृत्यु के पश्चात् देवलोक में उत्पन्न हो, हमारे शास्ता का परिनिर्वाण होने तक देवलोक में ही ऐश्वर्य का अनुभव करते हुए, भगवान् के परिनिवृत्त होने के बाद एक ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हो बड़ा होकर आजीवक^१ प्रव्रज्या के लिए प्रव्रजित हो बिन्दुसार राजा का मुख्य महर्षि कुलूपक हुआ।

* बोधिनी में देखें।

1. बुद्ध के समकालीन आचार्य मक्खलि^१ गोसाल का सम्प्रदाय आजीवक सम्प्रदाय तथा शिष्य आजीवक कहलाते थे। ये नंगे रहते थे।

तदा तस्सा देविया चत्तारो दोहळा उत्पन्ना होन्ति। कतमे चत्तारो? चन्दिमसुरियेसु अक्कमित्वा तारकरूपानि खादितुकामा, वलाहका खादितुकामा, गण्डुष्णादे खादितुकामा, महीरुहपादपत्तपाणानं खादितुकामा ति। तस्मा सो आजीवको तस्सा दोहळा पटिपस्संभनोपायं रज्जो आचिक्खि। तत्थ विज्जापको अहोसि रज्जो—“किं देविया दोहळा निब्बत्तं” ति वुत्ते, “महाराज, अयं देवी सब्बंगपरिपुण्णं नरपतिपुत्तवरं लभिस्सती” ति व्याकासि। तस्सा दोहळनिपत्तिं वित्थारेन कथेतुकामो देविं उपसंक्रमित्वा ताय पज्जापिते महारहे आसने निसीदित्वा देविया “किं” ति वुत्ते “मया कथेतब्बं अत्थि, न तं ते पच्चत्थिके राजिकपरिसन्तरे कथेसिं, इदानीं तं कथेतुं आगच्छामी” ति आह।

“ताय आचरियो तं कथेतुमयं सोस्सामा” ति वुत्ते ‘देवि, अहं तव पुत्तपटिलाभमत्तमेव कथेमि न अज्जं, इदानीं तं सुणाही’ ति वत्वा “देवि, तुय्हं पुत्तो राजा भविस्सति। अथस्सा चन्दिमसुरियेसु अक्कमितुकामतं, तेन सकलजम्बुदीपेसु एकसतराजूनं तस्स पादपरिचारिकभावाय पुब्बनिमित्तं, तारकरूपानि खादितुकामतं, ते अप्पियदायादमेव भातुघातकरनाय पुब्बनिमित्तं, वलाहकखादितुकामतं, तेन सद्धिं वादानुगतं छन्नवुत्ति पासान्दानं विधंसित्वा सम्बुद्धसासनवरमेव पग्गहणत्थाय पुब्बनिमित्तं, महीरुहपादपत्तपाणानं च खादितुकामतं, तं उपरि आकासे योजनप्पमाणे आणापवत्तापनाय पुब्बनिमित्तं” ति, सब्बं दोहळफलनिमित्तं च वत्वा—“एवं तव दोहळो तव पुत्तमेव अत्थं पटिच्च उप्पन्नो ति सल्लक्खेही” ति आह।

सा तेन अतिपहङ्गा—“एवं तेसु तेसु अत्थेसु निप्पन्नेसु तुम्हे ते निवासड्डानतो सोवण्णसिविकाय आनापेस्सामी” ति वत्वा, सक्कारं चस्स कत्वा तं उपयोजेन्ति, नामं चस्स पुच्छित्वा तं सुवण्णपत्ते लिखापेत्वा तं उय्योजेसि। सा पच्छा सम्मापरिहारियमाना गब्भा परिणतगब्भे विजायन्ति। अथ सा कुमारं लभि। अथेकदिवसं राजा तं कुमारं अंके निसीदापेत्वा कीळपेन्तो निसिन्नो अहोसि अज्जे दक्खिणावत्तसंखं।

उस समय देवी को गर्भावस्था के काल में होने वाली, चार तीव्र इच्छायें हुईं। कौन सी चार? चन्द्रमा एवं सूर्य पर पहुँचकर तारों के प्रकाश को खाने की इच्छा, बादलों को खाने की इच्छा, पृथ्वी के कीड़ों को खाने की इच्छा, पेड़, पौधों एवं पत्तियों पर रहने वाले कीड़ों को खाने की इच्छा। इसलिये उस आजीवक ने उसके गर्भावस्था में होने वाली तीव्र इच्छाओं को शान्त करने के उपाय राजा को बतलाए। तब राजा को इस बात की जानकारी हुई। 'देवी को क्यों तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई?' (राजा द्वारा) यह पूछे जाने पर 'महाराज! यह देवी सभी अंगों से परिपूर्ण सुन्दर राजकुमार को प्राप्त करेंगी।' ऐसा (आजीवक ने) बतलाया। उसके तीव्र इच्छा उत्पन्न होने को विस्तार से कहने की इच्छा से देवी के पास पहुँचकर उसके (देवी के) द्वारा बिछवाए गए मूल्यवान आसन पर बैठ कर देवी द्वारा 'क्या है?' पूछे जाने पर 'मुझे कुछ कहना है, इसे मैंने राजपरिषद में विरोधियों के बीच नहीं कहा, अब इसे कहने आया हूँ' ऐसा (आजीवक ने) कहा।

'आचार्य! आप कहिए, हम इसे सुनेंगे' ऐसा कहे जाने पर 'देवी! मैं आपके द्वारा पुत्र प्राप्ति मात्र की बात ही कहता हूँ, अन्य कुछ नहीं। अब इसे सुनें' कह कर 'देवी! तुम्हारा पुत्र राजा होगा। तुम्हारे चन्द्रमा एवं सूर्य पर पहुँचने की इच्छा भविष्यवाणी करती है कि सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में एक सौ राजा उसके पैरों के नीचे सेवा करने वाले होंगे; तारों के प्रकाश को खाने की इच्छा भविष्यवाणी करती है कि वह अपने उत्तराधिकारी भाई, जो उसका अप्रिय होगा, की हत्या करेगा; बादलों को खाने की इच्छा भविष्यवाणी करती है कि वह सम्बुद्ध के उत्तम शासन को संरक्षित करने के उद्देश्य से उसके साथ विवाद करने वाले छियानबें सम्प्रदायों का विध्वंस करेगा; पेड़, पौधों एवं पत्तियों पर रहने वाले प्राणियों को खाने की इच्छा भविष्यवाणी करती है कि आकाश में एक योजन ऊपर की दूरी तक उसकी आज्ञा का प्रवर्तन होगा' इस प्रकार (आजीवक ने) गर्भावस्था में होने वाली सभी तीव्र इच्छाओं का अभिप्राय बतलाकर—'पुत्र के कारण ही तुम्हें यह गर्भावस्था में होने वाली तीव्र इच्छाएँ उत्पन्न हो रही हैं, यह जान लो।' ऐसा कहा।

उसने (रानी) अतिप्रसन्न हो—'इस प्रकार उन अर्थों (भविष्यवाणियों) के पूर्ण हो जाने पर मैं तुम्हें तुम्हारे आवास से सोने की पालकी में मंगवाऊँगी' ऐसा कह, उसका सत्कार कर, उससे व्यवहार कायम किया; उसका नाम पूछकर उसे स्वर्ण पत्र पर लिखवा, उसे विदा किया। बाद में उसने गर्भ की सम्यक् प्रकार से देखभाल करते हुए गर्भ के पूर्ण होने पर उसे जन्म दिया। उसने बालक को प्राप्त किया। इसके बाद एक दिन राजा उस बालक को गोद में बिठाकर उससे क्रीड़ा करता हुआ बैठा था कुछ लोगों ने दाहिनी तरफ घूमा हुआ। शंख

आहरित्वा रज्जो हत्ये ठपेसुं। कुमारो मुत्तं विस्सज्जेसी ति राजा तं संखेन गहेत्वा कुमारस्स मुद्धनि ओसिञ्चि। देवि तम्मि दिस्वा कुपिता तस्स हत्थतो कुमारं गहेत्वा तमत्थं अत्तनो कुलूपकस्स आजीवकस्स आरोचेसि। 'सो वतायं देवि, तव पुत्तो सकलजम्बुदीपे अगगराजा भविस्सती' ति व्याकरित्वा ताय कतसक्कारो ततो योजनं सतं गन्त्वा अज्जतरस्मिं पदेसे विहासि।

अथ अपरेन समयेन धम्मासोको सत्तुमदनं कत्वा पितु अच्चयेन रज्जं गहेत्वा एकदिवसं मातरं पुच्छि—'अम्म, पुब्बे इमं नो सम्पत्तिं व्याकता सन्ति नो सन्ती' ति। सा 'तात, एवं व्याकतो नो कुलूपकाजीवको अत्थी' ति वत्त्वा, 'कस्मिं अम्म, सो कत्थ वसती' ति सुत्ते 'इतो योजनं सतमत्तेति' आह। सो 'आचरियस्स सक्कारं करिस्सामी' ति सोवण्णसिविकाय सद्धिं तमानेतुं मनुस्से पेसेसि। तेहि सो आनीयमानो अन्तरामगे वत्तनियसेनासने अस्सगुत्तथेरस्स वसनट्ठानं दिस्वा—'अयं पब्बजितानं निवासनोकासो' ति सिविकाय ओतरित्वा पदसा तं ठानं गन्त्वा थेरस्स मेत्तानुभावेन अज्जमज्जं निविट्ठस्स विहेसके हुत्वा मेत्तचित्ते पटिलद्धे समग्गवग्गे हुत्वा सहिते सीह—व्यग्घ—तरच्छ—गोकण्ण—सूकर—मिगादयो च तेसं पानीयं विस्सग्गकरोन्तं थेरं च दिस्वा 'के नामा' ति थेरं पुच्छि।

थेरो तस्स पुब्बहेतुसम्पत्तिं ओलोकेन्तो 'यं तस्स पुब्बे आयतनकथासवनत्थं दिस्वा तमेव तस्स उपनिस्सयो होतू' ति चिन्तेत्वा 'आयतना नाम एते आवुसो' ति आह। सो 'के पन एतेसं कम्मानी' ति पुच्छित्वा 'तस्मिं आयतना एव च कम्मानी' ति वुत्ते सह आयतनानी ति पदं सुणमानो व हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठितो उक्कुटिकं निसीदि। थेरो तस्स उदकसाटकं अदासि। ततो सो पब्बज्जं याचित्वा थेरस्स सन्तिके पब्बज्जित्वा कम्मट्ठानं गहेत्वा विपस्सनं वड्ढेत्वा सकलं वट्ठदुक्खं खेपेत्वा अग्गफलं अरहत्तं पापुणि। इदं पन अरहत्तं केन दिन्नं? ननु सक्कच्च धम्मसवनेन दिन्नं?

लाकर राजा के हाथ में रख दिया। (उसी समय) बालक ने मूत्र का त्याग कर दिया इसलिए राजा ने उस शंख को लेकर उसे बालक के सिर पर छिड़क दिया। देवी ने यह देख कुपित होकर उसके हाथ से कुमार को ले इस बात को अपने कुलूपक आजीवक को बताया। 'देवी! निश्चय ही तुम्हारा यह पुत्र सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में श्रेष्ठतम राजा होगा'—ऐसा कहकर वह (आजीवक) सत्कृत हो वहाँ से सौ योजन दूर जाकर किसी स्थान पर रहने लगा।

इसके बाद के समय में धम्मासोक ने अपने शत्रुओं का मर्दन करके, पिता के मृत्यु के पश्चात् राज्य ग्रहण कर एक दिन माता से पूछा—'माँ! पूर्व में इस सफलता के विषय का अनुमान किया गया था या नहीं?' उसने—'कुलूपक आजीवक ने ऐसा कहा था' कहकर—'माँ! वह कहाँ रहता है?' पूछे जाने पर—'यहाँ से सौ योजन दूर' बताया। उसने—'आचार्य का सम्मान करूँगा' ऐसा सोच सोने की पालकी के साथ उसे लाने के लिए आदमियों को भेजा। लाए जाते समय मार्ग में उसने (कुलूपक आजीवक) वत्तनिय—सेनासन में अस्सगुत्त थेर का निवास—स्थान देखकर—'यह प्रव्रजितों का निवास स्थान है' ऐसा सोच पालकी से उतरकर चलते हुए उस स्थान पर जाकर, थेर के मैत्री गुण की शक्ति से (प्रारम्भ में) एक—दूसरे को कष्ट पहुँचाने की ओर प्रवृत्त रहने वाले सिंह, बाघ, भालू, बारहसिंगा, सूअर एवं मृग आदि द्वारा मैत्रीपूर्ण चित्त को प्राप्त कर मिलजुल कर समूह में रहते तथा उनको पानी का वितरण करते हुए थेर को देखकर—'क्या नाम है?' ऐसा थेर से पूछा।

थेर ने इसके पूर्व—कारण रूपी सम्पदा को देखते हुए 'जो पूर्व में उसके द्वारा आयतन कथा का श्रवण किया गया था, वही इसका कारण है' ऐसा सोचकर—'आवुस! यह आयतन (प्रयास) है ऐसा कहा।' उसके (आजीवक) द्वारा—'इनके (आपके) कौन से कर्म हैं?' पूछे जाने पर—'उसमें आयतन ही (मेरे) कर्म हैं' ऐसा जवाब मिलने के साथ ही (आजीवक) आयतनों को सुनते हुए लज्जा एवं (पाप कर्म के प्रति) भय से वहीं उपस्थित हो उकड़ू बैठ गया। थेर ने उसको नहाने के लिए वस्त्र दिए। तब उसने प्रव्रज्या के लिए याचना कर, थेर के पास प्रव्रजित होकर, कर्म—स्थान को ग्रहण कर विपश्यना को विकसित करके, पुनर्जन्म रूपी दुःख को पूर्णतः समाप्त कर श्रेष्ठतम फल अर्हत्व को प्राप्त कर लिया। यह अर्हत्व किसके द्वारा दिया गया? अवश्य ही सत्कारपूर्वक (धम्म) श्रवण द्वारा दिया गया न।

तेनाहु पोराणा—

५८. “धम्मसज्झायितं सुत्वा, यो पि सप्पो अजागरो ।

तेन घोसेन मोदन्तो, चुतो सो मोक्खमज्झगोति ॥”

तस्मा सक्कच्चायं सद्धम्मो सोतब्बो ति अजगरवत्थु दसमं ।

५९. “ओहाय अत्तनो कम्मं, धम्मं सोतुं इधागता ।

तेन सक्कच्च सोतब्बं, धम्मं सम्बुद्धदेसितं ॥”

सिलुत्तस्स वत्थुम्हि अयमानुपुब्बिकथा—

लंकादीपे रोहणजनपदे महागामे काकवण्णतिस्समहाराजे रज्जं कारेन्ते तलंगरतिस्सपब्बतवासि—महाधम्मदिन्नत्थेरो देवरक्खितलेणे पटिवसति। तदा तस्स गुहा समीपे एको महावम्मिको अहोसि। तत्थ एको सिलुत्तो यत्थ कत्थचि गोचरं गहेत्वा तत्थेव वम्मिके पटिवसति। एवं काले गच्छन्ते एकस्मिं दिवसे गोचरं गण्हन्तस्स द्वे अक्खीनि भिन्दिंसु। सो वेदनप्पत्तो हुत्वा वम्मिकतो बहिगोचरं अलभन्तो सयी। ततो थेरो तत्थ निपन्नं दुक्खितं सिलुत्तं दिस्वा तस्स कारुज्जेन सवनपथे ठत्वा महासतिपट्टानसुत्तेन धम्मं देसेसि। सो तं धम्मं सुणन्तो सरे निमित्तं पट्टपेत्वा चित्तं पसादेसि। तस्मिं येव खणे एको गोधो तं मारेत्वा खादि। सो तेन निस्सन्देन ततो चुतो अनुराधपुरे दुट्ठगामिनिरज्जो एकच्चस्स अमच्चस्स कुलगहे निब्बति। अथ बुद्धिप्पत्तस्स तस्सामच्चो ति नामं अहोसि। हिरज्ज— सुवण्ण— गो— महिस—दासी—दासादि अनेकविभवेन समन्नागतो अहोसि।

सरे निमित्तगहणमत्तेन धम्मो एवं महन्तं सम्पत्तिं ददाति। अहो सद्धम्मानुभावो। होन्ति चेत्य—

६०. “अहो धम्मानुभावो, यं सुगतस्स महेसिनो ।

अजातिं जातिमत्तं सो, करोति लोकपूजितं ॥”

६१. “निद्धनं धनवन्तं च, अकुलीनं कुलगतं ।

दुम्मेधं च सुमेधत्तं, धम्मो पापेति सब्बदा ॥”

इस सम्बन्ध में पुराने लोगों द्वारा कहा गया है—

५८. जो सर्प एवं अजगर थे, वे भी धम्म—पाठ सुनकर, उसके घोष से मुदित हो (इस जन्म से) च्युत हो (अगले जन्म में) मुक्ति को प्राप्त हो गए।

इसलिये सत्कारपूर्वक सद्धम्म को सुनना चाहिए। अजगर का यह विवरण दसवाँ है।

५९. अपने—अपने कार्यों को छोड़कर आप धम्म को सुनने के लिए यहाँ आए हैं, इसलिए सम्बुद्ध द्वारा उपदेशित धम्म को सत्कारपूर्वक सुनना चाहिए।

छछूँदर के विषय में यह आनुपूर्वी कथा है—लंका द्वीप के रोहिणी जनपद में महागाम में महाराज काकवण्ण तिस्स के राज्य करने के समय तलंगरतिस्स पर्वत का वासी महाधम्मदिन्न थेर देवरक्खित गुफा में निवास करता था। उस समय उस गुफा के समीप एक विशाल वल्मीक (दीमक की बाँबी) थी। वहाँ एक छछूँदर यहाँ—वहाँ अपना भोजन ग्रहण कर उसी वल्मीक में रहता था। इस प्रकार समय बीतने पर एक दिन भोजन ग्रहण करते हुए उसकी दोनों आंखें फूट गईं। कष्ट से पीड़ित हो, वल्मीक के बाहर भोजन न प्राप्त करते हुए वह वहीं पड़ा रहा। तब एक थेर ने छछूँदर को इस प्रकार से दुःखी हो पड़ा देखकर उसके प्रति करुणा से युक्त हो श्रवण—पथ पर स्थित हो उसे महासतिपट्ठानसुत के माध्यम से धम्म का उपदेश दिया। धम्म को सुनते हुए उसने ध्वनि को निमित्त स्थापित कर चित्त को प्रसन्न किया। उसी क्षण एक गोह उसे मारकर खा गया। इसके परिणामस्वरूप वह वहाँ से च्युत होकर अनुराधपुर में दुट्ठगामिनी राजा के एक मंत्री के परिवार में उत्पन्न हुआ। उसके बड़े होने पर उसका नाम तिस्सामच्च रखा गया। वह स्वर्ण, पैसा, गाय, भैंस, दासी एवं दास आदि अनेक प्रकार के वैभव से सम्पन्न था।

ध्वनि को निमित्त के रूप में ग्रहण करने मात्र से धम्म ने इस प्रकार की महान् सम्पत्ति उसे दी। वाह रे सद्धम्म की शक्ति। यहाँ उद्धृत है—

६०. वाह रे सुगत, महर्षि के धम्म की शक्ति। यह जन्म लिए हुए को जन्म (बंधन) से मुक्त एवं लोक द्वारा पूजित कराता है।

६१. धम्म सर्वदा निर्धन को धनवान्, अकुलीन को कुलीन तथा दुर्बुद्धि को बुद्धिमान बनाता है।

६२. “सकण्ठको वति धम्मो, अपायगमनञ्जसे ।
सुसज्जितो महामग्गो, सग्गलोकस्सगामिनो ॥”

६३. “जरारोगपहाने सो, सद्धम्मो अमतागधो ।
तस्मा सो सेवितब्बो व, जनकायेन सादरा ॥”

६४. “सोयं धम्मनिभो सुत्वा, लद्धो मानुसिकं सिरिं ।
को तं धम्मं न सेवेय्य, अत्थकामो जनो हितं’ ति ॥”

ततो सो अपरभागे अनेकानि पुञ्जकम्मानी कत्वा सुत्तप्पबुद्धो विय गन्त्वा
तुसितपुरवरे कनकविमाने निब्बत्ती ति।

६५. “सुणन्तु सन्तो अमतं जिनेरितं, भजन्तु पूजेन्तु उपासयन्तु तं ।
ठाने च गमने सयनासने च, सरन्तु तं होति सदा परायणं ॥”

सिलुत्तस्स वत्थु एकादसमं।

सुजनप्पसादाय कते सद्धम्मसङ्गहे
धम्मसवनानिसंसवण्णना
निट्ठिता

६२. नरक को जाने वाला मार्ग सीधा एवं काँटे युक्त बाड़े के समान है, जबकि स्वर्ग लोक को ले जाने वाला धम्म सुसज्जित एवं विशाल मार्ग है।
६३. जरा एवं रोग के प्रहाण में यह सद्धम्म अमृतवाणी है, इसलिये जनसमूह द्वारा आदरपूर्वक इसका अभ्यास करना चाहिए।
६४. जो इस धम्म के माहात्म्य को सुनता है, वह मनुष्यों की समृद्धि को प्राप्त करता है। कल्याण एवं हित की कामना करने वाला कौन सा व्यक्ति इस धम्म का अभ्यास नहीं करेगा?
- दूसरे समय वह अनेक पुण्य कर्म करके सोए से जाग गए के समान, मृत्यु होने पर उत्तम तुसितपुर के कनक विमान में उत्पन्न होता है।
६५. सज्जन लोग जिन द्वारा प्रवर्तित अमृत (धम्म) को सुनें, उसका अभ्यास करें, उसे पूजें, उसकी उपासना करें। खड़े रहते, चलते, सोते एवं बैठते समय उसकी शरण में रहें। वह सदा अंतिम लक्ष्य हो। छछूंदर का यह विवरण ग्यारहवाँ है।

सज्जनों के प्रसाद के लिए रचित सद्धम्मसङ्ग्रह में

‘धम्म—श्रवण के माहात्म्य का वर्णन’

समाप्त।

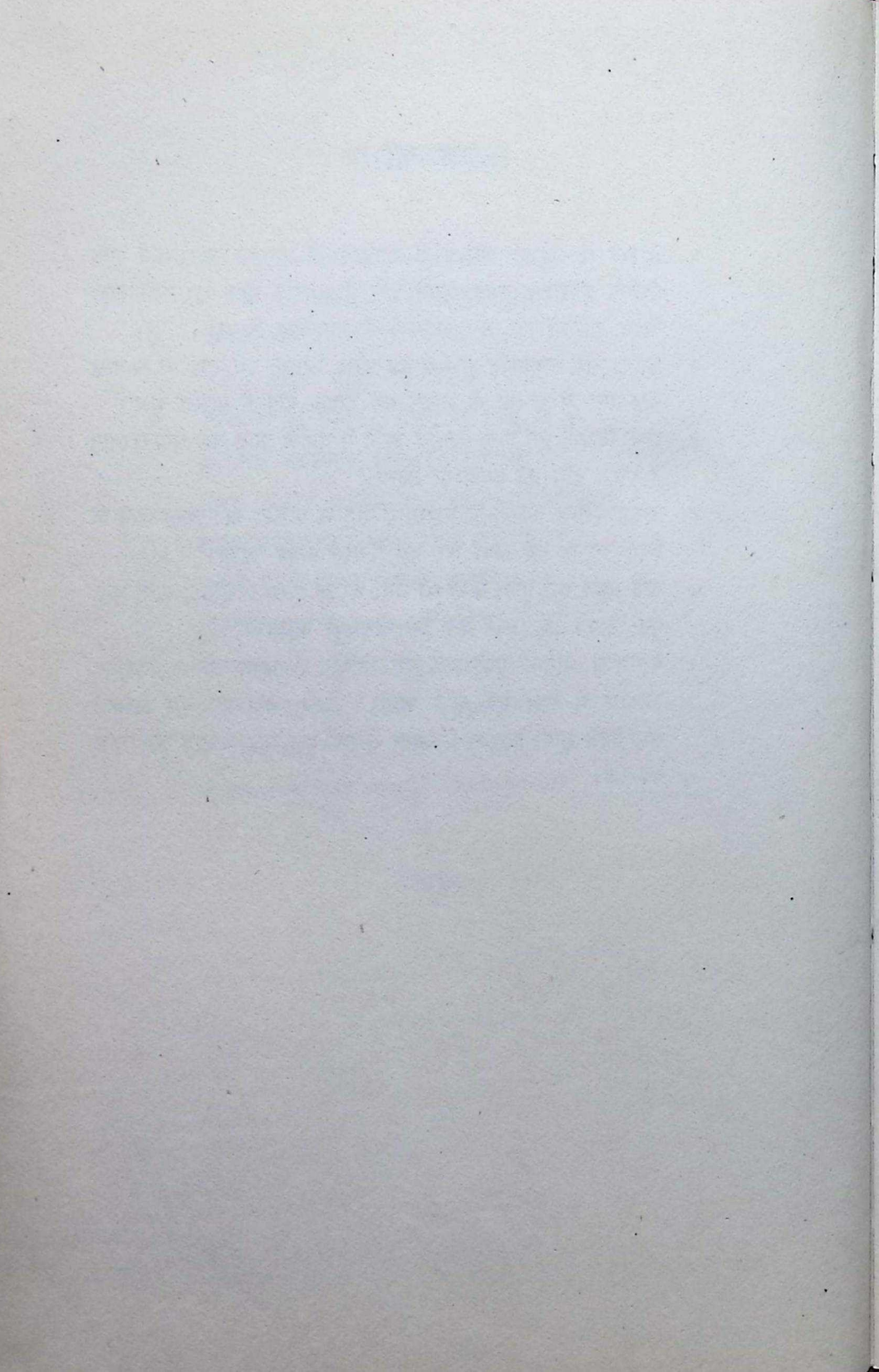
लेखकपरिचयो

१. “चन्दो व सासनाकासे, यो विरोचति सीहले ।
बोधेन्तो जाणरंसीहि, लंकावासिजनम्बुजे ॥”
२. “धम्मकित्थाभिधानो च, सीलाचारगुणाकरो ।
पाकटो सीहले दीपे, गगने विय चन्दिमा ॥”
३. “पिटकेसु च सब्बत्थ, सद्दसत्थादिकेसु च ।
पारप्पत्तो महापज्जो, लंकादीपप्पसादको ॥”
४. “तस्स सिस्सो धम्मकित्ति—महासामी ति विस्सुतो ।
लंकागमनउस्साहो, पत्वा लंकं मनोरमं ॥”
५. “तत्थ पुज्जं बहुं कत्वा, लद्धथेरुपसम्पदं ।
पुनागतो सकं देसं, सम्पत्तो योदयं पुरं ॥”
६. “परमराजाभिधानेन, महाराजेन कारिते ।
लंकाराममहावासे, वसता सन्तवुत्तिना ॥”
७. “धम्मकित्थोरुसामिना, धीमता रचितं इदं ।
सद्धम्मसङ्गहं नाम, सब्बसो परिनिद्धितं ॥”

निद्धितं

लेखक-परिचय

१. सिंहल में (बौद्ध) शासन के आकाश में चन्द्रमा के समान एक व्यक्ति प्रकाशित हुआ, उसने जल में (अर्थात् द्वीप पर) रहने वाले लंका वासियों को ज्ञान-रश्मियों से प्रकाशित किया।
२. उसका नाम धम्मकित्ति था तथा वह शील, आचार एवं गुणों का खजाना था। गगन में चन्द्रमा के समान वह सिंहल द्वीप में प्रसिद्ध हुआ।
३. सभी पिटकों एवं शब्द-शास्त्र आदि में पूर्णता प्राप्त उस महाप्रज्ञावान् ने लंका द्वीप को प्रकाशित किया।
४. उसका शिष्य धम्मकित्ति महासामी नाम से प्रसिद्ध था। लंका जाने के लिए उत्साह को प्राप्त कर वह मनोरम लंका पहुँचा।
५. वहाँ बहुत सारे पुण्य कर्मों को कर, धेर के पास उपसम्पदा प्राप्त कर, पुनः अपने देश लौट कर वह योदयपुर पहुँचा।
- ६-७. परमराजा नामक महाराजा द्वारा निर्मित लंकाराम नामक विशाल आवास में रहते हुए शुद्ध आचरण वाले, बुद्धिमान एवं उत्कृष्ट धम्मकित्ति सामी द्वारा सभी प्रकार से पूर्ण इस सद्धम्मसङ्गह की रचना की गई।



बोधिनी

*अदृष्टिको मगो (अष्टांगिक मार्ग)—बुद्ध का मध्यम मार्ग आठ अंगों से उपेत है। ये हैं—

१. सम्मादिट्ठि (सम्यक् दृष्टि)—चार आर्यसत्त्यों, कुशल—अकुशल, पूर्वान्त—अपरान्त दृष्टियों एवं प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञान ही सम्मादिट्ठि है।
२. सम्मासङ्कप्पो (सम्यक् संकल्प)—वैराग्य, मैत्री भावना तथा मन, कर्म एवं वचन से प्राणियों को कष्ट न पहुँचाने की दृढ़ धारणा का नाम सम्मासङ्कप्पो है।
३. सम्मावाचा (सम्यक् वचन)—सत्य वचन, संघकारक वचन, मधुर वचन तथा सार्थक वचन ही सम्मावाचा है।
४. सम्माकम्मन्तो (सम्यक् कर्म)—कायिक, वाचसिक तथा मानसिक कुशल कर्म ही सम्माकम्मन्तो है।
५. सम्माआजीवो (सम्यक् आजीविका)—पाँच प्रकार के व्यापार से विरत होकर जीवनयापन करना सम्माआजीवो है, वे हैं—शस्त्र, जानवर, मांस, मद्य तथा विष का व्यापार।
६. सम्मावायामो (सम्यक् व्यायाम)—चार प्रकार के सम्यक् प्रयत्नों को सम्मावायामो कहते हैं। ये हैं—(१) अनुत्पन्न अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिए प्रयत्न (२) उत्पन्न अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिए प्रयत्न (३) अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पाद के लिए प्रयत्न (४) उत्पन्न कुशल धर्मों की वृद्धि करने और भावना करने के लिए प्रयत्न।
७. सम्मासति (सम्यक् स्मृति)—चार स्मृति प्रस्थानों को सम्मासति कहते हैं। ये हैं—
 - (१) कायानुपस्सना—शरीर में होने वाले परिवर्तनों के प्रति जागरूक रहना।
 - (२) वेदानुपस्सना—वेदनाओं के प्रति सजग एवं जागरूक रहना।
 - (३) चित्तानुपस्सना—चित्तों के प्रति सजग एवं जागरूक रहना।
 - (४) धम्मनुपस्सना—धर्मों के प्रति सजग एवं जागरूक रहना।

८. **सम्मासमाधि (सम्यक् समाधि)**—कुशल चित्त की एकाग्रता ही समाधि है। यह रूपावचर समाधि एवं अरूपावचर समाधि के भेद से दो प्रकार की है। साधक जब किसी रूप आलम्बन पर चित्त को एकाग्र करता है तो वह रूपावचर समाधि है तथा साधक जब रूपरहित आलम्बन पर चित्त को एकाग्र करता है तो वह अरूपावचर समाधि कहलाती है।

***अनुमोदन**—किसी उपासक के आवास पर भोजन ग्रहण करने के पश्चात् भिक्षुओं द्वारा उपासक को दिया गया आशीर्वाद या धन्यवाद—ज्ञापन एवं कुछ धम्म का उपदेश ही अनुमोदन या अनुमोदनवत्त कहलाता है। बुद्ध के निर्देशानुसार भोजन करने वाले भिक्षुओं में वरिष्ठतम भिक्षु द्वारा अनुमोदन किया जाना चाहिए, किन्तु उसके साथ चार—पाँच कनिष्ठ भिक्षुओं को भी उपस्थित रहना चाहिए। शेष भिक्षु इच्छानुसार वहाँ से प्रस्थान कर सकते हैं।

***अभिज्जा (अभिज्ञा)**—साधक द्वारा साधना के क्रम में प्राप्त की गई दिव्य शक्तियों को अभिज्जा कहते हैं। ये हैं—

- (१) **इन्द्रिविध**—अलौकिक चमत्कारों के प्रदर्शन की प्राप्ति।
- (२) **दिब्बसोत**—दिव्यश्रवण शक्ति।
- (३) **दिब्बचक्षु**—दिव्यदर्शन सामर्थ्य।
- (४) **परचित्तविज्ञान**—दूसरे के चित्त की बात जान लेने का सामर्थ्य।
- (५) **पूर्वनिवासानुस्सति**—पूर्वजन्मों का ज्ञान।
- (६) **आसवक्खयकरणजाण**—आसवों के क्षय हो जाने का ज्ञान।

***अरहत्त (अर्हत्)**—जब साधक रूपराग, अरूपराग, मान, उद्धच्य एवं अविज्जा—इन पाँच बन्धनों का समूल विनाश कर देता है तब वह अरहत्त कहलाता है। इस अवस्था में उसके सारे दुःख—स्कन्धों का अन्त हो जाता है, निर्वाण का मार्ग तय हो जाता है, जीवन—स्रोत सदा के लिए सूख जाता है एवं शरीर—पात के पश्चात् वह पुनर्जन्म के बन्धन में नहीं पड़ता है।

***अरियसच्च (आर्यसत्य)**—भगवान् बुद्ध ने छः वर्षों की तपस्या के पश्चात् जिस सत्य का साक्षात्कार बोधि वृक्ष के नीचे किया, वे ही चार आर्यसत्त्यों के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये इस प्रकार हैं—

- (१) **दुक्ख**—इसके अनुसार समस्त सांसारिक वस्तुएँ रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान—इन पाँच स्कन्धों से ही निर्मित हैं एवं नाशवान

स्वभाव की होने के कारण दुःख स्वरूप है।

(२) **दुःखसमुदय**—दुःख समुदय का अर्थ दुःख का कारण होता है। सभी दुःखों का मूल तृष्णा है। ये तीन प्रकार की होती हैं—

(i) **काम तृष्णा**—रूप, शब्द, गन्ध, रस एवं स्पर्श की प्रबल आसक्ति ही काम तृष्णा है।

(ii) **भव तृष्णा**—जब रूप आदि विषयों के प्रति शाश्वत दृष्टि से युक्त राग उत्पन्न होता है, तब उसे भवतृष्णा कहते हैं।

(iii) **विभव तृष्णा**—रूप आदि विषयों के प्रति उच्छेद एवं विनाश दृष्टि ही विभव तृष्णा है।

(३) **दुःखनिरोध**—तृष्णा का अशेष विराग एवं निरोध ही दुःख निरोध या निर्वाण है।

(४) **दुःखनिरोधगामिनीपटिपदा**—आर्य अष्टांगिक मार्ग को दुःख-निरोधगामिनी प्रतिपदा कहा जाता है। (पूर्व में उल्लिखित अष्टांगिक मार्ग को देखें)

***आयतन**—सामान्य अर्थों में आयतन का अभिप्राय विस्तार, क्षेत्र या स्थान है। पारिभाषिक शब्द के रूप में आयतन बारह हैं। ये छः इन्द्रियों एवं उसके विषय को दर्शाते हैं, जो आन्तरिक (अज्झत्तिकानि) एवं बाह्य (बाहिरानि) आयतन कहे गए हैं। आन्तरिक आयतन हैं—चक्षु (आँख), सोत (कान), घाण (नाक), जिह्वा (जीभ), काय (शरीर) एवं मन। बाह्य आयतन हैं—रूप, सद्द (शब्द), गन्ध, रस, फोदठब्ब (स्पर्श) एवं धम्म।

***आसव (आसव)**—आसव चार प्रकार के होते हैं। ये हैं—

(i) **कामासव**—पाँच कामगुण सम्बन्धी राग कामासव है।

(ii) **भवासव**—रूप एवं अरूप भवों में उत्पन्न होने का छन्दराग भवासव है।

(iii) **दिट्ठासव**—पूर्वान्त, अपरान्त आदि बासठ प्रकार की मिथ्यादृष्टियाँ दिट्ठासव है। (विस्तार के लिए दीघनिकाय का ब्रह्मजालसुत्त देखें)

(iv) **अविज्जासव**—चार आर्यसत्त्यों, पूर्वान्त, अपरान्त, पूर्वापरान्त तथा प्रतीत्यसमुत्पाद—इन आठ बातों के अज्ञान को अविज्जासव कहते हैं। जिस भिक्षु के सभी आसव समूल नष्ट हो जाते हैं उसे

खीणासव (क्षीणास्रव) कहते हैं।

***इद्धि एवं इद्धि-पाद (ऋद्धि एवं ऋद्धि-पाद)**—ऋद्धि का अर्थ दिव्य शक्ति है। साधकों द्वारा साधना करते हुए विभिन्न प्रकार की ऋद्धियों को प्राप्त किए जाने का उल्लेख मिलता है, किन्तु बुद्ध ने भिक्षुओं द्वारा सामान्य जनों के समक्ष ऋद्धियों के प्रदर्शन को निन्दनीय एवं निम्न स्तर का माना है। यह संघ के नियमानुसार अपराध की श्रेणी में आता था। ऋद्धियाँ दस प्रकार की कही गई हैं। ऋद्धि-पाद ऋद्धियों के चार आधारों को कहते हैं। ये हैं—

१. छन्द-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि-पाद (चार ध्यानों में सिद्धि प्राप्त करने की प्रबल इच्छा)।
२. वीर्य-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि-पाद (चार ध्यानों में सिद्धि प्राप्त करने में अपनी शक्ति का विनियोग)।
३. चित्त-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि-पाद (चार ध्यानों की सिद्धि में अपने मन को लगाना)।
४. विमर्ष-समाधि-प्रधान-संस्कार-युक्त ऋद्धि-पाद (ध्यान की अवस्थाओं में काम करने वाले मनस्तत्त्वों की परीक्षा और उनका विवेक)।

***उपज्झाय (उपाध्याय)**—प्रव्रज्या देने वाले गुरु को उपज्झाय कहते हैं। शिष्य को पढ़ाने-लिखाने वाले को आचरिय (आचार्य) कहते हैं। किसी के उपज्झाय एवं आचरिय एक भी हो सकते हैं और अलग-अलग भी।

***उपद्धानशाला (उपस्थानशाला)**—यह भिक्षुओं का सभागार एवं भोजनालय था। भिक्षुओं द्वारा गर्मी, जाड़े में खुले स्थान पर भोजन किए जाने पर आने वाली समस्याओं को देखते हुए बुद्ध ने विहार के अन्दर एक उपस्थानशाला की अनुमति दे दी थी। भिक्षु वहाँ धम्म-चर्चा किया करते थे अथवा उपासकों द्वारा दिए गए दान को स्वीकार करते थे। भिक्षु अकेला रहने पर वहीं उपोसथ का संकल्प भी कर सकता था। सद्धिविहारिकों या अन्तेवासिकों (शिष्यों) की जिम्मेदारी उपस्थानशाला को साफ-सुथरा रखना होती थी। अनाथपिण्डिक ने बुद्ध एवं संघ के लिए जेतवनाराम में उपस्थानशालाएं बनवाई थीं।

***उपसंपदा**—प्रव्रजित हो काषाय वस्त्र धारण कर लेने पर व्यक्ति सामणेर कहलाने लगता है। जब सामणेर बीस साल के ऊपर का हो जाता है, तब उसका उपसंपदा संस्कार किया जाता है, जिसके बाद वह भिक्षु कहलाता है। उपसंपदा के लिए इच्छुक सामणेर संघ के समक्ष उपस्थित होता है। पहले संघ के बीच उसकी परीक्षा होती है कि यथार्थ में उसने धम्म का अध्ययन किया है या नहीं। उत्तीर्ण होने पर उसे संघ में लिया जाता है एवं वह स्वयं को भिक्षु कहने का अधिकारी होता है।

***उपासक**—बुद्ध, धम्म एवं संघ में श्रद्धा रखने वाला गृहस्थ उपासक कहलाता है। व्यक्ति बुद्ध, धम्म तथा संघ का शरणागत होने का तीन बार वचन लेकर उपासक बन सकता है। उपासक को पञ्चशील का पालन करना होता है। ये हैं—जीवहिंसा, चोरी, अकुशल कर्म, झूठ एवं नशीले पदार्थों से विरत रहना।

उपासक उपसंपदा न प्राप्त करने के कारण संघ का सदस्य नहीं होता है, अतः वह संघ के किसी भी कार्य—कलाप में भाग नहीं ले सकता है। किसी भिक्षु के उपासक तो अनेक होते हैं, किन्तु जो संघ की विशेष सेवा करता है तथा धम्म को सुनता एवं उसका पालन करता है, वह महाउपासक कहलाता है।

***उपोसथ**—उपोसथ का प्रारम्भ राजा बिम्बिसार के अनुरोध पर किया गया था। उपोसथ के दिन, जो साधारणतः पूर्णिमा एवं अमावस्या के दिन पड़ा करता था, विहार की सीमा के भीतर रहने वाले समस्त भिक्षु सभा में उपस्थित होते थे। सभा का सभापति पातिमोक्खसुत्त का पाठ करता था, फिर वह प्रत्येक भिक्षु को आज्ञा देता था कि यदि उसने पातिमोक्ख में उल्लिखित किसी भी नियम का उल्लंघन किया हो तो उसे प्रख्यापित करे। यदि ऐसे प्रख्यापनों में, भिक्षु द्वारा किए गए अपराध साधारण प्रकार के होते थे तो वह केवल दोष के अंगीकार मात्र से दोषमुक्त कर दिया जाता था; अन्यथा उसे सभा छोड़कर बाहर चले जाने तथा एक भिक्षु—समिति द्वारा विहित दण्ड को भुगतने की आज्ञा दी जाती थी।

***कम्मट्ठान (कर्मस्थान)**—सन्नाधि प्राप्त करने के लिए बौद्ध साधना में

चालीस विषयों को ध्यान का आलम्बन बताया गया है, ये ही चालीस कर्म—स्थान या शमथ भावना के चालीस आलम्बन कहलाते हैं, जो इस प्रकार हैं—

1. 10 कसिण
2. 10 असुभ
3. 10 अनुस्सति
4. 4 ब्रह्मविहार
5. 4 अरूप्प
6. 1 सज्जा
7. 1 ववत्थान

40

पुनः साधक शमथ भावना को पूर्ण कर 'विपस्सना' मार्ग पर अग्रसर होता है, इसके भी उन्तीस कर्म—स्थान है। (विस्तृत ज्ञान के लिए अभिधम्मत्थसंगहो या विसुद्धिमग्गो देखें)

***चक्कवाल (चक्रवाल)**—बौद्ध मान्यता के अनुसार सौर—परिवार को चक्कवाल की संज्ञा दी गई है एवं चक्कवालों की संख्या असंख्य बताई गई है। एक चक्कवाल जल से घिरा हुआ वृत्ताकार लोक है, जिसके केन्द्र में सिनेरू पर्वत है। सिनेरू पर्वत के चारो तरफ सात पर्वत श्रृंखलाएँ हैं—युगन्धर, ईसधर, करवीक, सुदस्सन, नेमिन्धर, विनतक एवं अस्सकण्ण। प्रत्येक चक्कवाल के अपने सूर्य एवं चन्द्रमा होते हैं तथा एक सूर्य केवल एक चक्कवाल को प्रकाशित करता है।

***चेतिय (चैत्य)**—पारिभाषिक अर्थों में चैत्य का अभिप्राय एक ऐसे टीले से है, जिसमें किसी महापुरुष की हड्डियाँ, राख, दाँत, बाल आदि वस्तुएँ स्मृतिस्वरूप रखी गई हों। 'चैत्य' शब्द की व्युत्पत्ति 'चिता' से कही गई है। इस प्रकार के स्मारक बुद्ध से पूर्व भी प्रचलन में थे। यद्यपि आगे चलकर श्रीलंका के वंस तथा अट्ठकथा साहित्य में स्तूप तथा चैत्य समान अर्थों में प्रयुक्त होने लगे, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि बुद्ध के समय

में 'चैत्य' शरीर के अवशेष के ऊपर निर्मित टीले के साथ-साथ सामान्य रूप से धार्मिक महत्त्वके स्थानों के रूप में भी प्रयुक्त होता था। बुद्ध ने स्वयं महापरिनिब्बानसुत्त में बुद्धों के जन्म, ज्ञान-प्राप्ति, प्रथम धम्म-प्रवचन एवं मृत्यु के स्थानों के लिए चेतिय शब्द का प्रयोग किया है।

***ज्ञान (ध्यान)**— किसी एक विषय पर मन को स्थिर करना ही 'ज्ञान' है। बौद्ध साधना में 'ज्ञान' एवं 'समाधि' शब्द पर्याय के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। विसुद्धिमग्ग में कहा गया है—'कुसचित्तेकग्गता समाधि' अर्थात् कुशल चित्त की एकाग्रता ही समाधि है। यह रूप ज्ञान एवं अरूप ज्ञान के भेद से दो प्रकार का होता है। जब साधक किसी आकारयुक्त वस्तु अर्थात् रूपालम्बन पर चित्त को स्थित कर ध्यानावस्थित होता है, तो वह रूप-ज्ञान की अवस्था होती है। रूप-ज्ञान पाँच प्रकार के होते हैं—

- (१) वितर्क, विचार, प्रीति, सुख एवं एकाग्रता सहित प्रथम ध्यान।
- (२) विचार, प्रीति, सुख एवं एकाग्रता सहित द्वितीय ध्यान।
- (३) प्रीति, सुख एवं एकाग्रता सहित तृतीय ध्यान।
- (४) सुख एवं एकाग्रता सहित चतुर्थ ध्यान।
- (५) उपेक्षा एवं एकाग्रता सहित पञ्चम ध्यान।

जब साधक रूप-ज्ञान को पूर्ण कर लेता है, तब वह आकाररहित या अरूप आलम्बन पर चित्त को एकाग्र कर साधनारत होता है। अरूप-ज्ञान चार प्रकार के होते हैं—

१. आकाश-आतन्त्यायतन-अनन्त आकाश का ध्यान।
२. विज्ञान-आतन्त्यायतन-अनन्त विज्ञान का ध्यान।
३. आकिंचन्यायतन-अनन्त आकिंचन्य का ध्यान।
४. नैवसंज्ञा-नासंज्ञा-आयतन-चित्त की वह अवस्था, जहाँ संज्ञा है अथवा असंज्ञा, इसकी अनुभूति भी न रहे।

***तुसित लोक**—बौद्ध कर्म-सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति अपने कर्मानुसार विभिन्न लोकों में जन्म लेता है। इन लोकों की कुल संख्या इकतीस है, जिसमें चार दुर्गति लोक, सात सुगति लोक, सोलह रूपलोक तथा चार अरूपलोक हैं। तुसित लोक सुगति लोकों में से एक है। इसका विशेष महत्त्व है, क्योंकि बौद्ध मान्यता के अनुसार बोधिसत्त्व विभिन्न पारमिताओं

को पूर्ण कर इसी लोक में स्थापित हो तब तक ठहरते हैं, जब तक मनुष्य लोक में जन्म ले बुद्ध होने का उचित अवसर न आ जाए। मान्यता है कि मेतेय्य बोधिसत्त्व, जो भविष्य में संसार में जन्म लेकर बुद्ध होंगे, इस समय तुसित लोक में ही निवास कर रहे हैं। बुद्ध की माता महामाया देवी भी उन्हें जन्म दे मृत्यु के उपरान्त इसी लोक में गई थीं।

***दसपुञ्ज या पुञ्जकिरियवत्थु (दशपुण्य या पुण्यक्रियावस्तु)**—पुण्य कर्मों के दस आधार कहे गए हैं; इनके लिए पालि ग्रन्थों में दस पुञ्ज या पुञ्जकिरियवत्थु शब्द प्रयुक्त किया गया है। ये हैं—

१. दान
२. सील—सदाचरण
३. भावना
४. अपचिति—दूसरों को आदर
५. वेय्यावच्च—दूसरों की सेवा
६. पत्ति—अनुष्पदान—अपने पुण्यों का दूसरों को दान या हस्तान्तरण
७. अब्भनुमोदना—पुण्य कार्य करने के पश्चात् प्रसन्नता का भाव रखना
८. धम्मदेसना—धम्म का उपदेश करना
९. धम्मस्सवन—धम्म—श्रवण करना
१०. दिट्ठुज्जुक कम्म—दूसरों की मिथ्या दृष्टि को दूर कर दृष्टि को ठीक (ऋजु) करना।

***दसबल**—तथागत बुद्ध को दस प्रकार के बलों से सम्पन्न माना गया है, इसीलिए उनके अनेक विशेषणों में से एक दसबल भी है। ये दस बल हैं—

१. बुद्ध स्थान को स्थान के रूप में तथा अस्थान को अस्थान के रूप में सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
२. बुद्ध अतीत, वर्तमान एवं भविष्य के लिए कर्म—फलों के स्थान एवं हेतु को सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
३. बुद्ध सर्वत्रगामिनी प्रतिपद् (मार्ग, ज्ञान) को सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
४. बुद्ध अनेक धातु (ब्रह्माण्ड) वाले लोगों को सम्यक् प्रकार से

जानते हैं।

५. बुद्ध नाना अधिमुक्ति (स्वभाव) वाले सत्त्वों (प्राणियों) को सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
६. बुद्ध दूसरे प्राणियों की इन्द्रियों के परत्व—अपरत्व (प्रबलता—दुर्बलता) को सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
७. बुद्ध ध्यान, विमोक्ष, समापत्ति के संक्लेश (मल), व्यवदान (निर्मलीकरण) और उत्थान को सम्यक् प्रकार से जानते हैं।
८. बुद्ध अपने पूर्वजन्मों की बात को याद करते हैं।
९. बुद्ध अमानुष, दिव्य—चक्षु से प्राणियों को उत्पन्न होते, मरते, स्वर्ग लोक को प्राप्त करते हुए देखते हैं।
१०. बुद्ध आस्रवों के क्षय से आस्रवरहित चित्त की विमुक्ति, प्रज्ञा की विमुक्ति को साक्षात् कर लेते हैं।

* **दसवत्थु (दस वस्तु या बातें)**—इनका प्रसंग सर्वप्रथम चूलवग्ग के सत्तसत्तिका खम्भक में आया है, जिसमें दस आचरण सम्बन्धी ये बातें द्वितीय संगीति बुलाए जाने का कारण कही गई हैं। ये हैं—

१. **सिँगिलोण कप्प**—अर्थात् एक खाली सींग में नमक ले जाना। यह पाचित्तिय संख्या अड़तीस के विरुद्ध कर्म था, जिसके अनुसार खाद्य—संग्रह नहीं करना चाहिए।
२. **द्रंगुल कप्प**—जब छाया दो अंगुल चौड़ी हो जब भोजन करना। यह पाचित्तिय संख्या सैंतीस के विरुद्ध कर्म था, जिसके अनुसार मध्याह्न के बाद भोजन निषिद्ध था।
३. **गामन्तर कप्प**—एक ही दिन में दूसरे गांव में जाकर दोबारा भोजन कर लेना। यह पाचित्तिय संख्या पैंतीस के विरुद्ध कर्म था, जिसके अनुसार अति भोजन निषिद्ध था।
४. **आवास कप्प**—एक ही सीमा में अनेक स्थानों पर उपोसथ कर्म करना। यह महावग्ग के नियमों के विरुद्ध था।
५. **अनुमति कप्प**—किसी कर्म को करने के बाद उसके लिए अनुमति प्राप्त करना। यह भी भिक्षु शासन के विरुद्ध था।
६. **अविण्ण कप्प**—रूढ़ियों को भी शास्त्र मान लेना। यह भी उपर्युक्त

कोटि का कर्म था।

७. *अमथित कप्प*—भोजन के बाद ऐसा द्रव्य पीना जो न दूध रह गया है न अभी दही बना है।
८. *जलोगिम्यातुं*—ताड़ी पीना। यह पाचित्तिय संख्या इक्यावन के विरुद्ध था, जिसके अनुसार मादक पेय पीना वर्जित था।
९. *अदसकं निसीदनं*—बिना किनारे के कंबल या रजाई का उपयोग करना। यह पाचित्तिय संख्या नवासी के विरुद्ध था।
१०. *जातरूपरजतं*—सोना—चांदी ग्रहण करना। यह निस्सगिय पाचित्तिय संख्या अट्ठारह का उल्लंघन था।

* *दसधम्म*—दसधम्म शब्द राजा के दस प्रकार के कर्तव्यों को इंगित करता है, जिनका विस्तृत उल्लेख जातकों में प्राप्त होता है। ये क्रमशः इस प्रकार हैं—

१. दान—राजा को उदार हृदय एवं दानी स्वभाव का होना चाहिए। उसे खजाने एवं सम्पत्ति के प्रति तृष्णामुक्त एवं आसक्तिहीन होना चाहिए एवं इसे जनकल्याण में प्रयुक्त करना चाहिए।
२. सील—उसे शीलवान एवं सदाचारी होना चाहिए। उसे जीवहिंसा, धोखे, चोरी, दूसरों के शोषण, व्यभिचार, झूठ एवं नशे के सेवन से दूर रहना चाहिए। इस प्रकार उसे कम से कम उपासकों के लिए निर्दिष्ट पञ्चशीलों का पालन करना चाहिए।
३. परिच्चाग—उसे जन-हित में अपनी सुविधाओं, नाम, प्रसिद्धि एवं यहाँ तक कि प्राणों का भी त्याग करने के लिए तैयार रहना चाहिए।
४. अज्जव—अपने कर्तव्यों के पालन में उसकी नीयत साफ होनी चाहिए। उसे भय एवं पक्षपात से मुक्त हो ईमानदारी तथा न्यायपूर्ण तरीके से कार्य करना चाहिए एवं प्रजा को धोखा नहीं देना चाहिए।
५. मद्दव—राजा को दयालुता एवं विनम्रता का भाव रखना चाहिए।
६. तप—राजा को विलासिता त्याग कर सादगीपूर्ण जीवन जीना चाहिए। उसे आत्मसंयमी होना चाहिए।
७. अक्कोध—उसे घृणा, दुराग्रहों एवं विद्वेष से विरत रहना चाहिए।
८. अविहिंसा—उसे न सिर्फ व्यक्तिगत तौर पर दूसरों को नुकसान

पहुँचाने से बचना चाहिए, बल्कि उसे युद्ध एवं प्रत्येक हिंसापूर्ण कार्यवाही को रोककर प्रजा के बीच शान्तिवर्द्धन करना चाहिए।

९. खन्ति—उसे प्रत्येक विपत्ति, कष्ट एवं अपमान को बिना धैर्य एवं सन्तुलन खोए सहना चाहिए।

१०. अविरोध—उसे जनाकाक्षाओं का विरोध नहीं करना चाहिए एवं किसी भी जनहित के कार्य में बाधक नहीं बनना चाहिए। उसे प्रजा को साथ में लेकर शासन करना चाहिए।

* **धम्मकखन्ध (धर्म-स्कन्ध)**—तिपिटक चौरासी हजार धम्मकखन्धों में विभाजित है। यह विभाजन धम्म के उपदेश की प्रकृति के अनुसार है। आचार्य बुद्धघोष के अनुसार किसी सुत्त या उपदेश में जितने विषय वर्णित हैं, उसमें उतने धम्मकखन्ध विद्यमान हैं; उदाहरणस्वरूप सीलकखन्ध, समाधिकखन्ध, पञ्चाकखन्ध, विमुत्तिकखन्ध आदि।

* **पटिसम्भिदा (प्रतिसंविदा)**—भेदयुक्त या समीक्षात्मक ज्ञान को पटिसम्भिदा कहते हैं। पटिसम्भिदाएँ चार प्रकार की होती हैं—

- (१) अत्थपटिसम्भिदा—अर्थों का विस्तारपूर्वक ज्ञान
- (२) धम्मपटिसम्भिदा—बुद्ध की शिक्षाओं का ज्ञान
- (३) निरुत्तिपटिसम्भिदा—शब्दों की व्युत्पत्ति का ज्ञान
- (४) पटिभानपटिसम्भिदा—सत्य के स्वरूप का प्रज्ञात्मक ज्ञान

* **परिक्खार (परिष्कार)**—परिक्खार का अभिप्राय उन वस्तुओं से है, जिन्हें हर भिक्षु को रखना आवश्यक होता है। प्रारम्भिक ग्रन्थों में चार परिक्खारों का उल्लेख मिलता है, ये हैं—चीवर, भिक्षापात्र, सोने एवं बैठने का आसन एवं औषधि। बाद के ग्रन्थों में 'अट्ठपरिक्खार' नाम से आठ आवश्यक वस्तुओं का वर्णन मिलता है—तीन चीवर (संङ्घाटी, उत्तरासंग एवं अन्तर्वासक), भिक्षापात्र, उस्तरा, सूई, कमरबन्द एवं जल साफ करने वाला छन्ना।

* **परिवेण**—भिक्षुओं द्वारा रहने एवं धर्मग्रन्थ पाठ किए जाने के लिए चारो तरफ निर्मित निजी कक्षों के बीच आंगन से युक्त एक प्रांगण।

* **पवारणा (प्रवारणा)**—यह वर्षावास की समाप्ति पर महीने की पूर्णिमा के

दिन होने वाला आयोजन है। इस दिन संघ के समस्त भिक्षु एक स्थान पर एकत्र होते हैं एवं क्रमशः प्रत्येक भिक्षु वर्षावास की अवधि में स्वयं द्वारा की गई गलतियों को निर्दिष्ट करने के लिए अपने साथी भिक्षुओं को आमंत्रित करता है। भिक्षु की गलती के अनुसार संघ द्वारा दण्ड दिए जाने का प्रावधान है।

***पारमी (पारमिता)**—बुद्धत्व—प्राप्ति की आकांक्षा रखने वाले बोधिसत्त्व को विभिन्न जन्मों में उत्पन्न होकर जिन गुणों में सिद्धि या पूर्णता प्राप्त करनी होती है, उन्हें पारमी या पारमिता कहते हैं। विनयपिटक, अभिधम्मपिटक एवं सुत्तपिटक के प्रथम चार निकायों (दीर्घनिकाय, मज्झिमनिकाय, संयुत्तनिकाय एवं अंगुत्तरनिकाय) में अनुपलब्ध यह शब्द सर्वप्रथम खुददकनिकाय के बुद्धवंस नामक ग्रन्थ में प्राप्त होता है। पारमी का शाब्दिक अर्थ पराकाष्ठा या पूर्णता है। महायान के दशभूमिकसूत्र को छोड़ अन्य संस्कृत ग्रन्थों एवं थेरवाद के संस्कृत ग्रन्थों में छः पारमिताओं का वर्णन मिलता है, जबकि पालि परम्परा के ग्रन्थों में दस पारमिताओं का। यद्यपि यह अन्तर केवल मात्रात्मक है, गुणात्मक रूप से अवलोकन करने पर विशेष अन्तर नहीं प्रतीत होता है एवं इनका परस्पर अन्तर्भाव किया जा सकता है। जिन ग्रन्थों में छः पारमिताओं का उल्लेख है, उनके अनुसार ये क्रमशः इस प्रकार हैं—

१. दान
२. शील
३. क्षान्ति
४. वीर्य
५. ध्यान
६. प्रज्ञा

पालि परम्परा में वर्णित दस पारमिताएँ इस प्रकार हैं—

१. दान
२. सील (शील)
३. नेक्खम्म (नैष्कर्म्य अर्थात् वैराग्य)
४. पज्जा (प्रज्ञा)
५. विरिय (वीर्य अर्थात् उत्साह)

६. खन्ति (क्षान्ति अर्थात् धैर्य)
७. सच्च (सत्यं)
८. अधिट्ठान (अधिष्ठान अर्थात् संकल्प)
९. मेत्ता (मैत्री)

१०. उपेक्खा (उपेक्षा अर्थात् समचित्तता का भाव)

***पुञ्जकिरियवत्थु (पुण्यक्रियावस्तु)**—‘दसपुञ्ज’ के अन्तर्गत देखें।

***बोज्झंग (बोध्यंग)**—निर्वाण प्राप्ति के लिए निर्दिष्ट सैंतीस बोधिपक्खीय धम्मों को सात वर्गों में विभाजित किया गया है। साधक से उन सभी सैंतीस धम्मों का पालन अपेक्षित नहीं है। निर्वाण की प्राप्ति के लिए केवल एक या दो वर्गों के अनुसार पूर्ण रूप से आचरण करना पर्याप्त है, क्योंकि वस्तुतः उन सात वर्गों में प्रत्येक में निर्वाण के लिए आवश्यक सभी धम्मों का समावेश है और यही कारण है कि सैंतीस में से अनेक धम्म ऐसे हैं, जिनमें परस्पर कोई भेद नहीं है। बोज्झंग या सम्बोज्झंग इन सात वर्गों में छठा वर्ग है। बोज्झंग के प्राप्ति हेतु साधक का पूर्णतः शीलवान् होना आवश्यक है, क्योंकि शील बोज्झंगों का उसी प्रकार आधार है, जिस प्रकार पृथ्वी वृक्ष का।

बोज्झंग की संख्या सात है। प्रत्येक बोज्झंग अगले बोज्झंग के लिए सोपान के समान है एवं प्रथम बोज्झंग से अंतिम बोज्झंग तक क्रमशः साधक की प्रगति होती है। ये सात बोज्झंग इस प्रकार हैं—

१. सति (स्मृति)—अपने मानसिक एवं शारीरिक कार्यकलापों के प्रति जागरूक एवं स्मृतिवान् रहना।
२. धम्म—विचय (धम्म का विवेक)—धम्म सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं पर अनुसंधान एवं उनकी परीक्षा करना। इसके अन्तर्गत समस्त नैतिक, धार्मिक एवं दार्शनिक अध्ययन, अनुसंधान, धम्म चर्चा एवं संवाद आदि गतिविधियाँ समाहित हैं।
३. विरिय (वीर्य)—निर्वाण प्राप्ति के लक्ष्य हेतु निरन्तर शक्ति एवं सामर्थ्य से युक्त होना। साधक का प्रवचन सुनने के पश्चात् उस विषय पर मनन तथा विवेचन करने के बाद उसकी भावना करनी चाहिए।

४. पीति (प्रीति)—पूर्व के बोज्झंग में भावना के अभ्यास के परिणामस्वरूप साधक में प्रीति का उत्पाद होता है।
५. पसद्धि (प्रश्रब्धि अर्थात् मानसिक शांति)—पूर्ववर्णित चार बोज्झंगों, विशेषतः 'पीति' के प्राप्त होने पर शारीरिक और मानसिक शांति प्राप्त होती है।
६. समाधि—पसद्धि की प्राप्ति से ध्यान एकाग्र हो जाता है और साधक को मानसिक दृढ़ता एवं विश्रान्ति प्राप्त होती है। यही समाधि है।
७. उपेक्खा (उपेक्षा अर्थात् समचित्तता का भाव)—इस अवस्था में चित्त की वृत्तियाँ सम हो जाती हैं और किसी भी लाभ—अलाभ, सुख—दुःख या हर्ष—विषाद से चित्त में विक्षोभ नहीं होता।
साधक को इन बोज्झंगों को आधार स्वरूप सिद्ध करने के पश्चात् अष्टांगिक मार्ग को गुरु या पथ—प्रदर्शक के रूप में ग्रहण करना चाहिए।

***भावना**—'भावना' शब्द अत्यन्त विस्तृत अर्थों में प्रयुक्त हुआ है, जिसके अन्तर्गत मानसिक क्लेशों का शुद्धिकरण, मानसिक शक्तियों को विकसित एवं दृढ़तर करते हुए उन्हें उनके शुद्ध स्वरूप तक ले जाना एवं प्रज्ञावान् हो धर्मों के वास्तविक स्वरूप का साक्षात्कार करते हुए परम शांति—निब्बान को अनुभूत करना समाहित है।

भावना के दो सोपान हैं—

- (१) समथ (शमथ) या समाधि
- (२) विपस्सना (विपश्यना)

समाधि की विधियाँ बुद्ध से पूर्व भी प्रचलित थीं तथा बुद्ध ने स्वयं आलार कालाम एवं उद्दक रामपुत्त नामक आचार्यों से समाधि को सीखा था। किन्तु उन्होंने समाधि के अंतिम बिन्दु नेवसज्जानासज्जायतन (चित्त की वह अवस्था जहाँ संज्ञा और असंज्ञा का बोध भी न रहे) को पर्याप्त न मानकर समाधि से भी उच्चतर साधना 'विपस्सना' की अवस्था तक पहुँच कर नई खोज की। इस प्रकार विपस्सना को ही विशुद्ध बौद्ध साधना पद्धति कहा जा सकता है, यद्यपि समथ या समाधि विपस्सना तक पहुँचने के लिए आधार का काम करते हैं।

समाधि में योगी बाह्य रूप—आलम्बनों या अरूप—आलम्बनों पर चित्त एकाग्र कर साधना करता है, जिसके परिणामस्वरूप (यदि वह क्रमशः बढ़ते हुए विपस्सना द्वारा निर्वाण को अनुभूत न कर सका तब) वह शरीरी ब्रह्माओं या अशरीरी ब्रह्माओं के लोक में उत्पन्न होता है। समाधि भावना के लिए ही चालीस प्रकार के कम्मट्ठान बताए गए हैं।

विपस्सना में योगी बाह्य संसार के स्थान पर पञ्चस्कन्धों (रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान) के समूह—इस शरीर को अपनी साधना का केन्द्र बनाता है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु बुद्ध ने चार सतिपट्ठानों (स्मृतिप्रस्थानों) का निर्देश किया है, जिनका वर्णन दीघनिकाय के महासतिपट्ठानसुत्त एवं मज्झिमनिकाय के सतिपट्ठानसुत्त में उपलब्ध है। विपस्सना द्वारा साधक प्रज्ञावान् हो सांसारिक वस्तुओं के अनित्य, दुःख एवं अनात्म स्वभाव को भली—भाँति जानकर अंतिम सत्य निर्वाण का साक्षात् कर लेता है।

***मार—**बौद्ध ग्रन्थों में 'मार' नामक एक शैतान देवता द्वारा बुद्ध एवं उनके शिष्यों के मार्ग में बाधाएँ पहुँचाने के अनेक प्रसंग मिलते हैं। जिस प्रकार अच्छे कार्य में सहायक होने के लिए देवी—देवताओं की कल्पना की गई है, उसी प्रकार शुभ के मार्ग में बाधक शक्ति मार के रूप में वर्णित है। मार पूर्वजन्म में किए गए शुभ कर्मों के परिणामस्वरूप प्राप्त छः काम देवलोकों में से शीर्षतम लोक परनिम्मितवसवतिदेवलोक का शासक है। वह अपनी तीन पुत्रियों तण्हा, रति एवं अरति तथा अपनी सेना के माध्यम से शुभ मार्ग पर अग्रसर साधकों को पथभ्रष्ट करता है। बौद्ध ग्रन्थों में पाँच प्रकार के मारों का वर्णन आया है। ये हैं—

- (१) खन्धमार—पुनर्जन्म के आधारस्वरूप पञ्चस्कन्ध
- (२) किलेसमार—पापमय विचार
- (३) मच्चुमार—मृत्यु
- (४) अभिसंखारमार—कर्म
- (५) देवपुत्तमार—पापमय देवता

मार के प्रकार, पुत्रियों के नाम एवं उसकी सेना के अंगों पर विचार करने से प्रतीत होता है कि वस्तुतः शुभत्व की बाधक समस्त बातों को एक व्यक्तित्व—मार के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है, चाहे वे मानसिक कलुष प्रवृत्तियाँ हो,

मृत्यु हो या अन्य घटनाएँ।

***मेत्तेय्य (मैत्रेय)**—स्थविरवादी परम्परा में भविष्य में उत्पन्न होने वाले 'मेत्तेय्य' नामक एक बुद्ध की मान्यता है। इनकी उत्पत्ति वर्तमान भद्रकल्प में कही गई है। मान्यता के अनुसार अभी वे तुसित देवलोक में निवास करते हुए देवों को धम्म का उपदेश दे रहे हैं। इसका वर्णन सर्वप्रथम दीघनिकाय के चक्कवत्तिसीहनादसुत्त में उपलब्ध होता है, जहाँ भगवान् बुद्ध के द्वारा ऐसा कहा गया है—'मनुष्य लोक में मेरे सदृश मैत्रेय नामक बुद्ध उत्पन्न होंगे, जो मनुष्य तथा देव लोक की प्रजा को उपदेश देंगे।' बाद की रचना 'अनागत वंस' में मेत्तेय्य बुद्ध का विस्तृत विवरण उपलब्ध है। महायान में भी मैत्रेय बुद्ध की अवधारणा उसी प्रतिष्ठा के साथ मान्य है।

***विपस्सना (विपश्यना)**—'भावना' के अन्तर्गत देखें।

***विमान**—बौद्ध ग्रन्थों में यह कुशल कर्मों के फलस्वरूप देवलोक में उत्पन्न होने वाले देवों के निवास स्थान के रूप में वर्णित है। ये सात मंजिलों से युक्त महल होते हैं तथा इच्छानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाए जा सकते हैं। देव इन्हें वाहन के रूप में प्रयोग कर पृथ्वी पर भी उतर सकते हैं। विमान का आकार एवं सौन्दर्य व्यक्ति द्वारा मृत्युलोक में किए गए कर्मों की गुणवत्ता तथा उसके द्वारा प्राप्त देवलोक पर निर्भर करता है।

***सतिपट्ठान (स्मृति-प्रस्थान)**—सतिपट्ठान की गणना आर्य अष्टांगिक मार्ग के अन्तर्गत सम्मासति (सम्यक् स्मृति) के रूप में तथा सैंतीस बोधिपक्खिय धम्मों (इनके संदर्भ में 'बोज्झंग' देखें) के प्रथम वर्ग के रूप में होती है। सतिपट्ठान का अर्थ है जागरूकता, सजगता अथवा इस बात का ज्ञान कि हमारे शरीर (काय), अनुभव (वेदना) और मन (चित्त) में क्या हो रहा है और हमारे धम्म क्या हैं? सतिपट्ठानों को बुद्ध ने निर्वाण का एकमात्र उत्तम मार्ग (एकायन) कहकर उनकी प्रशंसा की है।

सतिपट्ठान चार हैं, जो इस प्रकार हैं—

- (१) **काय सतिपट्ठान**—इसका अभ्यास करने के क्रम में साधक को शरीर के द्वारा किए जा रहे समस्त कार्यकलापों एवं उसमें हो रही गतिविधियों के प्रति प्रत्येक क्षण जागरूक रहना चाहिए। उसके श्वास-निःश्वास, उठने-बैठने-सोने में, अंगों को सिकोड़ने एवं फैलाने आदि कार्यों को करते

हुए उसके शरीर के भीतर क्या हो रहा है, इन बातों को सूक्ष्मता के साथ अनुभूत करते हुए चिन्तन करना चाहिए कि उसका शरीर उत्पन्न एवं निरुद्ध होने के स्वभाव वाला है। उसे शरीर के आन्तरिक एवं बाह्य पदार्थों पर तथा श्मशान में पड़े मृत शरीर की अवस्थाओं पर विचार करना चाहिए।

(२) **वेदना सतिपट्ठान**—साधक को ध्यानपूर्वक हो लक्ष्य करना चाहिए कि उसको हो रही वेदनाएँ सुखात्मक है या दुःखात्मक या दोनों में से कोई नहीं अथवा वे शुद्ध हैं या अशुद्ध। साधक को प्रत्येक क्षण स्मृतिवान् होना चाहिए कि उसके अनुभव उत्पत्ति—विनाशशील है।

(३) **चित्त सतिपट्ठान**—साधक को चित्त या मन में हो रही गतिविधियों के प्रति सावधान एवं जागरूक रहना चाहिए कि उसका मन राग, द्वेष एवं मोह से युक्त है या रहित, मन उत्थानोन्मुख है या पतनोन्मुख। ऐसा करते हुए भी साधक को स्मृतिवान् होना चाहिए कि उसका मन उत्पत्ति—विनाशशील है।

(४) **धम्म सतिपट्ठान**—इसके अभ्यास में साधक को जागरूक होना चाहिए कि वह ज्ञान प्राप्ति में बाधक तत्त्वों से मुक्त हो गया है या नहीं; पञ्चस्कन्धों की उत्पत्ति एवं विनाश का क्रम क्या है एवं उसे बोज्झंगों, चार आर्य सत्त्यों एवं इस प्रकार के अन्य श्रेष्ठ धम्मों की प्राप्ति हो गई या नहीं।

***सम्मप्यधान (सम्यक् प्रधान)**—‘अट्टङ्गिको मग्गो’ के अन्तर्गत देखें।

***सामणेर (श्रामणेर)**—सांसारिक जीवन त्याग कर जब व्यक्ति काषाय वस्त्र (चीवर) धारण कर लेता है, तब वह सामणेर कहलाता है। इस समय वह बौद्ध साहित्य का अध्ययन करता है। उसे अपने गुरु की सेवा करते हुए दस शीलों का व्रत लेना होता है। ये दस शील हैं—

१. पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—जीवहिंसा से विरत रहने का व्रत लेता हूँ।

२. अदिन्नादाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—चोरी करने से विरत रहने का व्रत लेता हूँ।
३. अब्रह्मचरिया वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—ब्रह्मचर्य भंग न होने देने का व्रत लेता हूँ।
४. मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—झूठ बोलने से मैं विरत रहने का व्रत लेता हूँ।
५. सुरामेरय मज्जपमादट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—नशे के सेवन से विरत रहूँगा।
६. विकाल भोजना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—दोपहर के बाद भोजन करने से विरत रहूँगा।
७. नच्चगीतवादितविसुकदस्सना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—नाच, गाना, बजाना एवं अश्लील हावभाव को देखने से विरत रहूँगा।
८. मालागन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—माला, गन्ध, उबटन एवं आभूषणों आदि के प्रयोग से विरत रहूँगा।
९. उच्चासयनमहासयन वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—ऊँचे ऐश्वर्यपूर्ण शय्या पर सोने से विरत रहूँगा।
१०. जातरूपरजतपटिग्गहणा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि—सोने—चांदी को ग्रहण करने से विरत रहूँगा।

सामणेर के रूप में बीस साल व्यतीत करने के बाद जब व्यक्ति धम्म को कुछ समझ लेता है, तब उसको उपसम्पदा दी जाती है। इस उपसम्पदा संस्कार के बाद ही वह भिक्षु कहलाने का अधिकारी होता है।

***सोतापत्ति (स्रोतापत्ति)**—निर्वाण मार्ग पर अग्रसर साधक जब क्रमशः दस संयोजनों का प्रहाण कर लेता है, तब वह अर्हत् एवं निर्वाण प्राप्त कहा जाता है। सोतापत्ति, सकदागामी एवं अनागामी अर्हत् होने के पूर्व के तीन सोपान हैं। दस संयोजनों में से प्रथम तीन संयोजनों—सक्कायदिट्ठि (आत्मा के नित्य होने में विश्वास), विचिकिच्छा (बुद्ध, धम्म एवं संघ में सन्देह) एवं सीलब्बतपरामास (व्रत, तीर्थाटन आदि बाह्य आचारों से शुद्धि पा लेने में विश्वास) का जब साधक समूल प्रहाण कर लेता है, तब उसका

मार्ग 'सोतापत्ति' एवं वह 'सोतापन्न' कहलाता है। सोतापत्ति का अर्थ है धम्मरूपी स्रोत में पड़ जाना। सोतापत्ति मार्ग पर आरूढ़ व्यक्ति यदि उसी जन्म में किसी कारणवश अर्हत् न हो सका तो अधिक से अधिक सात बार जन्म ले वह निर्वाण प्राप्त कर लेता है।

शब्दानुक्रमणी

अ

अकुसल धम्म 116
अगगफलनिब्बान 91
अजगरवत्थु 118
अजातसत्तु 10, 40
अट्ठसालिनी 58, 64
अट्ठंगिकमगं 96
अट्ठं 20

अधिकरणसमथ 6

अन्तेवासि 46
अनत्तं 102
अनाथपिण्डिको 98

अनापत्ति 6, 18

अनिच्चं 102
अनियत 6
अनुमोदनं 94
अनुराधपुर 58, 122
अनुरूद्ध 78
अनुला देवी 40

अन्तरापत्ति 18

अपदान 10, 14
अब्भुतधम्म 16
अभयगिरिमहाविहार 48
अभिञ्जा 34

अभिधानप्पदीपिका 78
अम्बलट्टिका 8
अरिट्ठ 38, 40, 42, 46
अरियसच्च 96
असोक, धम्मराजा 24
असोकाराम 24
अंगुत्तरनिकाय 10, 16

आ

आनन्द 8, 10
आमिसदान 96
आयतन 118, 122

इ

इट्ठिय 28, 30
इतिवुत्तक 10, 14, 16
इद्धिपाद 96
इन्द 30
इन्द्रिय 94
इसिपतन 68

उ

उत्तर 28
उत्तराराम 68
उत्तिय 28, 30, 48
उदान 10, 14, 16

अभिधम्मत्थसङ्ग्रह 78, 80
 अभिधम्मपिटक 10, 14, 116
 अभिधम्मावतारो 76

उपट्टानसाला 89

उपसम्पदा 46
 उपालि 4, 6
 उपोसथ 26

क

कच्चायन 80
 कथावत्यु 10, 14, 26

कपिलवत्यु 68

कम्मट्टान 56
 कस्मीर 28
 कस्सपसम्बुद्ध 118
 कहापण 20
 काकण्डपुत्त 20
 काकवण्णतिस्स 122
 कालासोक 20
 कुरुन्दवेळुविहार 62
 कुसलधम्म 116
 कुसिनारा 2
 कुसिनाराराम 68
 कूटागारसाला 20
 कंखावितरणि 78

ख

खन्धक 6

उदानगाथा 12
 उद्दलोलकविहार 112
 उपज्झाय 114

ग

गगगरा 108
 गहपति 96
 गाथा 16

गेय्य 16

गोठाभय 48
 गोतम 2

च

चक्कवाल 98
 चतुत्थसंगीति 40
 चतुरासीति 1, 82
 चतुवीसति 2
 चम्पक 108
 चरियापिटक 10, 14
 चित्तयमक 54
 चित्तुप्पादकण्ड 116
 चूल्लवग्ग 12
 घूलहत्थिपदोपमसुत्त 34
 चेतियं 48
 चेतियगिरि 33

छ

छपञ्जास 64

ज

खुज्जसोभित 22	जम्बुदीप 24,30,54
खुद्दकपाठ 10,14	जातक 10,14,16
खुद्दकनिकाय 14	जिनचरित 78
खुद्दसिक्खा 76	जिनालंकार 78
खुद्दालक 90	जीवकम्बवन 10
खेम 79	जेतवन 68,94
जोतिपाल 90	दीघनिकाय 10,14
झ	दीघसुमन 46
ज्ञान 34	दीपंकर 2
ञ	दुट्टगामिनी अभय 48,124
जाणोदय 58,60	दुतियपरमत्थपकासिनी 70
त	दुतियसारत्थमञ्जूसा 70
तथागत 88,90	दुतियसंगीति 20
ततियपरमत्थपकासिनी 70	देवरक्खितलेण 124
तेपिटकट्टकथा 54	धम्मक्खन्ध 2,16
थ	धम्मदान 96
थूपासम 40,42	धम्मघर 48
थेरगाथा 10,16	धम्मपदट्टकथा 80
थेरिका 18	धम्मपद 10,14
थेरीगाथा 10,16	धम्मपरियाय 90
थेरीगाथा अट्टकथा 80	धम्मपाल 80
द	धम्मराजा 24
दक्खिणाराम 68	धम्मविनय 12
दण्डकिरञ्जो उय्यान 118	धम्मसङ्गह 2
दसबल 4,20	धम्मसिरि 76
दस वत्थु 20	धम्मसंगणि 10,14
दान 94	धातुकथा 10,14

न

- नन्द, नन्दक 90,92
 नवंग 16
 नळेरुपुचिमन्दमूल 42
 नागदीप 118
 नागपट्टन 58
 नालन्दा 8
 निकाय 16
 निहेस 10,16
 निब्बिदा 46
 निस्सगियपाचित्तिय 6
 निस्सयट्ठकथा 78
 नेत्तिप्पकरण 80

प

- पच्चेकबुद्ध 102
 पच्छिमबुद्धवचन 12
 पञ्जापारमी 90
 पटिसम्भिदा 26
 पटिसम्भिदामग 10,14
 पट्टान 10,14
 पठमपरमत्थपकासिनी 72
 पठमबुद्धवचन 12
 पठममहासंगीति 18
 पठमसारत्थमञ्जूसा 70
 पदुमिनी 104,106
 पधानघर 62
 पपञ्चसूदनी 64
 पब्बजा 46
 परक्कमबाहु 70
 परमत्थप्पकासनी 74

परमत्थप्पदीपकं 78

- परमत्थमञ्जूसा 78
 परमत्थविनिच्छय 76
 परिकखार 102
 परित्त—अट्ठकथा 58,59
 परिवार 14
 परिवेण 40
 पसेनदि 94
 पस्सद्धि 46
 पाचित्तिय 6,14
 पाटिदेसनीय 6
 पामोज्जं 46
 पाराजिक 6,14

पीति 46

- पुग्गलपञ्जति 10,14
 पुब्बाराम 68,98
 पुलत्थीमहानगर 68
 पेतवत्थु 10,14,36

ब

- बहुस्सुत 48
 बिन्दुसार 118
 बुद्ध 2,42,96
 बुद्धधोस 58,60,62,66,76,80
 बुद्धदत्त 58,76
 बुद्धनाग 80
 बुद्धवचन 12
 बुद्धवंस 10,14
 बुद्धसीह 80
 बोज्झंग 96
 बोधिसत्त 2

ब्रह्मजाल 8
ब्रह्मदत्त 8
ब्रह्मलोक 34,90

भ

भगवा 2,42,94
भद्रसाल 28,30
भण्डुको 30
भिक्षुनिविभङ्ग 6

म

मज्झन्तिक 28
मज्झिम 28,30
मज्झिमनिकाय 10,16
मज्झिमबुद्धवचन 14
मण्डूकवत्यु 108
मनोरथपूरणी 64
मन्ताभय 42
मरिचवट्टिविहार 48
महाअट्टकथा 62
महाअरिट्ट 42,46
महाकस्सप 4,6,10,22,26
42,50,70,72
महाकुरुन्दअट्टकथा 62
महागाम 48
महागोविन्द 90
महातिस्स 48
महादेव 28
महाधम्मरक्खित 28
महानाम 54,58,62

य

यमक 10,14

महापच्चरिअट्टकथा 62
महाबोधि 78
महामेषवन उय्यान 36

महारक्खित 28

महारट्ट 28
महावग्ग 14
महावन 20
महाविभङ्ग 6

महाविहार 58

महावीर 2
महासतिपट्टानसुत्त 124
महासम्मत्त 68
महिन्द 28,30,32,44,50
महिसमण्डल 28
महीपति 24
महीपाल 24
महोसध 90
माणवक 8
मातुल 112
मार 114
मासक 20
मिस्सक पव्वत्त 30
मुखमत्तक 78
मुटसीव 30
मूलगिरि 118
मेत्तेय्य 62
मेघंकर 78
मोग्गलिपुत्त 26,28

विपस्सना 96

विभंग 10,16

यस 20,22,26,44,50
योनक 28

र

रक्खित 28
रट्टपाल 116
राजगह 4,8
रूप 20
रूपसिद्धि 78
रेवत 20,54,56,58
रोहिणि 116

ल

लंका 27,29,67,117,121
लोकनायक 1
लोहपासाद 47

व

वक्कलि 85
वग्गुलि 105,107
वज्जिपुत्तक 19
वट्टगामिनि 47,49,67
वनवासी 27
वालुकाराम 21
वासभगामी 22
विधुर 90
विनयधर 46,48
विनयपिटक 6,14,46,116
विनय विनिच्छय 80
साणसंभूत 22
सामञ्जफल 8
सामणेर 30,114

विमलबोधि 78
विमानवत्थु 10,14,36

विमुत्ति 46

विराग 46
विसुद्धिमग्ग 58,60,78
वुत्तोदय 80
वेदल्ल 16
वेय्याकरण 16
वेरञ्जा 42
वेसालि 6,20
वेळुवन 68

स

सक्क 30,58
संघनन्दि 76
सच्चसंखेप 76

सच्चसंयुत्त 36

सतिपट्ठान 96
सत्तसता 22
सत्तसतिका 20
सत्था 96,98
सद्धम्मसङ्गह 121
सब्बकामी 22
समन्तपासादिका 62,64
समाधि 46
सम्बल 28,30
सम्मोहविनोदनी 64
सागरमति 78
सुभद 2
सुमङ्गलविलासिनी 64
सुमन 30

सारत्थदीपनी 70,74
 सारत्थप्पकासिनी 64
 सारत्थमञ्जूसा 70,74
 सारत्थसालिनी 74
 सारिपुत्त 80,110
 सावत्थि 90,94,96
 साळ्ह 22
 सिक्खापद 6
 सिलुत्त 124

सीलक्खन्ध 46

सीहलदीप 104,112,116
 सुत्तनिपात 10,14
 सुत्तपिटक 10,12,14,116
 सुत्तप्पबुद्धो 48,108,126
 सुदिन 6
 सुप्पिय 8
 सुबोधाळंकार 78

सुमनत्तिस्स 116,118
 सुवण्णभूमि 28,30
 सुसुनाग 20
 सेखिय 6
 सोण, सोणक थेर 28,30
 सोतापत्ति 36
 संधमित्त थेरी 40
 संधरक्खित्त 80
 संधादिसेस 6

ह

हिमवन्त 28,30,102

ACC. 20526
 30827



